****

BANDHUBHAKT RAMAYAN (Marathi)

****

विषय-सूची



भारत-नेपाल मैत्री
युग-युग सम्म अमर रहोस्



श्री ५ महाराजाधिराज वीरेन्द्र विक्रम
शाहदेव, नेपाल को भारत की
ओर से सस्नेह उपहार।



श्री भानुभक्त !

संस्कृत भाषा में ही परिसीमित पुष्कल रामचरित्र को, विभिन्न भाषाई अञ्चलों के अन्य रामायण-रचयिताओं की भाँति, आपने भी जनभाषा में प्रस्तुत करके, सामान्य जनता के प्रति अनन्य उपकार किया है।

हे नेपाल के तुलसी !

आपके अनुपम काव्य का मूल नेपाली पाठ सहित यह हिन्दी अनुवाद 'भानुभक्त रामायण' आपही को सादर समर्पित है।

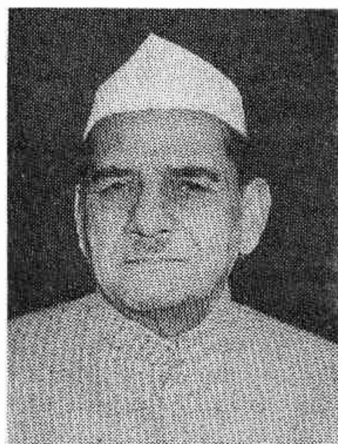
नन्दकुमार अवस्थी
मुख्यन्यासी सभापति
भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ

प्रस्तावना

वाणी, भाषा और लिपि

मन के भावों और उद्गारों को मुख से प्रकट करना, यही वाणी है। पशु, पक्षी अथवा मनुष्यों में जब कोई वर्ग, एक प्रकार की वाणी बोलता है, उस बोली से परस्पर भावों को कहता, सुनता और समझता है, तब वाणी के उस 'प्रकार' को उस विशिष्ट-वर्ग की भाषा की संज्ञा दी जाती है। और उसी भाषा को जब चिह्नों-आकृतियों में लिखकर प्रकट किया जाता है, तब उन्हीं चिह्नों और आकृतियों को उस भाषा-विशेष की लिपि कहा जाता है।

कुछ विद्वानों के मत से धरातल पर पृथक्-पृथक् भूखण्डों में विभिन्न समयों पर मानवों की सृष्टि और विकास होता रहा है। वे सब एक ही स्थान पर एक ही मानव से उत्पन्न नहीं हैं। फलत: उन सब की भाषाएँ भी एक दूसरे से बिलकुल पृथक् और स्वतंत्र हैं। इन पृथक् कुलों को ये विद्वान् आर्य, मंगोल, सेमेटिक, हेमेटिक, द्रविड आदि की संज्ञा देते हैं।



किन्तु भारतीय मत की घोषणा इसके विपरीत है, और इस्लामी तथा ख्रीष्ट मान्यता भी उसका अनुमोदन करती है। इस मत के अनुसार सारी मानव ज्ञाति एक ही मूल पुरुष मनु अथवा आदम की सन्तान होकर मानव अथवा आदमी कहलायी। कालान्तर में विभिन्न भूखण्डों में फैलने, एक दूसरे से अलग-थलग होने, और वहाँ की विशिष्ट जलवायु और संस्कारों से प्रभावित होने के फलस्वरूप वह मानव जाति अनेक रूप, रंग, आकार और बोलियों में विभक्त होती गयी। यह परिवर्तन लाखों वर्षों से चलते आ रहे हैं और इसलिए उन मानव-समूहों के रूप, रंग, आकार और बोलियों के अन्तर भी इतने जटिल हो गये हैं कि ज्ञान की उपेक्षा करनेवाले और केवल तर्क,

की रत्ती भर गुंजाइश नहीं। ये सभी प्राचीन संस्कृत की पौत्री और भारतीय जनपदों में शौरसेनी, मागधी, महाराष्ट्री आदि प्राकृत अथवा उनके अपभ्रंशों की पुत्रियाँ हैं।

उर्दू को तो हिन्दी से पृथक् मानना ही भूल है। उसका तो हिन्दी से वही सम्बन्ध है जो एक रूह का दो क़ालिब से—एक प्राण का दो शरीर से। अरबी लिपि में लिखी जाने अथवा अरबी-फ़ारसी भाषाओं के शब्दों के अधिक समाविष्ट हो जाने से उसे ग़ैर भाषा समझना भूल है। कदाचित् लोगों को कम पता है कि नगरों में नहीं, ग्रामों तक में नित्य बोली जानेवाली और हिन्दी कही जानेवाली भाषा में एक तिहाई से अधिक शब्द अरबी, फ़ारसी, तुर्की आदि के बार-बार बोले जाते हैं। उनमें ऐसे भी अरबी शब्दों की भरमार है जिनको लोग ठेठ हिन्दी की सम्पत्ति समझने लगे हैं, उनके अरबी-फ़ारसी होने की कल्पना भी नहीं करते। जैसे हलुआ, साइत (मुहूर्त्त), मेहरिया, हमेल, तरह, अन्दर, अगर, अचार, अजगर, अतलस, अबीर, अमीर, गरीब, अरक, मेवा, मल्लाह, मसखरा, मक्कर, लाला, लहास, स्याही, संदूक, रुमाल आदि।

अलबत्ता भारत की दक्षिणी भाषाओं—मलयाळम, तेलुगु, कन्नड और तमिळ—का शेष भारतीय भाषाओं और लिपियों से भेद अधिक दूर का है। किन्तु उनके अक्षरों का वर्गीकरण देवनागरी वर्णमाला के समान है। इसके अलावा संस्कृत के शब्द तत्सम और तद्भव रूप में इतने अधिक दक्षिणी भाषाओं में घुलमिल गये है कि उनका अन्य भारतीय भाषाओं से तादात्म्य प्रत्यक्ष है, भले ही कलेवर पृथक् दिखाई दे।

उद्देश्य

उपर्युक्त भाषाई पहलुओं के अलावा, सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक दृष्टि से भी सारा देश परस्पर ऐसा गुथ गया है कि उसमें एकात्म-भाव के सर्वत्र दर्शन होते हैं। उसके प्रभाव की छाप सभी भाषाओं के साहित्य पर मौजूद है। इसलिए अपने-अपने क्षेत्र में विभिन्न लिपियों के फलते-फूलते रहने के बावजूद, यह जरूरी है कि राष्ट्र में सबसे अधिक सुपरिचित और व्याप्त देवनागरी लिपि के माध्यम से प्रत्येक क्षेत्रीय भाषा और साहित्य को भारत के कोने-कोने तक पहुँचाया जाय। भारत भूमि के हर कोने में प्रस्फुटित वाङ्मय को हर भारतवासी तक पहुँचाया जाय। लिपि और भाषा के सेतुकरण द्वारा सारे राष्ट्र का एकीकरण—यही 'भुवन वाणी ट्रस्ट' का उद्देश्य है।

अनुमान, प्रयोग, अनुसंधान आदि भौतिक साधनों को ही ज्ञान मानकर उन पर निर्भर रहनेवाले पाश्चात्य विद्वानों तथा उनके अनुवर्ती भारतीयों का भ्रमित हो जाना स्वाभाविक ही है। यह बात इनसे ओझल हो जाती है कि कितना भी बड़ा वैषम्य इन जातियों के लक्षणों में दिखाई देता हो, उनकी आकृतियों और भाषाओं में कुछ ऐसे तथ्य लाखों वर्ष बाद भी झलकते हैं जो सारी मानव जाति को किसी पुरातन काल में एक मूल मानव का पितृत्व प्रदान करते हैं।

भारतीय वाङ्मय के सृष्टिक्रम-सम्बन्धी विशाल ज्ञानकोश को विस्तार-भय से किनारे भी रख दें, तो भी जन-साधारण की समझ में आनेवाली कुछ बातें तो हमारे मत की पुष्टि करती ही हैं। उदाहरण के लिए— (१) द्रविडकुल की भाषाएँ आर्यकुल की भाषाओं से पाश्चात्य मत में मूलतः पृथक् मानी गयी हैं। किन्तु संस्कृत की वर्णाक्षरी, उनका वर्गीकरण तथा लिपि का बायें से दाहिने लिखा जाना दोनों कुलों में समान ही है। इसके विपरीत, आर्यकुल की फ़ारसी जैसी अनेक भाषाओं का खरोष्टी लिपि में (दायें से बायें) लिखा जाना और वर्णों की संख्या, क्रम, वर्गीकरण आदि में बड़ा अन्तर है। (२) अरबी और संस्कृत की शब्दावली और लिपि में नाममात्र को भी मेल नहीं है, किन्तु उनकी व्याकरण में बड़ी समानता है, जबकि संस्कृत का अपने आर्यकुल ही की अन्य भाषाओं के व्याकरण से साम्य नगण्य सा है। (३) उत्तर-पश्चिम में सुदूरस्थ ईरान की अवेस्ता और गाथाओं की भाषा में असुर का अहुर उच्चारण है। बीच के पूरे आर्यावर्त्त में इसका अभाव होने के बाद उत्तर-पूर्व में असम प्रदेश में फिर दस को दह और गोसाईं को गोहाईं बोलते हैं। (४) नेपाल के आदिम निवासी तथाकथित आर्यकुल के रूप, आकृति से सर्वथा भिन्न हैं। किन्तु वहाँ कुछ ही समय से आबाद आर्यकुल के राज-परिवार तथा राना-परिवार की आकृतियों पर नेपाली प्रभाव प्रत्यक्ष है; आदि, आदि।

भारतीय भाषाएँ

अस्तु, जब मानव मात्र एक मनु (आदम) की सन्तान हैं और आज पृथ्वी पर उपलब्ध विविध भाषाओं और बोलियों का आदि-स्रोत एक है, तब भारत के निवासियों और भारतीय भाषाओं को मूलतः पृथक् मानना, उनका बुनियादी वर्गीकरण करना कहाँ तक समुचित है? जहाँ तक हिन्दी, गुरुमुखी, सिन्धी, राजस्थानी, ओड़िया, बंगला, असमिया, गुजराती, मराठी, कश्मीरी, मैथिली, नेपाली, सिंहली आदि भाषाओं, लिपियों अथवा बोलियों का सम्बन्ध है इन सब की वर्णमाला, शब्दावली, व्याकरण आदि में इतना अधिक साम्य है कि उनको एक परिवार से बाहर समझने

यह तो हुई भावात्मक एकता की बात। देवनागरी लिपि के माध्यम से अन्य भारतीय भाषाओं के पढ़ने-समझने की एक और ज़रूरत भी पैदा हो गयी है। बहुत बड़ी संख्या में एक क्षेत्र या राज्य के निवासी दूसरे क्षेत्र अथवा राज्य में स्थायी तौर पर बस गये और बसते जा रहे हैं। वह अपने परिवार और सक्षेत्रीयों के साथ परस्पर तमिऴ, बंगला, सिन्धी आदि अपनी मातृभाषाएँ बोलते हैं, और परम्परा के अभ्यास से सदैव बोलते भी रहेंगे, किन्तु उस क्षेत्र विशेष में शिक्षा-दीक्षा पाने के कारण बच्चे अपनी लिपि के ज्ञान से अपरिचित रह जाते हैं। फलतः नित्य की बोलचाल को छोड़कर अपनी मातृभाषा के सम्पन्न और बहुमूल्य वाङ्मय से वे अपरिचित होते जा रहे हैं, और इस प्रकार अपनी क्षेत्रीय संस्कृति से दिन-प्रतिदिन दूर होते जायँगे। अन्य क्षेत्रों में आवासित उन परिवारों, जिनकी संख्या आज के आज़ाद भारत में अपरिमित है, के लिए तो अनिवार्यतः आवश्यक है कि देवनागरी लिपि में अपनी मातृभाषा के अमूल्य साहित्य को पढ़कर अपनी क्षेत्रीय साहित्यिक निधि को अपने बीच संजोये रखें।

उपर्युक्त प्रयास से यह किसी प्रकार अभीष्ट नहीं कि भारत में प्रयुक्त अन्य लिपियों के शिक्षण अथवा प्रचार में ज़रा भी कमी हो। वह वैसे ही, वरन् अधिक फलती-फूलती रहें। किन्तु यह भी न भूलना चाहिए कि अन्य भाषाओं और लिपियों से सम्बन्धित जन, अथवा आपकी लिपि और भाषा के ही लोग जो परिस्थिति-वश दूसरे क्षेत्रों में स्थायी तौर पर बस गये हैं, उनको आपके प्रचुर साहित्य से वञ्चित होने की परिस्थिति पैदा न होने पाये। दो हज़ार वर्ष पूर्व तमिलनाडु के अमर सन्त तिरुवल्लुवर का 'पञ्चम वेद' समझा जानेवाला नीति-ग्रन्थ 'तिरुक्कुरळ्' अपनी लिपि के साथ-साथ, देवनागरी लिपि के कलेवर में राष्ट्र के कोने-कोने में लोकप्रिय होने के स्थिति में आ जाय, यह संकल्प भी कम पुनीत नहीं।

नेपाली लिपि और भाषा

हिमाञ्चल में सरोवर-स्वरूप नेपाल का भव्य राष्ट्र शोभायमान है। भगवान् पशुपतिनाथ और माता गुह्येश्वरी का पावन धाम है। उस पुनीत क्षेत्र में एक बार मुझे जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। वहाँ की आदिम लिपि और भाषा नेवारी है। किन्तु धार्मिक और सांस्कृतिक प्रभावों के फलस्वरूप संस्कृत भाषा और नागरी लिपि का बोलबाला हुआ; और कोने-अँतरे के अञ्चलों में 'नेवारी' के वर्तमान रहने के बावजूद, नागरी लिपि और संस्कृत भाषा से उद्भूत नेपाली भाषा का ही प्राचुर्य है।

ज्ञातव्य है कि नागरी लिपि को नेपाली लिपि की संज्ञा वहाँ दी जाती है। एक अति मनोरञ्जक प्रसङ्ग है। विगत फरवरी १९७४ ई०

उद्देश्य-पूर्ति का माध्यम देवनागरी लिपि

आसेतु हिमालय, सारे देश के साहित्य, संस्कृति, आचार-विचार और सन्तों की वाणी को, किसी एक क्षेत्र अथवा समुदाय तक सीमित न रहने देकर, सारे भारतीयों की सामूहिक सम्पत्ति बनाना ही राष्ट्रीय एकीकरण की उपलब्धि है। नरसी मेहता के भजन, टैगोर की गीताञ्जलि, तिरुवल्लुवर का तिरुक्कुरळ् और सन्त नानक की अमर वाणी क्रमशः गुजरात, बंगाल, तमिळनाडु और पञ्जाब को ही नहीं, अपितु सारे देश को प्राण प्रदान करे, यह उनके अनुवाद मात्र के द्वारा संभव नहीं। जिस भाषारूपी सुधाभाण्ड से यह अमृत प्रवाहित हुए हैं उस भाषा के बोध के बिना वह प्राण सुलभ नहीं। किन्तु यह भी सत्य है कि एक व्यक्ति के लिए इतनी लिपियों को सीखकर उन भाषाओं पर अधिकार प्राप्त करना संभव नहीं।

प्रत्यक्ष-प्रणाली (डाइरेक्ट मेथड)

अस्तु एक ही मार्ग है। देवनागरी लिपि, जो सारे देश में अपेक्षाकृत सर्वाधिक व्याप्त है, भारतीय प्राचीन वाङ्मय की भाषा—देवभाषा संस्कृत की अपनी लिपि है, उसके माध्यम से हम आरंभिक ज्ञान प्राप्त करें। देवनागरी लिपि में क्षेत्रीय भाषाओं की वर्णमाला, उनके विशेष अक्षर, उच्चारण, मात्राएँ, सामान्य व्याकरण, वाक्यरचना, देशज शब्द एवं संस्कृत से प्राप्त तत्सम और तद्भव शब्दों के उदाहरण आदि का कामचलाऊ ज्ञान प्राप्त करने के उपरांत सम्बन्धित क्षेत्रीय भाषा के किसी मान्य लोकप्रिय ग्रंथ को चुनकर उसके अध्ययन द्वारा अपने अर्जित उपर्युक्त ज्ञान का अभ्यास किया जाय। धीरे-धीरे, अभ्यास के द्वारा उस भाषा में अभीष्ट ज्ञान सुलभ होगा। ग्रन्थ के चयन में यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि उसका कथानक देश के दूसरे क्षेत्रों में पूर्वपरिचित हो। रामायण, महाभारत, इस्लामी हदीस, पारसी गाथा, सिख गुरुओं की वाणी आदि ऐसे विषय हैं जिनमें वर्णित कथानक और उपदेश सारे देश की जनता को भली-भाँति मालूम हैं। अक्षर-बोध, सामान्य शब्द-परिचय और व्याकरण-बोध के साथ-साथ, कथा का विषय जाना-समझा होने पर शिक्षार्थी को—लिपि, भाषा और साहित्य के माध्यम से अपने को— सारे राष्ट्र का व्यावहारिक दृष्टि से सच्चा नागरिक बनने के अभिलाषी को— उस भाषा अथवा ग्रन्थ को समझने में सरलता होगी। इस मार्ग से एक क्षेत्र का निवासी, सब अथवा अधिक से अधिक क्षेत्रों की भाषाओं और वहाँ के लोक-साहित्य को आत्मसात् कर सकता है। अलबत्ता यदि किसी भाषा-विशेष में अधिक पारंगत होने की अभिलाषा है, तो उस भाषा के विशेष अध्ययन का मार्ग अपनाना ज़रूरी होगा।

में पवनार आश्रम (वर्धा) में होनेवाले 'नागरी लिपि' समारोह में भारत में नेपाली दूतावास के सांस्कृतिक सहचारी प्रो० श्री मानन्धर धूस्वां सायमि ने भाग लिया था। उन्होंने अपने भाषण में चर्चा की कि प्रथम बार दिल्ली आने पर, उनकी धर्मपत्नी ने हिन्दी साइनबोर्डों पर दृष्टि डालकर बड़े कुतूहल से कहा, "अरे! यहाँ तो ये सारे बोर्ड 'नेपाली' में लिखे हुए हैं!"। सारांश यह कि नेपाल की सम्प्रति लिपि नेपाली है, उसका रूप वही है जो नागरी लिपि का।

भानुभक्त रामायण

जन साधारण की यह धारणा है कि नेपाल में शिव और शक्ति की उपासना का ही प्राधान्य है। भगवान् राम की चर्चा, यदि है भी तो नगण्य सी। संयोग से उत्तरप्रदेश ग्रन्थ अकादमी के तत्कालीन अध्यक्ष प्रख्यात विद्वान् डॉ० रामकुमार वर्मा जी से एक बार भेंट हुई। मेरे और भुवन वाणी ट्रस्ट के भाषाई सेतुबन्ध के विपुल कार्य को देखकर वे अति मुग्ध हुए। उन भाषाई कार्यों में, देश के समस्त भाषाई रामायण-साहित्य को नागरी लिपि के माध्यम से, एक मञ्च पर आते देखकर, उन्होंने 'भानुभक्त रामायण' की मुझसे चर्चा की। उनके सुझाव पर ही नेपाली का यह ग्रन्थरत्न 'भानुभक्त रामायण', आज पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है।

नेपाल में भगवान् शिव के अतिरिक्त राम की भी इतनी विशद चर्चा और भक्ति है, इसकी पुष्टि इसी वर्ष के आरंभ में दिल्ली में पुनः हुई। नेपाली दूतावास के सांस्कृतिक सहचारी प्रो० धूस्वां सायमि ने चर्चा की कि न केवल नेपाली में भानुभक्त रामायण, वरन् नेवारी भाषा में भी एक रामायण लिखी गयी है, और उसकी प्रति काठमाण्डू जाने पर भेजने का उन्होंने आश्वासन भी दिया है।

भक्तशिरोमणि भानुभक्त

नेपाल राज्य के एक छोटे से पर्वतीय प्रदेश के पश्चिम में सप्तगण्डकी सलिला द्वारा सिञ्चित 'तनहूँ' उपत्यका के 'रम्घा' नामक ग्राम में विक्रम संवत १८७१ आषाढ़ २९ गते के पुण्यदिवस पर 'भानु' का उदय हुआ। परमविद्वान् ब्राह्मण-कुल के प्रख्यात आचार्य श्रीकृष्ण के छः पुत्रों में ज्येष्ठ धनञ्जय जी के एकमात्र पुत्र श्रीभानुभक्त जी हुए। इनका अधिकांश समय पितामह के साथ व्यतीत होने के फलस्वरूप वे संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित हुए। किशोरावस्था के आरंभ होते-होते व्याकरण, ज्योतिष एवं पुराणादि पर अधिकार प्राप्त कर लिया था।

किंवदन्ती है कि २२ वर्ष की आयु में, एक दिन एक वृक्ष की छाया में

उनका एक श्रमिक घसियारे से साक्षात् हुआ। वह अपनी दीन-हीन अवस्था में भी अपने ग्राम में सार्वजनिक उपयोग के लिए एक कुआँ बनवाने हेतु, कठिन कमाई में से धन सञ्चित कर रहा था। इसने भानुभक्त के मन में सार्वजनिक सेवा की प्रवृत्ति को जन्म दिया। उस समय वालमीकि, अध्यात्म आदि संस्कृत रामायणों का ही सर्वत्र आदर था। क्षेत्रीय भाषाओं में धार्मिक चरित्रों का गान पवित्र नहीं समझा जाता था। यह बात कुछ नेपाल में नई नहीं थी। हिन्दी में तुलसी, बंगला में कृत्तिवास, तेलुगु में कुम्हारिन मोल्ल आदि सभी के सामने संस्कृताभिमानी पण्डितों की ओर से यह अवरोध उपस्थित हुआ।

किन्तु इन्हीं सब के अनुसार, श्री भानुभक्त ने भी जनभाषा में रामायण की रचना करके समाज-कल्याण का व्रत लिया। इस सद्भावना का स्रोत वही श्रमिक घसियारा था। अस्तु, भानुभक्त-रामायण की रचना हुई। लिपि नागरी, भानुभक्त रामायण की भाषा नेपाली, किन्तु छन्द-रचना में संस्कृत छन्दों का अनुकरण है। शिखरिणी, शार्दूलविक्रीडित, वसन्ततिलका आदि संस्कृत छन्दों की शैली पर ही काव्य की रचना है। पाठकों को पढ़ते समय ध्यान रखना चाहिए कि हलन्त और सस्वर को लेखानुसार पाठ करें। 'राम' और 'राम्' का भेद ध्यान में रखना आवश्यक है। हिन्दी के अनुसार 'राम' लिखकर 'राम्' जैसा उच्चारण करने पर छन्दोभङ्ग हो जायगा। 'भानुभक्त रामायण' का आधार अध्यात्म रामायण है।

नेपाल के तुलसी, भानुभक्त महाराज की पुण्यलीला वि० सं० १९२५ आश्विन शुक्ल पञ्चमी के दिन ५४ वर्ष की अवस्था में समाप्त हुई। प्रति वर्ष १३ जुलाई को उनकी जयन्ती मनाई जाती है।

काशी में कुछ नेपाली प्रकाशकों ने भी भानुभक्त रामायण के संस्करण प्रकाशित किये हैं। किन्तु उनमें उन्होंने व्यवसायिक लक्ष्य से जनरुचि को अधिक आकर्षित करने के लिए अनेक अन्तर्कथाएँ प्रक्षिप्त कर दी हैं; अपनी ओर से भानुभक्त की शैली पर रच कर जोड़ दी हैं। दूसरे उनमें हिन्दी अनुवाद का अभाव होने से वे नेपाली पाठक के ही प्रयोजन की रह जाती हैं। अस्तु, प्रस्तुत ग्रन्थ 'सानुवाद भानुभक्त रामायण' को पाकर हिन्दी-जगत् धन्य है। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' के भाषाई सेतुबन्धन में एक और शिलारोपण हुआ।

अनुवाद

नेपाली रामायण के अनुवादक को सुलभ करने में कुछ कठिनाई हुई। हम श्री नन्दकुमार आमात्य और उनकी धर्मपत्नी सुश्री रुपेश्वरी

आमात्य के अनुग्रहीत हैं कि उन्होंने इस कार्यभार को सुचारु ढंग से सम्हाला। यह हिन्दी अनुवाद उन्हीं की देन है।

विमोचन

श्री उमाशंकर जी दीक्षित, महामहिम राज्यपाल, कर्नाटक प्रदेश की, इन पंक्तियों के लेखक पर एक बड़े समय से कृपा रही है। ट्रस्ट के कार्यक्रम को भी उनसे सराहना प्राप्त है। एक साथ हमारे तीन प्रकाशनों— १. (मराठी) श्रीराम-विजय, २. (तमिळ) तिरुवल्लुवर कृत तिरुक्कुऱळ् और ३. (नेपाली) श्रीभानुभक्त रामायण— का विमोचन अपने पुष्कल कर-कमलों से उन्होंने स्वीकृत किया। वे हमारे अनन्य सहायक हैं, अनन्य अनुग्रहकर्ता हैं।

आभार-प्रदर्शन

ट्रस्ट को, कई उदार सदाशयों, विद्वानों, एवं उत्तरप्रदेश शासन से प्राप्त सहायता से बड़ा सहारा मिलता रहा है। अन्य ग्रन्थों के साथ, नेपाली 'भानुभक्त रामायण' भी अपनी सहज गति से प्रकाशित हो रहा था। सौभाग्य से केन्द्रीय उपशिक्षामंत्री माननीय श्री डी० पी० यादव, भारत सरकार के राष्ट्रभाषा सलाहकार बहुभाषामर्मज्ञ श्री रमाप्रसन्न नायक और शिक्षा एवं समाजकल्याण मंत्रालय के शिक्षानिदेशक एवं उपसचिव श्री सनत्कुमार चतुर्वेदी जी की अनुकम्पा हुई। उसके परिणाम-स्वरूप ग्रन्थ परिपूर्णता को प्राप्त हुआ। हम उनके अतिशय अनुग्रहीत हैं। हम विश्वास के साथ निवेदन करते हैं कि भुवन वाणी ट्रस्ट की भाषाई सेतुकरण की विशाल और अद्वितीय योजना उत्तरोत्तर फलवती होकर शासन और जनता को संतुष्ट करती रहेगी।

श्री रघुमल ट्रस्ट, कलकत्ता के भी हम अत्यन्त आभारी हैं। उन्होंने पाँच हजार रुपये की राशि से ट्रस्ट की सहायता की। उसका उपयोग इस ग्रन्थ में किया गया। प्रशंसित ट्रस्ट एवं न्यासीगण के प्रति हम अतिशय कृतज्ञ हैं।

नन्द कुमार अवस्थी

मुख्यन्यासी सभापति,
भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३

भानुभक्त-रामायण

(नेपाली काव्य)

[अनुवादक—नन्दकुमार आमात्य]

आमुख

संतकवि भानुभक्त का जन्म विक्रम संवत १८७१ आषाढ़ २९ गते कृष्णाष्टमी तदनुसार १३ जुलाई १८१४ को पश्चिम नेपाल के तनहुँ उपत्यका के रम्घा नामक ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम धनञ्जय आचार्य था। उनके पितामह श्रीकृष्ण आचार्य संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे, फलस्वरूप भानुभक्त को प्रारम्भिक शिक्षा संस्कृत में उन्हीं से प्राप्त हुई।

उस समय अधिकांश कवि अपनी रचनादि संस्कृत में ही करते थे और पर्वतीय अथवा क्षेत्रीय भाषा में रचना करनेवाले कवियों का मान नहीं था। परन्तु भानुभक्त को इसकी परवाह नहीं थी। मन में दृढ़ संकल्प था। इसलिए उन्होंने जनसाधारण के समझ में आनेवाली भाषा में शार्दूलविक्रीडित और बसन्ततिलका जैसे संस्कृत छन्दों के ढंग पर सुन्दर और सुमधुर ग्रामीण शैली में, अध्यात्म रामायण के सातों काण्ड का अनुवाद कर नेपाली जगत् के हृदय को जीता।

स्व० मोतीराम भट्ट ने अथक परिश्रम से इस सम्बन्ध में खोज की है। उन्होंने कवि की जीवन-कथा में लिखा है कि भानुभक्त को कविता रचने की प्रेरणा एक गरीब घसियारा से मिली थी। इस प्रसंग पर विद्वानों के अलग-अलग मत है। भानुभक्त ने लगभग २०-२२ वर्ष के अकथ परिश्रम से अन्य रचनाओं के साथ रामायण के सातों काण्डों का मञ्जुल काव्य पूर्ण किया। सरल भाषा और सरल शैली में भानुभक्त-कृत रामायण की उपलब्धि से नेपाली जगत् कृतार्थ हुआ है। संवत १९२५ आश्विन शुक्लपक्ष पंचमी के दिन ५४ वर्ष की अवस्था में अमर कवि भानुभक्त का देहावसान हुआ। प्रतिवर्ष, १३ जुलाई उनका जयन्ती-दिवस है।

सौभाग्य से भुवनवाणी ट्रस्ट, लखनऊ के प्रतिष्ठाता श्रीनन्दकुमार अवस्थी से भेंट होने पर 'वाणी सरोवर' त्रैमासिक के माध्यम से राष्ट्र की समस्त भाषाओं के सद्ग्रन्थों और विशेष कर रामायणों के हिन्दी अनुवाद सहित देवनागरी लिप्यन्तरण के उनके महान् आयोजन को देखा। नेपाली की भानुभक्त-रामायण को भी नेपाली क्षेत्र से बढ़ाकर समग्र देश के सम्मुख प्रस्तुत कर देने का पुनीत संकल्प और प्रस्ताव उन्होंने मेरे सामने रखा। सुतरां भगवान् का ध्यान कर उनके प्रस्ताव को स्वीकार कर, नेपाली रामायण का मूल-सहित हिन्दी-अनुवाद प्रस्तुत कर रहा हूँ।

आशा है पाठकवृन्द मेरी कमियों की ओर ध्यान न देकर पावन ग्रंथ का प्रसाद ग्रहण करेंगे। जहाँ तक नेपाली लिपि और भाषा की बात है, वह हिन्दी-भाषी के लिए अपने ही परिवार जैसी है। उच्चारण के सम्बन्ध में एक बात उल्लेखनीय है कि किसी शब्द के अन्तिम अक्षर में हलन्त-चिह्न न लगा होने पर उसे सस्वर ही पढ़ें। हिन्दी के समान हलन्त न पढ़ें। 'राम' लिखा होने पर 'राम्' नहीं, वरन् रा+म (Rama) उच्चारण करें।

—नन्दकुमार आमात्य

श्रीराम-पञ्चायतन



भानुभक्त-रामायण

बालकाण्ड

ब्रह्मा-नारद-संवाद

एक् दिन् नारद सत्यलोक् पुगिगया लोक्को गरूँ हित् भनी ।
ब्रह्मा ताहिं थिया पऱ्या चरणमा खुशी गराया पनि ॥
क्या सोध्छौ तिमि सोध भन्छु म भनी मर्जी भयेथ्यो जसै ।
ब्रह्माको करुणा बुझेर ऋषिले बिन्ती गऱ्या यो तसै ॥१॥
हे ब्रह्मा ! जति हुन् शुभाशुभ सबै सूनी रह्याँछू कछु ।
बाँकी छैन तथापि सुन्न अहिले इच्छा म यो गर्दछु ॥
आउला जब यो कली वखतमा प्राणी दुराचार् भई ।
गर्न्याछन् सब पाप् अनेक् तरहका नीच्का मतीमा गई ॥२॥
साँचो बात गरैन कोहि अरुकै गर्नन् ति निन्दा पनि ।
अर्काको धन खानलाइ अभिलाष् गर्नन् असल् हो भनी ॥
कोही जन् त परस्त्रिमा रत हुनन् कोही त हिंसामहाँ ।
देहैलाइ त आत्म जानि रहनन् नास्तिक्पशू झैं तहाँ ॥३॥

ब्रह्मा-नारद-संवाद

एक दिन नारदजी लोकहित के लिए स्वर्गलोक पहुँचे । ब्रह्माजी वहाँ विराजमान थे, तत्काल उनके चरणों में झुककर नारद ने उन्हें प्रसन्न किया । ब्रह्माजी द्वारा जैसे ही आज्ञा हुई, तुम क्या पूछना चाहते हो, पूछो, तैसे ही ब्रह्माजी की अनुकम्पा समझकर ऋषि ने इस प्रकार विनती की । १ हे ब्रह्मा! [संसार में]जो कुछ भी शुभाशुभ हो रहा है वह मैं सुन रहा हूँ, मुझे सुनने को कुछ भी बाकी नहीं है । फिर भी मैं इस सम्बन्ध में जानने का इच्छुक हूँ कि जब कलियुग का समय आयेगा तो प्राणी दुराचारी और बुद्धिभ्रष्ट होकर अनेक प्रकार के पाप करेंगे । २ सच्ची बातों का कुछ भी पालन नहीं करेंगे वरन् औरों की निन्दा करेंगे । दूसरों के धन को हड़पना ही ठीक समझकर उसकी कामना करेंगे । कुछ लोग तो परस्त्री पर आकर्षित होंगे । नास्तिक लोग पशु के समान शरीर को ही आत्मा समझते रहेंगे । ३ भोग-विलास के सेवक बनकर स्त्री को देवता

कामका चाकर झैं भयेर रहनन् स्त्रीलाइ द्यौता सरी ।
मान्नन् पितृ र मातृलाइ बुझि खुप् शत्रू सरीको गरी ॥
ब्राह्मण् भैकन वेद बेचि रहनन् कोही पढुन् तापनि ।
धन् ठूलो छ पनी भन्या सहज धन् आर्जन् गरौंला भनी ॥४॥

जाती धर्म रहैन क्षत्रिहरुमा जो छन् इ नीचाहरू ।
शूद्रादी त तपस्वि होइ रहनन् ब्राह्मण् सरीका बरु ॥
स्त्री धेर् भ्रष्ट हुनन् पतीर ससुरा- को द्रोह ठूलो गरी ।
यस्ता नष्ट कसोरि मुक्त त हुनन् संसार सागर् तरी ॥५॥

यो चिन्ता मनमा भयो र अहिले सोधूँ उपायै भनी ।
आयाको छु दयानिधान ! कसरी तर्नन सहज ई पनि ॥
यस्तालाइ उपाय तर्न सजिलो कुन् हो उ आज्ञा गरी ।
मेरो चित्त बुझाइबक्सनुहवस् क्याले इ जान्छन् तरी ॥६॥

नारद्ले दुनियाँउपर् गरि दया बिन्ती गऱ्या यो जसैं ।
ब्रह्माजी पनि खुप् प्रसन्न हुनुभै मर्जी भयो यो तसैं ॥
हे नारद् ! सब पाप हर्नकन ता रामायणैंल्ने सरी ।
आर्को मुख्य उपाय छैन सबको हित् यैं छ अमृत् सरी ॥७॥

के समान मानेंगे । माता-पिता की उपेक्षा कर उन्हें शत्रु के समान मानेंगे । ब्राह्मण होकर भी वेदों को बेचकर [अर्थात् लोभवश वेदों के अर्थ का अनर्थ कर] धनोपार्जन को ही सब कुछ समझेंगे । ४ क्षत्रियों में व्याप्त जाति-धर्म भी नहीं रहेगा वरन् शूद्र लोग ब्राह्मणों की तरह तपस्वी बनेंगे । पति और ससुर से द्रोह कर अनेक स्त्रियाँ भ्रष्ट होंगी । इस प्रकार नष्ट हुए लोग किस तरह संसार-सागर को पार करके मुक्त हो सकेंगे ? ५ यही चिन्ता मेरे मन में उत्पन्न हुई है, अतः मैं आपसे इसका उपाय पूछने आया हूँ । हे दयानिधान ! ये प्राणी सहज ही कैसे पार होंगे ? ऐसों के लिए वह कौन सा उपाय है, आज्ञा करके मेरे चित्त को समझाइए कि ये कैसे पार होंगे । ६ नारद ने जैसे ही संसार की इन समस्याओं के विषय में बिनती की, ब्रह्माजी ने अत्यन्त प्रसन्न होकर इस प्रकार आज्ञा दी । हे नारद ! सब के पापों को मिटाने के लिए रामायण के सिवा और कोई मुख्य उपाय नहीं है । अमृत के समान सबके हित इसी में निहित हैं । ७ महादेवजी से [उपर्युक्त] इन सब तत्व की बातों को सुन कर पार्वती जी राम-नाम की अपार महिमा जानकर गान करती हैं और आनन्दित

[illegible] देखि सुनेर तत्त्व सब यो गान् पार्वती गर्दछिन् ।
[illegible]को नाम अपार जानि बहुतै आनन्दमा पर्दछिन् ॥
[illegible] गान्कन गर्दछन् त ति सहज् संसार पार् तर्दछन् ।
[illegible]को पनि ताप् हुँदैन भय सब् तिन्का सहज् टर्दछन् ॥८॥

[illegible] सब् शास्त्रविषे बड़ो छ रघुनाथ्- को रूप् जनाईदिन्या ।
[illegible] छन सब इ पुराण् हरू इ सबमा यै मुख्य जानीलिन्या ॥
[illegible] कीर्तन सुन्दछन् पनि भन्या यो पाउँछन् फल् भनी ।
[illegible]को पुण्य बखान गर्न त सबै सक्तीनँ मैले पनि ॥९॥

[illegible]थ्याँ शिव देखि यस्कि महिमा एक् श्लोक् पढुन् तापनि ।
[illegible]ले यदि यो पढ्यो पनि भन्या पाप् छुट्तछन् सब् भनी ॥
[illegible] एक् चित्त गरेर पाठ खुशि भै गर्छन् सदा यै भन्या ।
[illegible]वन्मुक्त तिनै त हुन् नर भई ईश्वर् सरीका बन्या ॥१०॥

[illegible] पुस्तकको गन्या पनि त फल् एक् अश्वमेध्का सरी ।
[illegible]छन् सुनि यो कहीं पनि भन्या पाप् छुट्तछन् तेस् घरी ॥
[illegible] ती पुस्तकका नजीक् गइ नमस्- कारै फगत् गर्दछन् ।
[illegible]ता जन् सब देवता पुजि हुन्या फल् भोगमा पर्दछन् ॥११॥

[illegible] वेद पढेर शास्त्रहरुको व्याख्यान गर्दा पनि ।
[illegible]दैन उ फल् त पाउँछ सहज् पुस्तक् दिनाले पनि ॥

[illegible] है। जो उनका गुण-गान ध्यान से करता है वह सहज ही संसार-[illegible] से पार उतर जाता है। उसे काल का भी भय नहीं होता। ८ [illegible] का परिचय कराने वाले ये सब शास्त्रादि महान् हैं। पुराण में [illegible] है उसी को मुख्य मानकर जो कीर्तन करते हैं और सुनते हैं या [illegible] है कि उन्हें अवश्य फल प्राप्त होगा, उनके पुण्यों का पूरा वर्णन [illegible] में मैं समर्थ नहीं हूँ। ९ इसकी महिमा मैंने शिवजी से सुनी [illegible] कि प्रसन्नतापूर्वक सदैव एकाग्र मन से (रामचरित का) पाठ करते [illegible]। भक्ति भाव से [रामचरित का] एक ही श्लोक पढ़ने पर सब पापों [illegible] छुटकारा मिलता है और जीवन से मुक्त होकर पुरुष ईश्वर के समान [illegible] जाता है। १० (रामचरित की) पुस्तक-पूजा से भी एक अश्वमेध [illegible] के समान फल मिलता है, उसी क्षण पाप मिट जाता है। जो उस [illegible] के निकट जा कर केवल नमस्कार ही करते हैं वे जन भी सब [illegible] के पूजन से मिलने वाले फल को भोग करते हैं। ११ चारों

भक्तीले कहिं भक्तका घर गई एकादशीमा कह्या ।
चौबीस् पल्ट पुरश्चरण् गरि हुन्या गायत्रिका फल् भया ।।१२।।
जस्ले राम्नवमी उपासि खुशिले जाग्रन् समेतै गरी ।
यो रामायण पाठ् गरोस् कि त सुनोस् तन् मन् यसैमा धरी ।।
उस्ले तीर्थपिछे तुलापुरुष दान् सूर्य्य-ग्रहण्मा गर्‍यो ।
यस्मा संशय छैन जान्नु सबले आनन्दमा त्यो पर्‍यो ।।१३।।
रामायण् कन गाउन्या पुरुषको आज्ञा त इन्द्रै पनि ।
मान्छन् श्रीरघुनाथका प्रिय इ हुन् मान्नया इनै हुन् भनी ।।
रोज्-रोज् यस् कन पाठ् गरेर जनले सत् कर्म गर्छन् जति ।
कोटीगुण् फल बढ्ति मिल्छ सबको घट्तैन तिन्का रति ।।१४।।
यस्मा राम् हृदयै छ पाप् हरि लिन्या क्वै ब्रह्मघाती पनि ।
शुद्धात्मा बनिजान्छ तीन् दिन पढ्या गर्छन् कृपा राम् धनी ।।
रोज् रोज् तीन पटक् अगाड़ि हनुमान् राखेर पाठ् गर्छ जो ।
जस्तो भोग्कन गर्न खोज्दछ उ भोग् सम्पूर्ण पाऊँछ सो ।।१५।।
जो यो पाठ् तुलसी पिपल् वरिपरी गर्छन् प्रदक्षिण् गरी ।
तिन्का पाप् सब जन्मका जति त छन् छुट्छन् ति तेसै घरि ।।

वेदों को पढ़कर व्याख्या करने पर भी वह फल प्राप्त नहीं होता जो केवल पुस्तक का दान करने से प्राप्त होता है। एकादशी में भक्तों के घर जाकर भक्तिपूर्वक (कथा) कहने से तथा चौबीस बार गायत्री का पुरश्चरण जाप करने से प्राप्त होने वाले फल के समान पुण्य प्राप्त होगा। १२ रामनवमी में उपवास करके तथा प्रसन्नतापूर्वक जागरण करके जो व्यक्ति इस रामायण का पाठ करे अथवा ध्यान देकर इसे सुने, उसको (सूर्यग्रहण में) तीर्थ के पश्चात् तुलादान करने के तुल्य पुण्य तथा परम आनन्द प्राप्त होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं। १३ रामायण गाने वाले पुरुष को श्रीरघुनाथ का प्रिय जानकर इन्द्र भी उसकी आज्ञा का पालन करते हैं। मनुष्य प्रतिदिन इसका पाठ कर, जितने भी सत्कर्म करते हैं उन सबके फल की करोड़ों गुणा वृद्धि को प्राप्त होते है, उसमें किञ्चित् मात्र भी कमी नहीं होती। १४ इसमें ब्रह्मघातक के पापों को भी नष्ट करने वाला राम-हृदय है। राम की कृपा से तीन दिन पाठ करने पर आत्म-शुद्धि होती है। प्रतिदिन हनुमान का आवाहन करके जो पाठ करते हैं वे जिस प्रकार के भोगों को प्राप्त करना चाहते हैं वे सभी भोग उन्हें पूर्णतया प्राप्त होते हैं। १५ जो तुलसी तथा पीपल

तेस्मा रामगिता छ झन् अति ठुलो जस्को महात्म्यै पनि ।
सब् जान्नया शिवमात्र छन् अरु त को जान्नया छ यस्तो भनी॥१६॥

आधा पार्वति जान्दछिन् म त सबै चौथाइ पो जान्दछु ।
गीता पाठ गरेर नाश नहुन्या पाप् छैन यो मान्दछु ॥
राम्ले वेद मथन् गरीकन झिक्या गीता र अमृत् सरी ।
लक्ष्मण् लाइ दिया यही पढ़िलिया जाइन्छ संसार् तरी ॥१७॥

मार्छू निश्चय कार्तवीर्य भनि खुप् ठूलो इरादा गरी ।
पढ़थ्या श्रीशिवथ्यैं गयी परशुराम् दिन्-दिन् चरण् मा परी॥
पढ़थिन् पार्वति राम्गिता तहिं सुनी पाठ् गर्न लागी गया ।
राम्गीता तहिं देखि पाठ् गरि लिया नारायणै ती भया ॥१८॥

मैह्ना दिन् यहि राम्गिता पढ़िलिया सब् ब्रह्महत्याहरू ।
छुट्छन् निश्चय छुट्तछन् सकल पाप् भन्या बखान् क्या गरूँ ॥
शालिग्राम् तुलसी पिपल् कि त बड़ा संन्यासिथ्यैं जो गई ।
राम्गीताकन पाठ् गर्‍यो पनि भन्या ठूलो महात्मा भई ॥१९॥

के चारों ओर घूमकर इसका पाठ करते हैं उनके सब जन्मों के किये हुए पाप उसी क्षण नष्ट हो जाते हैं। इसमें अत्यन्त महान् और माहात्म्यपूर्ण रामगीता है। [ब्रह्मा ने कहा] इसको पूर्णरूप से जानने वाले केवल शिव ही हैं। १६ [इसकी महिमा का] अर्द्धांश पार्वती जानती हैं, मैं तो केवल चौथाई ही जानता हूँ। मैं यह मानता हूँ कि संसार में कोई ऐसा पाप नहीं जो रामगीता का पाठ करने से नष्ट न हो। राम ने वेदों का मंथन कर गीता और अमृत को निकाला और लक्ष्मण को दिया, इसे पढ़ने से सभी प्राणी संसार सागर से तर जायेंगे। १७ कार्तवीर्य (तथा उसके वीरों) को मारने का निश्चय कर बहुत बड़ी इच्छा ले करके परशुराम प्रतिदिन श्रीशिव के चरणों की वन्दना करने गये। वहीं पार्वती रामगीता पढ़ती थीं, इसी को सुनकर वे भी रामगीता का पाठ करने लगे और [फलतः] नारायण-रूप हो गये। १८ जब एक महीना यह राम गीता पढ़ने से ब्रह्महत्यादि सभी पाप समाप्त हो जाते हैं तो और सभी पापों के मिटने के बारे में क्या वर्णन करूँ। शालग्राम, तुलसी, पीपल या महान् संन्यासियों के पास जाकर रामगीता का पाठ करने से भी बहुत से लोग महात्मा बन गये हैं। १९ जिस फल के बारे में मुँह से वर्णन नहीं किया जा सकता है उसी फल का वह [रामगीता को पढ़ने वाला] भोग करता

जुन् फल् छन मुखले भनी न सकिन्या सो फल् ति भोग् गर्दछन् ।
कोही श्राद्धविषे पढुन् त तिनका पितृ सबै तर्दछन् ॥
पैल्हे खूब नियम् गरी दशमिमा एकादशीमा पनि ।
आसन् बाँधि अगस्ति-वृक्ष-मुनि पाठ् गर्छू म गीता भनी ॥२०॥

राम्‌गीता उपवास् गरीकन बहुत् आदर् गरी पढ्छ जो ।
तेस्‌लाई त नभन्नु मानिस भनी रामै सरीको छ त्यो ॥
दान् ध्यान् तीर्थ कदापि केहि नगरी यो रामगीता पढी ।
बस्छन् जो ति अनन्तका पदविमा पुग्छन् सहज् पार् तरी॥२१॥

धेरै बात गरेर हुन्छ अब क्या रामायणै हो जबर् ।
पाप् हर्नाकन छैन केहि बुझियो येसै सरीको अवर् ॥
जो छन् तन्त्र पुराण् श्रुति स्मृति इ ता सोह्रौं कलामा पनि ।
पुग्दैनन् त बखान् कहाँतक गरूँ यो फेरि ठूलो भनी ॥२२॥

जो रामायणको महात्म्य विधिले नारद्‌जिलाई कह्या ।
जुन् सूनीकन चित्तले बुझिलिंदा नारद् पनी खुश् भया ॥
पाठ् गर्छन् कित सुन्दछन् यदि भन्या यो येति सुन्दा पनि ।
जान्छन् सब् उहि विष्णुका पुरिमहाँ खुप् पूज्य सब्‌का बनी॥२३॥

है। कोई श्राद्ध के बारे में भी पढ़े तो उसके सब पितर तर जाते हैं। प्रथम नियमों का पालन करके दशमी या एकादशी में आसन बाँधकर अगस्ति वृक्ष के नीचे बैठकर मैं रामगीता का पाठ करता हूँ। २० जो उपवास करके रामगीता को बहुत आदर के साथ पढ़ता है उसे मनुष्य नहीं कहना चाहिए वह तो राम के समान है। दान, ध्यान, तीर्थ आदि कुछ भी न कर केवल इसी रामगीता को पढ़कर जो रहता है वह अनन्त-पदों को सहज ही पार करके तर जाता है। २१ अधिक बात क्या करना जब यह जान लिया कि रामायण ही बलिष्ठ (सर्वश्रेष्ठ) है और इसके समान पाप को हरण करने वाला (दूसरा) कुछ नहीं, जो भी तन्त्र, वेद, पुराण और धर्मशास्त्रादि हैं वे इसकी सोलहवीं कला के भी समान नहीं, तो फिर इसकी महत्ता का कहाँ तक वर्णन करूँ? २२ विधिवत् कहे गये रामायण के इस माहात्म्य को चित्त से समझकर नारद अत्यन्त प्रसन्न हुए और इतना कहा कि जो भी इसका पाठ करते अथवा सुनते हैं वे सबके अत्यन्त पूज्य बनकर विष्णुलोक में जाते हैं। २३ भगवान् सदाशिव कैलाश में बैठे हुए, बायीं ओर अपनी गोद में अति प्रिय तथा हितैषिणी

कैलास्मा भगवान् सदाशिव थिया ध्यान्मा बहुत् मन् दिई ।
बायाँ काखमहाँ पियारि हितकी श्री पार्वतीजी लिई ॥
एक् दिन् पार्वतिले तहीं शिवजिथ्यैं सोधिन् चरण्मा परी ।
आफू ता सब जान्दथिन् तर दया सम्पूर्ण लोक्मा गरी ॥२४॥

हे नाथ् ! बिन्ति म गर्दछू हजुरमा राम् हुन् जगत्का पति ।
राम्देखी अरु कोहि छैन जनका संसार तर्न्या गति ॥
जस्मा भक्ति गर्‍यो भन्या अति गँभीर् संसार सागर्महाँ ।
नौका झैं तरिजान्छ झट्पट गरी तेस् नर्को देहै तहाँ ॥२५॥

यस्ता राम्कन लोकमा जनहरू एक् ईश्वरै मान्दछन् ।
कोहि तत्त्व नपाइ मूर्खहरु ता मानिस् सरी जान्दछन् ॥
क्या भन्छन् ति कि राम ईश्वर भया शोक् क्यान तिन्ले गर्‍या ।
सीता रावणले जसै हरिदियो ठूलै विपत्मा पर्‍या ॥२६॥

ईश्वर्लाइ त शोक् हुँदैन र भनूँ हूँदैन अज्ञान् पनि ।
इन्मा यो सब देखियो त कसरी जान्नू इ ईश्वर् भनी ॥
लोक् यस्तो पनि भन्छ कोहि भगवान् यस्मा विचार् खूप् गरी ।
जस्तो हो सब यो बताउनुहवस् सन्देह मेरो हरी ॥२७॥

पार्वती जी को बैठाये अत्यन्त ध्यानमग्न थे। एक दिन पार्वती जी ने चरणों में झुककर, स्वयं सब जानते हुये भी, सम्पूर्ण लोक के प्रति दयालु होकर कहा—। २४ हे नाथ ! मैं विनती करती हूँ कि राम जगत्पति हैं। राम के सिवा [भक्त-] जनों को संसार से तारने वाला और कोई नहीं है। उनकी भक्ति रूपी नौका के सहारे मनुष्य अत्यन्त गंभीर संसार-सागर से तुरन्त पार हो जाता है। २५ ऐसे राम को जगत् में (बुद्धिमान्) मनुष्य केवल ईश्वर ही मानते हैं। पर मूर्ख लोग तो कोई तत्व न पाकर [उनको] मनुष्य की तरह ही जानते हैं। उनका कहना है कि यदि राम ईश्वर हैं तो रावण के सीताहरण करने पर उन्होंने शोक क्यों किया और इतनी विपत्ति में क्यों पड़ गये ! २६ ईश्वर को शोक नहीं होता और अज्ञान भी नहीं होता। राम में शोक, अज्ञान—दोनों ही देखा गया, फिर इन्हें ईश्वर कैसे मानें—कोई मनुष्य ऐसा भी कहते हैं। भगवन् ! इस पर विचार करके, जैसे भी हो, मेरे मन के संदेह को दूर करने के लिए यह सब बताने की कृपा करें। २७ पार्वतीजी के ऐसे प्रश्नों को सुनकर शिवजी अत्यन्त प्रसन्न हुए। राम ऐसे ही प्रभु हैं, यह कहते

यस्ता प्रश्न सुन्या र पार्वतिजिको शम्भू खुशी खुप् भया ।
राम् यस्ता प्रभु हुन् भनेर शिवले सब् तत्त्व ताहीं कह्या ॥
सून्यौ पार्वति ! राम् अनादि परमे- श्वर् हुन् ति आकाश् सरी ।
सब् ढाकीकन बस्तछन् अधिविराट् सम्पूर्ण सृष्टी गरी ॥२८॥

जस्तै चुम्बकका नजीक् परिगया नाच्छन् इ लोहा पनि ।
तेस्तै जस्कन पाइ नाच्तछ जगत् नाना प्रकार् को बनी ॥
यस्तो तत्त्व नजानि मानिस सरी राम्लाइ जो गर्दछन् ।
संसार्का इ अनन्त ताप्हरु तिनै- लाई सदा पर्दछन् ॥२९॥

बादल्ले अरु ढाक्छ ढाक्छ अरु क्या श्रीसूर्य्यलाई पनि ।
लोक् ता भन्छ उठ्यो र बादल ठुलो सब् सूर्य्य ढाक्यो भनी ॥
त्यस्तै तत्त्व न जानि बोल्छ जन जो सो भन्छ मानिस् पनि ।
योगी ज्ञानि त चिन्दछन् इ रघुनाथ् त्रैलोक्यका नाथ् भनी॥३०॥

जस्लाई रिङ्टा छ भन्छ उ फगत् घुम्छन् उ पर्वत् भनी ।
घुम्दैनन् इ त घुम्छ तेहि रिङ्टा जान्दैन कोहि पनि ॥
अज्ञान् रूप् रिङ्टा हुन्या जनहरू भन्छन् ति मानिस् पनि ।
राम् ता हुन् परमेश्वरै सकल यस् चौधै भुवन्का धनी ॥३१॥

हुए शिवजी ने सब तत्व कह सुनाया । सुनो पार्वती, राम आकाश की भाँति अति महान् हैं और सम्पूर्ण सृष्टि को उत्पन्न करके सबको आच्छादित कर रहने वाले अनादि परमेश्वर हैं । २८ जैसे चुम्बक के निकट जाने पर लोहा नाचने लगता है, वैसे ही जिसके आधार पर जगत् अनेक प्रकार के रूपों में होकर नाच रहा है, ऐसे तत्व को न जानकर, जो लोग राम को मनुष्य की भाँति समझते हैं उन्हीं को संसार की ये अनन्त पीड़ाएँ सदा दुखी करती रहती हैं । २९ बादल सबको तो ढक ही लेता है । यहाँ तक कि सूर्य को भी ढक लेता है । जग तो कहता है कि घना बादल उठा है और उसने पूरे सूर्य को ढक लिया है । जो जन तत्व को नहीं जानते वेही ऐसा कहते हैं । योगी ज्ञानी तो इन रघुनाथ को त्रिलोक के नाथ कहकर ही पहचानते हैं । ३० जिसको चक्कर आता है वही कहता है कि पर्वत घूमता है, परन्तु वह घूमता नहीं । कोई नहीं जान पाता कि वही स्वयं चक्कर में घूमता है । अज्ञानरूपी चक्कर से युक्त मनुष्य ही राम को मनुष्य कहते हैं । राम तो इन चौदह भुवनों के स्वामी साक्षात् परमेश्वर ही हैं । ३१ सूर्य में भी कहीं अंधेरा है, क्या ऐसा ही

सूर्य्यँमा पनि अन्धकार् छ कहिं क्या तस्तै छ राम्मा पनि ।
शोक् अज्ञान् रति छैँन जान्नु सबले आत्मा इनै हुन् भनी ।।
आर्को गोप्य रहस्य भन्छु सुन यो सम्वाद् सितारामको ।
भूभार् हर्नु थियो हऱ्या जब सबै छिन्छान् भयो कामको।।३२।।

भूमीको सब भार् हरेर रघुनाथ् राज् गर्न लाग्या जसैं ।
देख्या श्रीहनुमानलाइ र दया आयो प्रभूको तसैं ।।
सीतालाइ हुकूम् तहाँ दिनुभयो सीते ! हनूमान् बड़ा ।
हाम्रा भक्त भया इ तत्त्व लिनका खातिर् यहाँ छन् खड़ा।।३३।।

इन्लाई तिमि तत्त्व देउ भनि यो हूकूम् भयेथ्यो जसैं ।
सीताले हनुमानलाइ दिनुभो जुन् तत्त्व हो सो तसैं ।।
आर्को तत्व त केहि छैँन हनुमान् कुन् आज आर्को कहूँ ।
राम् हुन् ब्रह्म इनैंकि शक्ति बलियो माया भन्याकी म हूँ।।३४।।

रामको सन्निधि पाइ गर्छु सबको सृष्टी र पालन् पनि ।
आरोप् रामविषे गरिन्छ सब यो गर्न्या इनै हुन् भनी ।।

राम के संबंध में भी नहीं है ? शोक, अज्ञान आदि दोषों का उनमें लेशमात्र भी नहीं । सभी यह जान लें कि वही सबकी आत्मा हैं । दूसरा गोपनीय रहस्य कहता हूँ, यह सीताराम का सम्वाद सुनो । पृथ्वी के भार को हरण करने वाला कौन था । जब उन्होंने ही पृथ्वी को भार से रहित किया तभी सब कार्य पूर्ण हुए । ३२ [असुरों को मार कर] पृथ्वी के भार को हरण करके जब श्रीरघुनाथ राज्य-सिंहासन पर बैठे तो उन्होंने श्रीहनुमान को देखा । उन्होंने कृपा करके उसी समय सीता को आज्ञा दी, हे सीते ! हमारे महान् भक्त हनुमान तत्वज्ञान को प्राप्त करने के लिए खड़े हैं । ३३ जैसे ही राम का यह आदेश हुआ कि इन्हें तुम तत्वज्ञान दो, वैसे ही सीता ने जो भी तत्व था हनुमान को प्रदान किया । हे हनुमान ! राम के अतिरिक्त संसार में और कोई दूसरा तत्व नहीं । हे हनुमान ! और क्या कहूँ राम ही साक्षात् परब्रह्म हैं और मैं इन्हीं की शक्ति-स्वरूप हूँ । ३४ राम का आश्रय पाकर [प्रकृति-स्वरूपा] मैं सब प्राणियों की सृष्टि करती हूँ, सबका पालन करती हूँ । वास्तव में सब कुछ करने वाले राम ही हैं— विद्वान् लोगों का ऐसा ही कथन है । [किन्तु राम ब्रह्मस्वरूप हैं । पृथ्वी पर जो कुछ उनकी लीलाएँ हैं, वे तो उनकी प्रकृति-स्वरूपा मैं क रही हूँ ।] अत्यन्त पवित्र रघुवंश में प्रभु रामचन्द्र जी ने जन

यस्‌निर्मल्‌ रघुवंशमा प्रभुजिले जो जन्म याहीं लिया।
विश्वामित्र निमित्त यज्ञहरुमा राखी दया मन्‌ दिया॥३५॥

जो पाप्‌ गौतमपत्निका हरिदिया जो भाँचिदीया धनु।
जो मैलाइ बिहा गर्‍या सब कुरा यस्ता कहाँ तक्‌ भनूँ॥
जो ता गर्व हर्‍या ति वीर्‌ परशुराम्‌- का जो अयोध्या बस्या।
बार्‍है बर्ष बिहा गर्‍यापछि बसी जो ता वनैमा पस्या॥३६॥

यस्ता काम्‌ जति काम्‌ भया ति सब काम्‌ गर्न्या म हूँ तापनि।
भन्छन्‌ लोक त रामलाइ सबका कर्ता इनै हुन्‌ भनी॥
अन्तर्यामि अनादि साक्षि तिनिहुन्‌ कर्ता कहाँ ती थिया।
मेरा गुण लिदा त लोकहरुले कर्ता भनी पो दिया॥३७॥

येती ताहिं सिताजिबाट उपदेश्‌ पाई सक्याथ्या जसै।
आफै राम्‌ प्रभुले पनी दिनुभयो फेर्‌ तत्त्वको ज्ञान्‌ तसै॥
यस्तो हुन्छ परात्म आत्म यहि हो यो हो अनात्मा भनी।
आत्मा और परात्मलाइ बुझदा पाइन्छ मुक्ती पनि॥३८॥

आत्माको र परात्मको छ कति फेर्‌ त्यो एक जानीलिनू।
जुन्‌ जड्‌ चीज अनात्म हुन्‌ उ त झुटा जानेर छोडीदिनू॥

लिया, जिन्होंने विश्वमित्र द्वारा आयोजित यज्ञों में दया कर मन को अर्पित किया। ३५ जिन्होंने गौतम-पत्नी (अहिल्या) के पापों का निवारण किया, जिन्होंने शिवधनुष तोड़ा और जिन्होंने मुझे विवाहा—इस प्रकार की सब बातों को कहाँ तक कहूँ। जिन्होंने उन वीर परशुराम के दर्प को शांत किया, जिन्होंने विवाह के पश्चात्‌ ही बारह वर्ष के लिए वन में प्रवेश किया। ३६ इस प्रकार के जितने कार्य हैं उन सबको वास्तव में मैं ही करती हूँ। जग कहता है कि राम इन सभी कार्यों के कर्ता हैं। वे तो अन्तर्यामी, अनादि, द्रष्टा [मात्र] हैं, वह कर्त्ता कहाँ? मेरे इन [प्रकृति के] गुणों को जानकर ही संसार ने [द्रष्टा राम को] कर्त्ता कह दिया। ३७ जब हनुमान सीता से इतना ज्ञानोपदेश प्राप्त कर चुके तो स्वयं प्रभु ने भी उन्हें पुनः तत्व का ज्ञान दिया। आत्मा ही परमात्मा है। आत्मा और परमात्मा को समझने से ही मुक्ति प्राप्त होती है। ३८ आत्मा और परमात्मा में क्या भेद है इसे ज्ञात कर लेना और जो जो वस्तुएँ जड़ और आत्मा से परे हैं उन्हें मिथ्या जान कर छोड़ देना [यही तत्वज्ञान है]। आत्मा और परमात्मा को विचार कर

आत्माको र परात्मको गरि विचार् एक् तत्व जान्यो जसै ।
अज्ञान् सब् छुटिजान्छ ती पुरुषको मै तुल्य हुन्छन् तसै ॥३९॥

यो मेरो हृदयै त हो प्रिय छ यो खुप् गुप्त राख्नू पनि ।
तत्त्वज्ञान् भनि यै कहिन्छ बुझिल्यौ सून्यौ हनुमान् ! भनी ॥
तत्त्वज्ञान् हनुमानलाइ रघुनाथ्- ले यै दिनूभो तहाँ ।
सोही ज्ञान् तिमिथ्यैं कहीकन सक्याँ सम्पूर्ण मैले यहाँ ॥४०॥

सून्यौ पार्वति ! रामको हृदय यो जो जो त पाठ् गर्दछन् ।
जो छन् जन्म सहस्रका सकल पाप् तिन्का सबै टर्दछन् ॥
जाति भ्रष्ट अधम् हवस् तपनि लौ यस्लाइ खुप् पाठ् गरी ।
राम्को ध्यान् पनि गर्छ यो पनि भन्या त्यो जान्छ संसार् तरी॥४१॥

सूनिन् पार्वतिले अपार महिमा यो रामजीको जसै ।
फेर् विस्तार् गरी सुन्नलाइ मन भो ती पार्वतीको तसै ।
बिन्ती फेर् शिवथ्यैं गरिन् पनि तहाँ हे नाथ् ! सबै रामको ।
लीला सुन्न मलाइ मन् हुन गयो ऐही बुझ्याँ कामको ॥४२।

सूनोस् राम-लिला भनेर म उपर् माया बहुतै धरी ।
सब् लीलाहरु फेर् बताउनु हवस् जो छन् ति विस्तार् गरी ।

[उनके] एक तत्व होने का जैसे ही ज्ञान होता है वैसे ही उ पुरुष की सारी अज्ञानता नष्ट हो जाती है और वह मेरे समा हो जाता है। ३९ यह जो तत्वज्ञान मैंने दिया है यह मेरा हृद है, यह मेरा प्रिय है; इसे अत्यन्त गुप्त रखना। यह समझ लो कि तत्वज्ञान इसी को कहते हैं। [शंकर ने कहा—] राम ने हनुमान को यह तत्वज्ञान दिया था। हे पार्वती, वही मैंने तुमसे कहा। ४० हे पार्वती, सुन जो लोग इस राम-हृदय का पाठ करते हैं उनके सहस्र जन्मों में किये गये सम्पू पाप नष्ट हो जाते हैं। जातिभ्रष्ट तथा अधर्मी होने पर भी इसका पाठ कर जो राम का ध्यान करता है वह संसार से तर जाता है। ४१ पार्व ने जब श्रीरामजी की इस अपार महिमा को सुना तो पुनः विस्तारपूर्वक सुन का उनका मन हुआ। फिर उन्होंने शिवजी से विनती की, हे नाथ ! मु राम की लीला को श्रवण करने की पुनः इच्छा हुई है, मैं इसे ही कल्याणका समझती हूँ। ४२ रामलीला की कथा सुना कर आपने मेरे ऊपर महती कृ की है। फिर भी राम की यह लीला विस्तारपूर्वक सुनने की मुझे उत्कण्ठा है पार्वती जी का यह प्रेमाग्रह सुनकर शिवजी ने बड़े प्रेम के साथ सम

यो प्रेम् पार्वतिको सुन्या र शिवले खुप् प्रेम राखिन् भनी।
जो जो हुन् सब राम्-चरित्र शिवले ताहाँ बताया पनि ॥४३॥

ई भूमिकन रावणादि विरले भारी बनाई दिया।
भारी भै ति रुँदै गइन् उहिँ जहाँ ब्रह्मा बस्याका थिया॥
पापी धेर् भइ भार् भयो मकन ता यो भार छूटोस् भनी।
आयाँ आज दयानिधान् चरणमा यो बिन्ति पारिन् पनि॥४४॥

यस्तो बिन्ति सुनी दया पनि उठ्यो ती भूमिमाथी तहाँ।
दौडी क्षीर समुद्रका तिर गया विष्णू रहन्थ्या जहाँ॥
इन्द्रादीहरु साथमा लिइ स्तुती ताहाँ गर्‍याथ्या जसै।
सर्वात्मा भगवान् प्रसन्न हुनु भै दर्शन् दिनूभो तसै॥४५॥

देख्या सुन्दर रूप् जसै प्रभुजिको ब्रह्मा चरण्मा पर्‍या।
भक्तीले स्तुति खुप् गरेर खुशि भै हात् जोरि बिन्ती गर्‍या॥
हे नाथ्, रावण दुष्ट भै सकल लोक्- लाई विपत्ती दियो।
इन्द्रादीहरुको त तेज् सहजमा खैंचेर तेस्ले लियो॥४६॥

यस्लाई अब मारिबक्सनु हवस् मानिस् सरीका बनी।
मानिस्देखि मर्‍यास् भनेर वरदान् दीई रह्याँछू पनि॥

राम-चरित्र का वर्णन किया। ४३ इस धरती को रावण जैसे [दुरात्मा]वीरों के पाप ने बोझिल बना दिया। [निदान्] जहाँ ब्रह्माजी बैठे थे, पापों के बोझ से व्याकुल होकर धरती रोती वहाँ गई। पापियों की वृद्धि होने से मुझ पर भार अधिक पड़ा है। इस भार से छुटकारा तो मिले, हे दयानिधान! इसी आकांक्षा से आज मैं आयी हूँ। यह कहती हुई पृथ्वी ने [चतुरानन ब्रह्मा के] चरणों में विनती की। ४४ इस प्रकार विनती सुनकर ब्रह्मा को पृथ्वी पर दया उत्पन्न हुई और शीघ्रही वे पृथ्वी को लिए हुए क्षीरसागर की ओर चले जहाँ विष्णु भगवान् निवास करते थे। इन्द्रादि देवों को साथ लेकर जैसे ही स्तुति की, वैसे ही सर्वात्मा भगवान् ने दर्शन दिया। ४५ प्रभुजी का भव्य रूप देखते ही ब्रह्माजी उनके चरणों में गिर पड़े। प्रसन्न-भाव से भक्तों ने स्तुति की और ब्रह्मा ने हाथ जोड़कर विनय की। हे नाथ! रावण दुष्ट आचरण से सारे संसार को विपत्ति में डाले हुए है। इन्द्रादि देवताओं के पराक्रम को तो उसने बड़ी सरलता से खींच लिया है अर्थात् उन्हें पराजित कर दिया है। ४६ [सो कृपा करके] मानव रूप धारण कर अब उसका संहार कीजिए।

ब्रह्माको बिनती सुनेर भगवान्- को यो हुकूम् भो अनि ।
रावण्लाइ म मारुँला सहजमा मानिस् सरीको बनी॥४७॥

माया मेरि सिता भयेर रहनिन् छोरी जनक्की भई ।
छोरो भैकन जन्मुँला म दशरथ् जीका घरैमा गई ॥
सीतालाइ लियेर पूर्ण गरुँला बिन्ती म तिम्रो भनी ।
अन्तर्धान् भगवान् तहीं हुनुभयो त्रैलोक्यका नाथ् अनि॥४८॥

अन्तर्धान् भगवान् जसै हुनुभयो इन्द्रादिलाई पनि ।
ब्रह्माले खुशि भै अह्राउनुभयो भूलोक जाऊ भनी ॥
मानिस् भै भगवान् जती त रहनन् तेस् पृथ्वितल्मा गई ।
बानर् भैकन सब् तिमि वसिरह्या साहाय जस्ता भई ॥४९॥

ब्रह्माजी पनि सत्यलोक् गइगया येती अह्राईवरी ।
इन्द्रादी पनि वानरै भइ रह्या सब् पृथ्विलोक्मा झरी ।
यै बीच्मा दशरथ् बडा विर थिया राजा अयोध्यामहाँ ।
तिन्को बृद्ध उमेर् भयो र पनि एक् छोरा भयेनन् तहाँ ॥५०॥

ताप्ले पूर्ण भई गुरूसित गया सोध्या उपायैं पनि ।
हे सर्वज्ञ मुने ! कसो गरि हुनन् छोरा मलाई भनी ॥

'मनुष्य के हाथों मरेगा' ऐसा वरदान भी मैं उसको दे चुका हूँ । ब्रह्मा की इतनी विनती सुनकर भगवान् की यह अनुग्रहवाणी हुई, मैं मानव-रूप धारण कर सहज ही रावण का विनाश कर दूँगा । ४७ मेरी शक्ति, सीता नाम से जनक की पुत्री होगी; मैं दशरथ के घर में उनके पुत्र के रूप में जन्म लूँगा । सीता को लेकर मैं तुम्हारी आकांक्षा पूरी करूँगा । इतना कह कर त्रिलोकीनाथ भगवान् विष्णु वहीं अन्तर्द्धान हो गये । ४८ जैसे ही भगवान् अन्तर्द्धान हुए, प्रसन्न होकर ब्रह्मा जी ने इन्द्र को भी मानवलोक में जाने का आदेश दिया । जब तक भगवान् मानवलोक पृथ्वी में मनुष्य होकर रहें तब तक तुम बन्दर होकर उनके सहायक की तरह रहो । ४९ इतना कहकर ब्रह्मा जी भी स्वर्गलोक को चले गये । इन्द्रादि [देवता] भी पृथ्वी में उतर कर बानर बनकर रहने लगे । इन्ही दिनों अयोध्या में महान् वीर राजा दशरथ [राज्य कर रहे] थे । उनकी वृद्धावस्था आजाने तक भी कोई पुत्र नहीं हुआ । ५० चिन्ताग्रस्त होकर राजा दशरथ ने गुरु (वसिष्ठ) के पास जाकर अपनी चिन्ता के निवारण का उपाय पूछा । हे मुनिवर ! मुझे किस प्रकार पुत्र-प्राप्ति

यस्कामले फल मिल्छ यो भनि सबै जान्या वशिष्ठै थिया ।
यस्तो बिन्ति सुनी वशिष्ठ गुरुले युक्ती बताई दिया ॥५१॥

हुन्छन् पुत्र अवश्य जल्दि महाराज् एक् यज्ञ ऐले गऱ्या ।
शान्ताका पति ऋष्य शृंग ऋषि छन् ती डाक्न ऐले पऱ्या ॥
ती हामी बसि यज्ञ एक् हजुरको खातिर् गरौंला जसैं ।
चार् छोरा अति वीर् हुनन् हजुरका सब् ताप छुट्नन् तसैं॥५२॥

यस्तो अर्ति वशिष्ठ को जब सुन्या राजा बहुत् खुश भया ।
शान्ताका पतिलाइ डाकीकन खुप् याग् गर्न लागीगया ॥
ऋष्यैशृंग वशिष्ठ दुइ ऋषिले होम् गर्न लाग्या जसै ।
पायस्को थलिया लिईकन तहाँ आया ति अग्नी तसैं ॥५३॥

यस् पायस्कन आज लेउ महराज् ! छोरा हुन्याछन् भनी ।
राजालाइ दिया र पायस तहाँ लक्या ति अग्नी पनि ॥
राजा खूशि भई दुवै ति ऋषिका कोमल् चरण्मा परी ।
कौशल्या र ति कैकयीकन दिया पायस् दुवै भाग् गरी॥५४॥

खानै बाँकि थियो तसै बखतमा आइन् सुमित्रा पनि ।
कौशल्या र ति कैकयीसित भनिन् खवै भाग मेरो भनी ॥

होगी। इस कर्म से यह फल प्राप्त होगा—यह जाननेवाले गुरु वसिष्ठ ही थे। [राजा की] ऐसी विनती सुनकर गुरु वसिष्ठ ने उपाय बता दिया। ५१ महाराज ! एक [पुत्रेष्ठि] यज्ञ करने से शीघ्र ही पुत्र की निश्चय प्राप्ति होगी। शान्ता के पति ऋष्यशृङ्ग एक ऋषि हैं, उन्हें अभी बुलाना चाहिए और उनके साथ बैठकर हम लोग आपके लिए वैसा ही एक यज्ञ करेंगे। [उसके फलस्वरूप] आपके चार अत्यन्त वीर पुत्र होंगे और आप सब तापों से मुक्त होंगे। गुरु वसिष्ठ का यह परामर्श सुनकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुए। शान्ता के पति ऋष्यशृंग को बुलाकर [उनके आदेशानुसार] सविधि यज्ञ का आरम्भ किया। जैसे ही ऋष्यशृङ्ग और वसिष्ठ, दोनों ऋषि हवन करने लगे, वैसे ही अग्निदेव खीर की एक थाली हाथ में लिए वहाँ प्रगट हुए। ५३ प्रस्तुत इस खीर को ग्रहण करें, स्वयं भगवान् पुत्र रूप में आपके यहाँ जन्म लेंगे। यह कहते हुए राजा को खीर देकर उसी समय अग्नि-देव अन्तर्द्धान हो गये। राजा ने प्रसन्न होकर दोनों ऋषियों के कोमल चरणों में साष्टांग प्रणाम किया। खीर के दो भाग करके, कौशल्या और कैकेयी को [एक-एक भाग] दिया गया। ५४

दूवैले दुइ भागदेखि झिकि भाग् तिनको पुऱ्याई दिया ।
तीन् रानी मिलि तेहि पायस तहाँ संपूर्ण खाई लिया ॥५५॥
तीनै रानि ति गर्भिणी पनि भया तेज् देवताको सरी ।
देखी यो सब रानिका सकल लोक् खूशी भया तेस् घरी ॥
कौशल्या जननी गराइ भगवान् श्रीराम पैदा भया ।
देखिन् श्रीप्रभुको चतुर्भुज स्वरूप् सब् माइका ताप् गया॥५६॥
हात् जोरी बहुतै स्तुती पनि गरिन् ईश्वर् इनै हुन् भनी ।
जान्याँ नाथ ! हजूरलाइ सबका आत्मा स्वरूपी भनी ॥
यो ब्रह्माण्ड पनी सहज् उदरमा लिन्या त आफै थियौ ।
मेरा आज उदर्विषे बसि यहाँ यो जन्म ऐले लियौ॥५७॥
देख्याँ भक्त-उपर् दया हजुरको हे नाथ् ! शरण्मा पऱ्याँ ।
यै मूर्ती प्रभुको सदा मनमहाँ झल्कोस् पुकारा गऱ्याँ ॥
यस्तो दिव्य शरीर् लुकाइकन बेस् बालक् स्वरूप्का बनी ।
दर्शन् देउ मलाइ हेर्छु भगवान् ! फेर् बाललीला पनि॥५८॥
तेही बालक मूर्तिलाइ म यहाँ आलिङ्गनादी गरी ।
सब् पाप् नष्ट गराउँला र करुणा होला र जाँला तरी ॥

(खीर) खाने ही वाली थीं कि सुमित्रा भी उसी समय वहाँ आ पहुँची और कहा कि मेरा भाग कहाँ है । दोनों ने अपने-अपने हिस्से में से निकाल कर उसके लिए भाग पूरा किया । तीनों रानियों ने मिलकर सब खीर खाई । ५५ तीनों रानियाँ गर्भवती भी हो गईं । उनके मुखमण्डल दिव्य तेज से पूर्ण थे । ऐसा देखकर सारा ब्रह्माण्ड हर्षोल्लास से भर गया । कौशल्या ने भगवान् श्रीराम को जन्म दिया । भगवान् का चतुर्भुज स्वरूप देखकर माता का ताप समाप्त हो गया । ५६ राम ईश्वर हैं, ऐसा समझकर हाथ जोड़कर [कौशल्या ने] उनकी स्तुति भी की—नाथ मैं आपको पहचान गई । आप सबके आत्मास्वरूप हैं । इस ब्रह्माण्ड को भी सहज ही पेट में धारण करने वाले आप ही थे । आज मेरे गर्भ में स्थित होकर यहाँ जन्म लिया है । ५७ हे नाथ ! आपकी ऐसी महान् कृपा देखकर आपके चरणों में पड़ती हूँ । मेरे हृदय की यही पुकार है कि आपकी यह मूर्ति सदैव मेरे हृदय-पटल पर विराजमान रहे । इस दिव्य रूप को अदृश्य कर सुन्दर बाल-स्वरूप में मुझे दर्शन दीजिए । तब मैं बाल-लीला देखकर आनन्द प्राप्त करूँगी । ५८ आपके उसी बाल-रूप की मूर्ति को मैं आलिंगन करके सब पापों से मोक्ष पाऊँगी । यही

यो बिन्ती महतारिको सुनि हुकूम् यो भो प्रभूको तहाँ
मातर् ! जुन् छ हजूरको हित कुरो होओस् सबै थोक् यहाँ॥५९
दूवै स्त्री पुरुषै भई अघि ठुलो मेरो तपस्या गर्‍यौ
तीमीलाइ म पुत्र पाउँ भनि खुप् इच्छा यसैमा धर्‍यौ
हूँला पुत्र भनेर वर् पनि दियाँ सोही कुराले यहाँ
तिम्रो पुत्र भयेर जन्मन गयाँ व्यर्थै म गर्थ्यां कहाँ ॥६०

कौशल्यासित बात् यती यति गरी बालक् सरीका बनी
चेष्टा बालककै लिया प्रभुजिले खुप् रून लाग्या पनि
थाहा भो दशरथ्जिलाइ र गया दर्शन् गर्‍याथ्या जसै
देख्तैमा परिपूर्ण मन् हुन गयो आनन्द पाया तसै ॥६१

तत्क्षणमा तहिं जातकर्म पनि भो सब् काम् गुरूले गर्‍या
कैकेयीतिर ता भरत् हुन गया आनन्दमा सब् पर्‍या
जम्ल्याहा दुइ पुत्र पाउँदि भइन् ताहाँ सुमित्रा पनि
जेठा लक्ष्मण ता भया ति दुइमा शत्रुघ्न कान्छा बनी॥६२

तीन् रानीतिर चार पुत्र सुकुमार् जन्मी सक्याथ्या जसै
भूमि रत्न सुवर्ण वस्त्रहरुका भारी भया दान् तसै

आपकी मेरे ऊपर महान् कृपा होगी। माता की यह विनती सुन
वरदान-स्वरूप भगवान् ने कहा, हे माता ! आपके हितार्थ सभी
आपकी इच्छानुसार हो जाये। ५९ किसी समय आप दोनों स्त्री-पुरुष
इस आकांक्षा से महान् तप किया था कि मुझे आप पुत्र-रूप में प्राप्त कर
उस समय मैंने आपको वरदान देकर आपका पुत्र होना स्वीकार भी कि
था। इसीलिए मैं आपका पुत्र बनकर आया हूँ। व्यर्थ ही मैं
कहाँ करता ! ६० माता कौशल्या से इतनी बातें करके प्रभु ने बाल-
धारण किया और बालक की भाँति रोने लगे। और बाल-क्रीड़ाओं
माता को प्रमुदित करने लगे। राजा दशरथ को मालूम होते ही
दर्शनों के लिए आये। देखते ही उनका हृदय आनन्द से विभोर
गया। उन्हें एक तृप्ति की अनुभूति हुई। ६१ गुरु ने उसी समय जा
कर्म आदि सब सम्पन्न करवाये। [राजा-प्रजा] सभी आनन्दित हु
कैकेयी से भी भरत तथा सुमित्रा से जुड़वे पुत्र ज्येष्ठ लक्ष्मण और कनि
शत्रुघ्न ने जन्म लिया। ६२ जैसे ही तीनों रानियों के चार सुकुमार
उत्पन्न हुए वैसे ही [महाराज दशरथ की ओर से] भूमि, रत्नादि, स
तथा वस्त्रों का दान किया जाने लगा। गुरु वशिष्ठ ने कौशल्या

कौशल्यासुतको वशिष्ठ गुरुले नाम् 'राम' भन्नू भनी।
राख्या कैकयिपुत्रको 'भरत' नाम् जम्ल्याहकोनाम् पनि।।६३।

जेठाको शुभ नाम 'लक्ष्मण' गरी जुन् चाहिं कान्छा थिया।
तिन्को नाम् पनि काम-माफिक असल् 'शत्रुघ्न' राखी दिया।
लक्ष्मण् राम्सित खेल्दछन् भरतथ्यैं शत्रुघ्न खेल्दा भया।
पायस्कै अनुसारले हुन गयो प्रीती त बढ्दैगया।।६४।

बालक् काल् बितिगैगयो प्रभुजिको सब् बाललीला गरी।
चारैको व्रतबन्ध भो पढिसक्या सब् शास्त्र खुब् बोध् गरी।
खेल्या क्यै दिनमा शिकार बनमा सच्चा शिकारी बनी।
राज्काज्गर्नुजती थियो सकल त्यो राज्काज् चलाया पनि।।६५।

राम् हुन् परात्मा ति कहाँ विकारी।
यस् लोकमा छन् नररूपधारी।।
काम् गर्न लाग्या ति नरैसरीका।
लीला अपार् छन् भगवान् हरीका।। ६६ ।।

राम् नारायण हुन् भनेर मनले जान्या र भेट्छू भनी।
विश्वामित्र ऋषी बहुत् खुशि हुँदै आया अयोध्या पनि।
देख्या श्री दशरथ्जिले र बहुतै आदर् ऋषीको गरी।
सोध्या काम् किन आज आउनु भयो भन्दै बहुत् प्रेम् धरी।।६७।

उत्पन्न बालक का नाम राम और कैकेयी से उत्पन्न बालक का नाम भरत रक्खा। ६३ जुड़वे बालकों में से ज्येष्ठ पुत्र का नाम लक्ष्मण तथा कनिष्ठ का नाम उसके कार्यों के अनुसार शत्रुघ्न [अर्थात् शत्रु का नाश करने वाले] रक्खा गया। लक्ष्मण राम के साथ तथा शत्रुघ्न भरत के साथ खेलते हैं। यह सारा विधान खीर के अनुसार ही हुआ। ६४ प्रभु का बाल्यकाल बाल-लीलाओं में व्यतीत हुआ। चारों भाइयों का यज्ञोपवीत संस्कार हुआ। उन्होंने सभी शास्त्रों का अध्ययन समाप्त किया। एक कुशल आखेटक के रूप में कितने ही दिन वन में शिकार खेलते फिरे। राज-काज में भी प्रवीण हुए। ६५ राम परमात्मा हैं। वे तो निर्विकार हैं, उनमें, विकार कहाँ? इस संसार में उन्होंने मानव-रूप धारण किया है। वे मनुष्य की ही तरह कार्य करने लगे। भगवान् हरि की लीला अपरम्पार है। ६६ ऋषि विश्वामित्र ने हृदय से यह अनुभव किया कि राम नारायण विष्णु हैं। वे बहुत हर्षित

आदर्पूर्वकका सुन्या प्रिय वचन् यस्ता ऋषीले जसै
आपन् दर्द जउन् थियो मनमहाँ सोही बताया तसै
हे राजन्! सब पर्व पर्वहरुमा ईश्वर्विषे मन् धरी
गर्छू होम्हरु कर्म तेस् बखतमा आयेर होम् नाश् गरी॥६८

मारिच्ले र सुबाहुले बहुत दिक् गर्छन् र पापी भनी
दूर्बैलाइ मराउनाकन उठ्यो रिस् आज मेरो पनि
सोही बिन्ति गरूँ भनेर अहिले आयाँ हजुर्मा यहाँ
जेठा पुत्र मलाइ बक्सनु हवस् लैजान्छु ऐले वहाँ॥६९

लक्ष्मण् साथ् गरि रामलाइ अधिराज् ऐले हजुर्ले दिया
मारिच्लाइ सुबाहुलाइ सहजै मार्न्या यिनैले थिया
यस्मा अति वशिष्ठको लिनुहवस् दीना नदीना महाँ
भन्छन् दीनु त बक्सनू पनि हवस् यै काम आयाँ यहाँ॥७०

विश्वामित्रजी को सुन्या वचन यो राजा सकस्मा पर्‍या
दिऊँ कि नदिऊँ यही मनमहाँ चिन्ता बहुतै गर्‍या
सोध्या ताहिँ वशिष्ठर्थ्यैं पनि गुरो यस्तो पर्‍यो क्या गरूँ
कल्याण् हुन्छ कसो गरेर अहिले अर्ती मिलोस् एक् बरु॥७१

हुए और दर्शनार्थ अयोध्या आये। दशरथ जी ने ऋषि को देखकर उन
भव्य स्वागत किया और अत्यन्त प्रेम-पूर्वक आने का कारण पूछा। ६
ऋषि ने दशरथ के प्रिय वचनों को सुनकर अपने मन की सारी व्यथा व
सुनाई। हे राजन्। सभी पर्वों में ईश्वर के प्रति मन लगाकर ज
हवन कर्मों को करता हूँ, तो राक्षसगण हवन-कार्य में बाधा डालते हैं। ६
मारीच और सुबाहु अत्यधिक कष्ट दे रहे हैं। आज मेरे मन में भी इत
क्रोध उठा है कि मैं उन दोनों को मरवा डालूँ। अतः मैं आपसे य
विनती करने आया हूँ कि इस कार्य के लिए मुझे अपना ज्येष्ठ पुत्र दे
की कृपा करें; मैं उन्हें अभी वहाँ ले जाऊँगा। ६९ महाराज! य
आप लक्ष्मण सहित राम को देते तो मारीच तथा सुबाहु को सरलता पूर्व
मार डालते। देने न देने के विषय में आप गुरु वशिष्ठ से परामर्श व
लेने की कृपा करें। इसी काम से मैं यहाँ आया हूँ। ७० विश्वामि
के वचन सुनकर महाराज संकट में पड़ गये। दें या न दें? यही चिन
उनके मन में उठने लगी। उन्होंने वशिष्ठ से पूछा, गुरुदेव! ऐ
समस्या आ पड़ी है, क्या करूँ। किस प्रकार कल्याण होगा यही बत
की कृपा करें। ७१ एक तो यही कठिन है कि राम को देखे बिना

रामलाई म नदेखि बाँच्छु कसरी एक् यै कठिन् भो अनि ।
इन्लाई नदिया सराप् पनि दिनन् की लाग्छ यस्तो पनि ॥
यस्मा श्रेय यसो छ यो गर भनी पाऊँछु आज्ञा जसो ।
सोही काम म गर्दछू हित हुन्या कुन् पाठ् छ गर्नू कसो॥७२॥

यो बिन्ती दशरथ्जिको जब सुन्या ताहीं गुरूले पनि ।
रामको गुह्य कुरा सबै भनि दिया यस्ता इ राम् हुन् भनी ॥
हे राजन्! तिमि रामलाइ अहिले हुन् पुत्र मेरा भनी ।
भन्छौ पुत्र ति हुन् तथापि इ त हुन् चौधै भुवन्का धनी॥७३॥

भूभार् हर्न निमित्त आज भगवान् यस् पृथ्वितल्मा झर्‍या ।
कौशल्यातिर जन्मनू पनि थियो सो सत्य ऐले गर्‍या ॥
कौशल्या दशरथ् दुवै तिमिहरू कश्यप् अदीती थियौ ।
ईश्वर्लाइ म पुत्र पाउँ भनि तप् गर्दै समाधी लियौ॥७४॥

खुशी भै वरदान् दिया प्रभुजिले छोरो म हूँला भनी ।
सोही सत्य गराउनाकन यहाँ जन्म्या परात्मा पनि ॥
शेष्हुन् 'लक्ष्मण' शङ्खहुन् 'भरतजी' 'शत्रुघ्न' चक्रावतार् ।
हुन् को जान्दछ तत्त्व यो बुझ तिमी लीला प्रभूको अपार्॥७५॥

किस प्रकार जीवित रह सकूँगा। यदि मैं इन्हें न दूं तो ऐसा लगता है कि कहीं विश्वामित्र श्राप न दे दें। इसमें कौन कार्य कल्याणकारी होगा, आप आज्ञा दें; वही हितकर कार्य मैं करूँ। कौन सा आदेश किस प्रकार पूर्ण करना है मुझे आज्ञा दें। ७२ गुरु ने राजा दशरथ की विनती सुनकर उन्हें राम के समस्त गुणों से परिचत कराया। उन्होंने कहा, हे राजन्! आप तो राम को अपना पुत्र कहते हैं। सो तो है ही, तथापि ये वही चौदह भुवन के मालिक हैं। ७३ पृथ्वी के भार को हरण करने आज भगवान् धरती पर पधारे हैं। कौशल्या माता की गोद में जन्म लेना था सो भी अब सत्य हुआ। कौशल्या और दशरथ आप दोनों पूर्व जन्म में अदिति और कश्यप थे। तपस्या में रत होकर भगवान् को अपने पुत्र के रूप में पाने की कामना की थी। ७४ प्रभु ने तपस्या से मुग्ध होकर आपका पुत्र होने का वरदान दिया। उसी को सत्य प्रमाणित करने के लिए प्रभु ने यहाँ जन्म लिया। शेष का (शेषनाग) लक्ष्मण, शंख का भरत, चक्र का शत्रुघ्न अवतार हैं। इन तत्वों को कौन जानता है। अत: आप प्रभु की इस अपार लीला को समझें। ७५ स्वयं प्रभु की मूल शक्ति, अनन्त गुणों से पूर्ण दिव्य मूर्ति बनकर जनक जी की पुत्री

गूल् शक्ति प्रभुको अनन्त गुणकी सो दिव्य मूर्ती बनी ।
छोरी भै ति बस्याकि छन् जनकको सीता छ नाऊँ पनि ।।
सीता राम् दुइको विवाह विधिले संयोग् गराऊँ भनी ।
विश्वामित्रजिको भयो र मनमा आई रह्या छन् पनि।।७६।।
दीन्यै योग्य म मान्दछू भनि गुरू– ले अति दीया जसै ।
खूशी भै दशरथ्जिले पनि दिया लक्ष्मण् सहित् राम् तसै ।।
राम् लक्ष्मण्कन पाउँदा ऋषि पनी अत्यन्त खुशी भया ।
आशीर्वाद् दशरथ् जिलाइ दिइ राम् लक्ष्मण् लिई ती गया।।७७।।
केही दूर् गइ रामलाइ ऋषिले विद्या सिकाई दिया ।
जुन् विद्या पढि भोक्थकाइ कहिल्यै लाग्दैन यस्ता थिया ।।
गङ्गाका तिरमा बडो बन थियो पुग्या जसै ती तहाँ ।
विश्वामित्रजिले कह्या प्रभुजिथ्यैं राम्! ताड़का छे यहाँ ।।७८।।
त्यो हो राक्षसि कामरूपि छ बहुत् लोक्लाइ बाधा पनि ।
गर्छे यस्कन मारिबक्सनु हवस् यो पापिनी हो भनी ।।
विश्वामित्रजिको वचन्कन सुनी श्रीरामजीले पनि ।
टंकार् खुप् धनुको गऱ्या सुनि यहाँ त्योजल्दिआवस्भनी।।७९।।
त्यो टंकार् सुनि ताड़का पनि तहाँ दौडेर आई जसैं ।
हान्या बाण् प्रभुले गड्यो हृदयमा त्यो बाण्, मरी त्यो तसैं ।।

होकर बैठी है और नाम भी सीता है। सीता और राम दोनों का विवाह का विधिवत संयोग उत्पन्न कराने की इच्छा विश्वामित्र जी के मन में हुई है, इसी लिए ये आए हुए हैं। ७६ जैसे ही गुरु ने ऐसा परामर्श दिया कि देना ही उचित है, वैसे ही प्रसन्न होकर दशरथ जी ने भी राम को लक्ष्मण सहित दे दिया। राम-लक्ष्मण को पाकर ऋषि भी अत्यन्त हर्षित हुए और दशरथ जी को आशीर्वाद देते हुए राम-लक्ष्मण को लेकर चले गए। ७७ कुछ दूर जाकर गुरु ने राम-लक्ष्मण को ऐसी मंत्र-विद्या की शिक्षा दी जिसे प्राप्तकर क्षुधा तथा श्रम का अनुभव कभी नहीं होता। गंगा के किनारे एक बड़ा जंगल था। वे जैसे ही वहाँ पहुँचे विश्वामित्र जी ने प्रभु राम से कहा कि ताड़का राक्षसी यहीं रहती है। ७८ यह राक्षसी मनमोहिनी है और बहुतों के शुभ कार्यों में विघ्न-बाधा पहुँचाती है। यह पापिन है। अतएव इसे मारने की कृपा करें। विश्वामित्र के वचनों को सुनकर रामचन्द्र जी ने धनुष को जोर से टंकारा, जिसे सुनकर वह शीघ्र ही आ जाय। ७९ धनुष की टंकार को सुनकर

यक्षी थी अघिकी सराप् परि तहाँ तेस्ती भयाकी थिई।
राम्ले मारिदिदा त श्राप् पनि टऱ्यो फेर् यक्षिको रूपलिई।।८०।।

श्रीराम्चन्द्रजिका वरीपरि घुमी प्रेम्ले नमस्कार् गरी।
स्वर्गमा गइ रामका वचनले बेस् एक् विमान्मा चढी।।
विश्वामित्र ऋषि बहुत् खुशि भया यो कार्य देख्या जसै।
जो सब् शास्त्र-रहस्य हो सब दिया ती रामलाई तसै।।८१।।

कामाश्रम् रमणीय थल् तहिं थियो एक्रात् तहाँ वास् गरी।
फेर् सिद्धाश्रममा गया रघुपती सब्लाइ मङ्गल् गरी।।
तेस् सिद्धाश्रममा अनेक् ऋषिथिया पूजा सबैले गऱ्या।
मारिच् फेरुन सुबाहु मार्नकन राम् ताहाँ अगाड़ी सऱ्या।।८२।।

विश्वामित्रजिलाइ भन्नु पनि भो मारिच् सुबाहू कहाँ।
बस्छन् यज्ञ ठुलो गरी लिनुभया ती आउँथ्या की यहाँ।।
भेटै आज भयेन मार्नु कसरी यो मर्जि सुन्या जसै।
विश्वामित्र ऋषी अरू ऋषि लिई होम् गर्न लाग्या तसै।।८३।।

ताड़का ज्योंही वहाँ आयी, प्रभु ने बाण छोड़ा। वह बाण जाकर उसके हृदय में लगा। वह तत्काल मृत्यु को प्राप्त हुई। यह राक्षसी पूर्व जन्म में यक्षिणी थी। शाप के कारण वह इस दशा को प्राप्त हुई थी। राम के हाथों मरने से उसे इस भयंकर शाप से भी मुक्ति मिल गई। ८० अपने राक्षसी जीवन से मुक्त होकर ताड़का ने प्रभु की परिक्रमा की और प्रेमपूर्वक प्रणाम किया। प्रभु की आज्ञा से वहाँ एक उत्तम विमान प्रस्तुत हुआ, जिस पर चढ़कर वह स्वर्ग लोक को गई। इस कार्य को देखकर विश्वामित्र उनसे अत्यधिक प्रसन्न हुए और जो भी शास्त्र-ज्ञान का रहस्य था उससे राम को परिचित कराया। ८१ इसके बाद उन्होंने कामाश्रम नामक एक रमणीक स्थान में एक रात विश्राम किया। तत्पश्चात् सबका कल्याण करके रघुनाथ जी सिद्धाश्रम को गए। उस सिद्धाश्रम में अनेक ऋषि थे, उन सब लोगों ने राम का सत्कार किया। फिर मारीच और सुबाहु को मारने के लिए राम अग्रसर हुए। ८२ विश्वामित्र से उन्होंने कहा कि मारीच और सुबाहु कहाँ रहते हैं। उनसे तो भेंट ही नहीं हुई। उन्हें मारा किस प्रकार जाए। उन्हें यहाँ तक बुलाने के लिए एक यज्ञ करना चाहिए। रामचन्द्र की ऐसी बातें सुनकर विश्वामित्र अन्य सभी ऋषियों को साथ लेकर यज्ञ करने लगे। ८३

दिन् मध्यान्ह भयो तसै वखतमा आया ति राक्षस् पनि
मान्र्याकाल्कनचाल्नपाइ अघिझैं होम् नाश् गरौंला भनी।
काहीं हाड़ खसाउँछन् कहिं रगत् यस्तै प्रकार्ले गरी
आया ती जब यज्ञमा प्रभुजिले हान्या अगाड़ी सरी।।८४।

मारिच्लाइ त बाणले जलधिका तिर्मा पुऱ्याई दिया।
अग्नीबाण धरी सुबाहुकन ता भस्मै गराई दिया।
तिन्का फौज् पनि ताहिं लक्ष्मणजिले मारी सक्याथ्या जसै।
खूशी भैकन पुष्पवृष्टि गरियो सब् देवताले तसैं।।८५।

विश्वामित्र बहुत् प्रसन्न हुनुभै राम्लाइ काख्मा लिया
भोजन् गर्न निमित्त राम्कन तहाँ मीठा फलादी दिया।
तीन्दिन् ताहिं मुकाम् गऱ्या प्रभुजिले वार्ता कथाको गरी।
चौथादिन् ऋषिले गऱ्या विनति एक् राम्का अगाड़ी सरी।।८६।

हेराम्! जाउँ जनक्जिका पुरमहाँ राजा जनक् छन् बड़ा।
गर्नन् आदर भक्तिले हजुरका साम्ने हुन्याछन् खड़ा।
ताहाँ एक् शिवको धनुष् पनि छ बेस् देखीयला त्यो पनि।
यो बिन्ती ऋषिको सुनेर रघुनाथ् खूशी भया बेस् भनी।।८७।

मध्याह्न का समय हुआ, तत्काल राक्षसगण वहाँ आये। षडयंत्र की चा को न समझकर सदा की भाँति हवनादि को नष्ट करने के लिए क अस्थियाँ कहीं रक्तादि गिराने लगे। जैसे ही वे यज्ञ में आये और विघ्न कार्य आरम्भ किया वैसे ही प्रभु ने आगे बढ़कर प्रहार किया। ८ मारीच को तो बाण द्वारा समुद्र के किनारे पहुँचा दिया और सुबाहु अग्निबाण से भस्म कर दिया। उनकी समस्त सेना भी लक्ष्मण द्वा मारी जा चुकी थी। तब हर्षोल्लास से पुलकित होकर देवताओं ने पु वर्षा की। ८५ विश्वामित्र ने अत्यन्त हर्षित होकर राम को गोद उठा लिया और भोजन हेतु उन्हें फलादि दिये। कथा-वार्ता करते हु प्रभु जी वहाँ तीन दिन रहे। चौथे दिन ऋषि ने राम के सम्मुख आ एक विनती की। ८६ हे राम! आप जनकपुर चलें, जहाँ एक प्रतापी राजा जनक जी हैं। वह आपको पाकर आपके सम्मुख उपस्थि होकर आपका बड़ा ही आदर करेंगे और भक्ति-भावना से भर उठेंगे वहाँ शिवजी का एक उत्तम धनुष भी है, आप उसे भी देख लें ऋषि की यह विनती सुनकर रघुनाथ जी बड़े ही प्रसन्न हुए। ८

विश्वामित्र र भाइ लक्ष्मण लिई श्रीराम् हिंड्याथ्या जसै ।
आश्रम् गौतमको पऱ्यो नजरमा गंगा-किनारमा तसै ॥
आश्रम्का नजिकै असल् फल सहित् फूल्को बघैंचा थियो ।
जन्तू नाम् त थियेन कोहि तपनी संभार् बिना त्यो थियो॥८८॥

मालुम् राम्कन क्या कहीं कमि थियो जो ता जगत्का धनी ।
सोध्या तैपनि यो असल् छ किन हो रित्तै बघैंचा भनी ॥
विश्वामित्र थिया सबै गुणनिपुण् विस्तार् सुनाया पनि ।
गौतम्को अघि बस्ति हो अब भन्या छैनन् यहाँ क्वै पनि॥८९॥

भार्या गौतमकी समान गुणकी भक्तै अहिल्या थिइन् ।
ब्रह्माकी ति त पुत्रि हुन् गुणि हुँदा सब् खुश् गराई लिइन् ॥
गौतम् कार्य-निमित्त दूर् जब गया रूप् गौतमैको सरी ।
धारी गौतम-पत्निका नजिकमा इन्द्रै अगाड़ी सरी॥९०॥

आई भोग विलास् गरेर खुशि भै फर्की गयाथ्या जसै ।
देख्ता गौतमलाइ गौतमजिले आश्चर्य मान्या तसै ॥
आफ्नू रूप दुरुस्त देखिकन खुप् गौतम् रिसाया पनि ।
सोध्या होस् तँ कउन्? बता नहिं भने हेर् भस्म गर्छू भनी॥९१॥

विश्वामित्र तथा भाई लक्ष्मण को साथ लिये श्रीराम जी जा रहे थे। उन्होंने गगा नदी के किनारे स्थित गौतम ऋषि का आश्रम देखा। आश्रम के निकट एक सुन्दर फूलों से भरा उद्यान देखा; सांभर (हरिण) के अतिरिक्त अन्य कोई भी पशु वहाँ न था। ८८ जगत्पति राम को क्या नहीं मालूम था। तिसपर भी उन्होंने इस सुनसान उद्यान के विषय में पूछ लेना ही उत्तम समझा। विश्वामित्र सर्वज्ञ थे, अतः उन्होंने विस्तारपूर्वक राम को बताया कि वहाँ कोई भी नहीं है। ८९ गौतम के ही समान गुणवती एवं भक्त उनकी पत्नी भी थी जिसका नाम अहिल्या था। वह तो ब्रह्मा की पुत्री थी जिसने अपने गुणों से सबको प्रसन्न किया। जब गौतम किसी कार्यवश कहीं दूर गए हुए थे उस समय इन्द्र गौतम का रूप धारण करके गौतम पत्नी के पास आया। ९० भोग-विलास के पश्चात् जैसे ही वह प्रसन्न होकर लौट रहा था वैसे ही गौतमी (अहिल्या) दूसरे गौतम को देखकर आश्चर्यचकित हो गई। अपने ही रूप को देखकर गौतम अत्यन्त क्रोधित हुए और इन्द्र से प्रश्न किया कि बताओ तुम कौन हो; अन्यथा अभी तुम्हें भस्म कर दूँगा। ९१ तब भयभीत होकर वह बोला कि हे ब्राह्मण! मैं इन्द्र

ब्राह्मण् ! इन्द्र म हूँ भनेर डरले विन्ती गऱ्याथ्या जसै ।
गौतम्ले पनि रीसमा परि दिया यस्तो सराप् पो तसै ॥
योनीमा अति लुब्ध आज भइछस् यत्रो बडो भै पनि ।
तेरा येहि शरीरमा अब हुनन् हज्जार योनी भनी॥९२॥

दीया येति सराप् र इन्द्र पनि फेर् आफ्ना स्थलैमा गया ।
पत्नीलाइ सराप् दियेर ऋषिले पत्थर् बनाई दिया ॥
जन्तु कुछ् नहुनन् यहाँ अब उपर् पत्थर् भई तैं रह्यास् ।
जैले श्रीरघुनाथ् चरण् धरिदिनन् तैले तँ मुक्ते भयास्॥९३॥

यस्तो सत्य सराप् पऱ्यो र पतिको ताहीं अहिल्या पनि ।
पृथ्वीमा गिरि गैगइन् अचल एक् पत्थर् स्वरूप्की बनी ॥
पादस्पर्श ति खोज्दछिन् हजुरको पाप् मुक्त होला भनी ।
तिन्लाई करुणा गरी हजुरले कुल्चीदिन्या हो पनी॥९४॥
यस्तो बिन्ति सुन्या जसै ति ऋषिका श्रीराम् तुरुन्तै गया ।
देख्ता पत्थर एक् ठुलो प्रभुजिले कुल्चीदिँदा त्यो भया ॥
सुन्दर् मूर्ति भई खड़ा भइगइन् ताहाँ अहल्या पनि ।
श्रीराम्चन्द्रजिले प्रणाम् पनि गऱ्या ई ब्राह्मणी हुन् भनी॥९५॥

देखिन् श्री रघुनाथलाइ र तहाँ खूशी अहिल्या भइन् ।
पूजा स्तुति गरेर राम्सित बिदा मागी पति थ्यैं गइन् ॥

हैं। इसे सुनकर क्रोधित गौतम ने भी शाप देदिया कि जब इतने महान् होकर भी तुम यौवन के वशीभूत हुए हो तो तुम्हारे इस शरीर में हज़ारों योनि-चिह्न उत्पन्न हो जायेंगे। ९२ इस प्रकार का शाप पाकर इन्द्र पुनः अपने लोक को चले गए। पत्नी अहिल्या को भी ऋषि ने शाप देकर पत्थर बना दिया। उन्होंने कहा कि यहाँ अब कोई जीव-जन्तु नहीं रहेगा; केवल तुम्हीं यहाँ अकेली पत्थर बनकर रहोगी। जब रघुनाथ अपने चरणों से तुम्हें स्पर्श करेंगे तभी तुम इस शाप से मुक्त होगी। ९३ पति के इस शाप से अहिल्या धरती पर गिर पड़ी और एक निश्चल पत्थर हो गई। वह शाप से मुक्ति पाने के लिए आपके चरणों का स्पर्श चाहती है, कृपा करके उसे अपने चरणों से स्पर्श कर दें। ९४ ऋषि की ऐसी विनती सुनकर श्रीराम तुरन्त वहाँ गये। रघुनाथ जी ने एक बड़ी शिला देखी और उसे अपने पाँव से स्पर्श किया। अहिल्या तुरन्त ही एक सुन्दर स्त्री बन कर खड़ी हो गई। ब्राह्मणी जान कर श्रीराम ने उसे प्रणाम

ाहाँ देखि चल्या र जल्दि रघुनाथ् गङ्गाजिका तीर् झऱ्या ।
ानीको प्रभुले जसै मन गऱ्या माझी चरण्मा पऱ्या।।९६।।
त्रामित्! ई दुइ पाउको अति असल् धूलो जसै ता पऱ्यो ।
ात्थर हो तपनी मनुष्य सरिको सुन्दर् स्वरूपै धऱ्यो ।।
तेस्तै पाठ यहाँ भयो पनि भन्या डुङ्गा स्वरूप् धर्दछन् ।
डुङ्गाले पनि रूप् धऱ्यो यदि भन्या हाम्राजहान्मर्दछन् ।।९७।।
तस्मात् पाउ पखालि वारि तिरमा हाम्रा शिरोपर् धऱ्यौ ।
येती बात गरयौ भने त तिमि ता गंगाजिका पार् तरयौ ।।
यस्तो विन्ति सुनी तहाँ प्रभुजिले पाऊ अगाड़ी दिया ।
माझीले जलले पखालि उहि जल् आफ्नाशिरोपर्लिया।।९८।।
यस्ता रित् सित नाउमा चढ़ि सहज् गंगाजिका पार् गया ।
श्याम्सुन्दर् रघुनाथ् बहुत् खुशि हुँदै दाखिल् जनक्पुर् भया ।।
विश्वामित्र ऋषी बहुत् खुशि हुँदै दूई कुमार् साथ् गरी ।
आया यस् पुरिमा भनी जब सुन्या दौड़याजनक् तेस् घरी।।९९।।
पुग्या प्रश्न गऱ्या सबै कुशलको पाऊमहाँ शिर् धरी ।
देख्या सुन्दर राज्कुमार् जनकले पूज्या ति ईश्वर् सरी ।।

भी किया । ९५ श्रीरघुनाथ जी को देखकर अहिल्या प्रसन्न हुई और पूजा-स्तुति के पश्चात् राम से आज्ञा प्राप्त करके पति के पास गई। वहाँ से चल कर रघुनाथ जी शीघ्र ही गंगा जी के किनारे पर पहुँचे। जैसे ही प्रभु ने तैर कर पार होने के लिए सोचा वैसे ही मल्लाह उनके चरणों में आ पड़ा। ९६ हे स्वामी! आपकी अति उत्तम चरण-रज लगते ही पत्थर भी मनुष्य-रूप धारण कर लेती है। उसी प्रकार यहाँ भी यदि मेरी नाव ने स्त्री का रूप धारण कर लिया तो हमारे समस्त परिवार नष्ट हो जायेंगे। ९८ इसलिए हे प्रभु! पहले मुझे अपने चरणों को पखारने दें और वह पवित्र चरणामृत हमें माथे से लगाने दें। तभी हम आपको गंगा के पार उतरने देंगे। यह विनती सुनकर प्रभु ने अपने पाँव आगे बढ़ा दिये और मल्लाहों ने उनके चरण पखार कर जल को माथे में लगाया। ९८ इस प्रकार विधिपूर्वक नाव में चढ़कर श्रीराम सरलता से गंगा जी के पार हो गये। श्याम-स्वरूप वाले रघुनाथ जी जनकपुर आये। विश्वामित्र के दोनों राजकुमारों सहित जनकपुर की नगरी में आने का समाचार सुनकर राजा जनक तुरन्त ही प्रसन्न होकर दौड़ पड़े। ९९ वहाँ पहुँच कर चरणों में झुककर कुशल-समाचार ज्ञात

पक्का गर्न निमित्त फेर् जनकले सोध्या ऋषिथ्यैं पनि ।
जान्याँ जान्न त चित्तले त भगवान् बिष्णूइनै हुन् भनी॥१००॥
ब्रह्मन्! पुत्र इ हुन् कउन् पुरुषका विस्तार् हवस् बेस् गरी ।
क्लेश्को लेश नराखि यस् बखतमा मेरो लग्या मन् हरी ॥
विश्वामित्रजिले सुन्या विनति यो राजा जनक्को जसै ।
यस्ता हुन् इ भनेर सब् ति ऋषिले विस्तार् बताया तसैं॥१०१॥
हे राजन्! दशरथ्जिका इ सुत हुन् नाम् राम लक्ष्मण् भनी ।
भन्छन् मानिसले गरी नसकिन्या गर्छन् पराक्रम् पनि ॥
मारिच्लाइ सुबाहुलाइ अरु ता को जित्न सक्न्या थिया ।
राम्ले मारिचलाइ फेंकि सहजै सूबाहु मारीदिया॥१०२॥
पत्थर् भै कति वर्षसम्म रहँदा गौतम् कि नारी थिइन् ।
पाऊले तहिं कुल्चँदा उठि गइन् जस्ता कि तस्ती भइन् ॥
याहाँ एक् शिवका धनुष् छ भनि यो सूनेर आया यहाँ ।
देखनाको मतलब् छ आज त यहां राखी रह्याछौ कहाँ॥१०३॥
चाँडो आज नजर् गराउ भनि यो विस्तार् गर्न्याथ्या जसै ।
मन्त्रीलाइ हुकूम् दिया जनकले लौ ल्याउ भन्न्या तसैं ॥

किया। सुन्दर राजकुमारों को देखकर राजा जनक ने उनकी ईश्वर सदृश पूजा की। अपने मन में निश्चय करने के लिए जनकजी ने ऋषि से पूछा कि क्या भगवान् विष्णु यही हैं। १०० ब्रह्मन्! ये किन महापुरुष के पुत्र हैं, विस्तारपूर्वक कहने की कृपा करें। इस समय मेरा मन क्लेश-रहित हरि के ध्यान में लगा हुआ है। विश्वामित्र ने राजा जनक की यह विनती सुनते ही श्रीराम के विषय में सविस्तार वर्णन किया। १०१ हे राजन्! ये दशरथ जी के पुत्र राम तथा लक्ष्मण हैं। लोग कहते हैं कि ये अभूतपूर्व पराक्रमी हैं, जो मनुष्य के लिए सम्भव नहीं। मारीच और सुबाहु को दूसरा कौन पराजित कर सकता था। राम ने ही मारीच को पटक कर सुबाहु का वध किया।१०२ इनके चरणों का ही प्रताप इतना है कि कितने ही वर्षों से शिला हुई गौतम की पत्नी को केवल इनका चरण-स्पर्श पाकर ही पुनः अपना पूर्व रूप प्राप्त हो गया। यहाँ एक शिव-धनुष है, ऐसा सुनकर उसे देखने की आकांक्षा से यहाँ आये हुए हैं; सो कृपया उसे दिखाने का कष्ट करें। १०३ ऐसा आग्रह सुनकर मंत्री को धनुष लाने की आज्ञा जनक ने दी। इसी बीच जनक ने ऋषि से कहा कि मैं अधिक क्या

यै बीच्मा ऋषिथ्यैं भन्या जनकले रामले उचालून् धनू ।
सीता छोरि म दिन्छु रामकन गरुन् बीहा बहुत् क्या भनूँ॥१०४॥

साँचा बाणि सुन्या र सोहि रितका बात्चित् गऱ्याथ्या जसै ।
पाँच् हज्जार् बिरले उचालि बलले ल्याया धनूषै तसै ॥
ताहाँ श्री रघुनाथ् उठेर नजिकै सोही धनूथ्यैं गया ।
वाम् हात्मा सहजै उचालि धनु त्यो राम् ले त लींदाभया॥१०५॥

ताँदो जल्दि चढाइ खैंचनुभयो ताहाँ धनुष्कै जसै ।
दूई टूक भई गिरचो उ धनु ता खुशी भया सब् तसै ॥
हर्षैंहर्ष भयो तसै बखतमा सारा जनक्पुर् भरी ।
आदर् खुप् प्रभुको गऱ्या जनकले आलिगनादी गरी॥१०६॥

सीताजी पनि रामका शिर-उपर् माला कनक्को धरी ।
छम्छम् पाउ गरी फिरिन् घरमहाँ मंगल् भयो तेस् घरी ॥
मालिक्हुन् दशरथ् खबर् दिनुपऱ्यो ती छन् अयोध्यामहाँ ।
जाउन् पत्र लिएर मानिसहरू चाँडो तिआउन् यहाँ॥१०७॥

यस्तो बिन्ति जनक्जिले पनि गऱ्या लेखेर विस्तार् दिया ।
विस्तार् पत्र लियेर दुत्हरु पनी जल्दी अयोध्या गया ॥

निवेदन करूँ । राम शिवधनुष को उठा लें तो मैं अपनी पुत्री सीता का विवाह राम से कर दूं । १०४ ज्योंही इन सत्य वचनों को सुना और यह बातचीत हुई । जैसे ही पांच हजार वीरों ने बल लगा कर धनुष लाकर रक्खा । उसी समय श्रीरघुनाथ जी उठकर उस धनुष के पास आये । बायें हाथ से राम ने सहज ही धनुष को उठा लिया । १०५ बाण चढ़ा कर जैसे ही धनुष को खींचा, वह दो टुकड़े होकर रह गया । यह देख कर सभी अत्यन्त हर्षित हुए । उस समय सम्पूर्ण जनकपुर में हर्षोल्लास छा गया । प्रभु को आलिगन में लेकर जनक जी ने उनका बड़ा ही आदर सत्कार किया । १०६ सीता जी ने भी राम के गले में स्वर्णमाला पहनाई और छम-छम करती हुई लौट गईं । दरबार में उत्सव हुआ । उनके स्वामी तो दशरथ जी हैं अतः उन्हें अयोध्या में यह शुभ समाचार भेजना चाहिए । पत्र लेकर तुरन्त जाओ और यह शुभसन्देश शीघ्र वहाँ पहुँचाओ, जिससे वह यहाँ शीघ्र आ जायें । १०७ इस प्रकार जनक जी ने यह विनती की और सविस्तार पत्र लिखकर दिया । दूत लोग भी पत्र लेकर तुरन्त अयोध्या चले गये । राजा दशरथ पत्र को सुनकर

यो विस्तार सुन्या जसै नृपतिले आनन्दमा ती पऱ्या ।
सब्ले जानु पऱ्यो जनक्पुरमहाँ भन्याहुकूम् योगऱ्या ।। १०८ ।।

जम्मा लश्कर भै गयो क्षणमहाँ जल्दी जनक्पुर् पुग्यो ।
क्या वर्णन्भिडको गरूँ त्यस बखत् खाली अयोध्या भयो ।।
यस्ता रीत्सित सब् गया जतिथिया सेना जनक्पुर् महाँ ।
दाखिल् भो दशरथ्जिको हुकुमले हर्षै बढ्यो खुप् तहाँ ।। १०९ ।।

ताहाँ श्री दशरथ्जिको जनकले आदर् बहुतै गऱ्या ।
लक्ष्मण्ले सँग राम् पनी तहिँ पिता- जीका चरण्मा पऱ्या ।।
बस्नालाई हवेलि सुन्दर जनक्- जीले खटाया जहाँ ।
खूशी भै दशरथ् पनी गइ बस्या तेसै हवेली महाँ ।। ११० ।।

सुन्दर् लग्न खटन् गऱ्या जनकले मंगल् सहर्मा चल्या ।
नाच् कीर्तन् सितका प्रकाश्कन हुन्या रात्मा चिराक् खुप् बल्या ।।
जो मण्डप् छ विवाहको तेस उपर् झुम्का हिराका झुल्या ।
मूगा मोति जुहार् जनक्पुरमहाँ घर्घर् सबैका झुल्या ।। १११ ।।

यस्तै रीत् गरि भो विवाह विधिले चारै जना भाइको ।
हर्षैले परिपूर्ण मन् हुन गयो सीताजिकी माइको ।।

आनन्दमग्न हो गये और सबको जनकपुर चलने की आज्ञा दी । १०८ दशरथ जी की आज्ञा पाकर क्षण भर में ही सेना की सेना एकत्र हो गई और जनकपुर चल पड़ी । भीड़ का वर्णन तो किस प्रकार किया जाये! यही कहना पर्याप्त होगा कि पूरी अयोध्या ही खाली हो गई थी । इस प्रकार अपने सब दल सहित दशरथ जी जनकपुर पहुँचे और दशरथ जी की आज्ञा से सभी लोग हर्षित होकर अन्तःपुर में जा कर विराजमान हुए ।१०९ वहाँ जनक जी ने श्री दशरथ जी का भव्य स्वागत-सत्कार किया । लक्ष्मण के साथ राम ने भी पिता के चरणों में झुककर प्रणाम किया । श्री दशरथ जी के ठहरने के लिए जनक जी ने बहुत ही सुन्दर महल का प्रबन्ध करवाया, जहाँ उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक निवास किया । ११० जनक जी ने उत्तम मुहूर्त्त निकलवाया । नगर में मंगलगान, उत्सव, कीर्त्तन तथा नृत्य आदि का सुन्दर आयोजन हुआ । रात्रि में दीपक जलाकर सजाया गया । विवाह-मण्डप में हीरे-मोती-मूँगा तथा जवाहरों की झालरें लटकाई गई । नगर के घरों-घरों को मालाओं से सजाया गया । १११ इस प्रकार चारों भाइयों का विधिवत विवाह सम्पन्न

राम् लक्ष्मण् दुइलाइ ता जनकले आफ्ना ति छोरी दिया ।
भाईका त भरत्जिलाइ र ति वीर् शत्रुघ्नलाई दिया॥११२॥
सीता पत्नि भइन् रमापतिकि ता लक्ष्मण्जिकी उर्मिला ।
पत्नी हुन् श्रुतकीर्ति ता भरतकी शत्रुघ्नकी माण्डवी ॥
जस्तै आफु थिया अनन्त गुणका चौधै भुवन्का धनी ।
अभ्यन्तर् मनले विचार गरदा तस्तै ति पत्नी पनि॥११३॥
विश्वामित्र वशिष्ठ दुइ ऋषिथ्यै यस्ती सिता हुन् भनी ।
उत्पत्ती अधिको सबै जनकले विस्तार् बताया पनि ॥
जान्थ्यौं भूमि पवित्र गर्न भनि एक् क्वै यज्ञ गर्दामहाँ ।
जोत्तामा त सिताजि निस्किन गइन् आश्चर्यमान्याँ तहाँ॥११४॥
पाल्याँ छोरि भनेर नाम् पनि असल् सीताजि राखीदियाँ ।
गर्थिन् बालकमा अनेक् तरहका लीला म खूशी थियाँ ॥
राम् नाम्ले दशरथ्जिका सुत भई खेल्छन् अयोध्यामहाँ ।
तिम्री पुत्रि सिता उनै प्रभुजिकी माया ति आइन् यहाँ॥११५॥
यो लीला छ बुझी सिताकन तिनै राम्लाइ दीया भनी ।
नारद्जी उठि गै गया, उहि सुनी याद् भो मलाई पनि ॥

कर सीता जी की माता का मन हर्ष से भर गया। राम और लक्ष्मण को तो जनक ने अपनी ही पुत्रियों को विवाहा और अपनी भतीजियों को वीर भरत तथा शत्रुघ्न को समर्पित किया। ११२ सीता राम की, उर्मिला लक्ष्मण की, माण्डवी भरत की तथा श्रुतिकीर्ति शत्रुघ्न की पत्नी हुई। जैसे वे स्वयं अनन्त गुणों से युक्त चौदह भुवन के स्वामी थे उसी प्रकार अन्तर मन से विचार करने से पत्नियाँ भी वैसी ही थीं। ११३ ऋषि विश्वामित्र और वशिष्ठ दोनों को सीता जी की उत्पत्ति के विषय में सविस्तार बताया गया। एक यज्ञ हेतु भूमि को पवित्र करने के लिए जोतते समय सीता जी प्रकट हुई, जिसे देख सभी आश्चर्य-चकित रह गये। ११४ पुत्री-रूप में ग्रहण करके इन्हें पाला और नाम भी सीता रख दिया। बाल्यावस्था में ये अनेक प्रकार की लीलाएँ करती थीं जिसे देख कर मैं बड़ा प्रसन्न होता था। उधर राम दशरथ-पुत्र बनकर अयोध्या में खेलते थे। आपकी पुत्रबधू सीता जो यहाँ आ गई यह उसी प्रभु की शक्ति है। ११५ सीता की इन सब लीलाओं को समझ कर ही राम से उसका विवाह कर दिया। ऐसा [एक दिन] कह कर नारद जी उठकर चले गए। यही सुनकर मुझे भी स्मरण हुआ और सोचा कि किस

कुन् पाठ्ले अब रामलाइ म सिता पारूँ विचार् यो गर्‍याँ ।
थीयो यो शिवको धनुष् यहि यसै- मा यो प्रतिज्ञागर्‍याँ॥११६॥
ताँदो यस् धनुको चढाउन जउन् वीर्ले त सक्ला यहाँ ।
सीता छोरि दिन्याछु तेस्कन फिका होवैन यस् बात्महाँ ॥
जानुन् सब् विरले भनीकन गर्‍याँ यस्तो प्रतिज्ञा जसै ।
यो सूनीकन देशका विरहरू आया तुरुन्तै तसै॥११७॥
को सक्थ्यो धनु त्यो उठाउन बिना श्रीराम् अगाडी सरी ।
हिक्मत् हारि सबै घरै फिरिगया दर्शन् धनूको गरी ॥
राम्ले पूर्ण गराइबक्सनुभयो मेरो प्रतिज्ञा पनि ।
यो चीन्ह्या पनि सब् कृपा चरणले गर्दा भयाको भनी॥११८॥
विश्वामित्रजिथ्यैं पनी जनकले बिन्ती अगाडी गरी ।
सीतानाथ् रघुनाथको स्तुति गर्‍या आनन्दमा ती परी ॥
दाईजो सय कोटि दौलत सहित् बेस् बेस् अयुत् रथ दिया ।
घोडा ता सय लाख् दिया छ सय ता खुप् मत्तहात्ती थिया॥११९॥
पैदल् लश्कर एक लाख् र सय तीन् कोटी दियाथ्या जसै ।
पूजा फेरि वशिष्ठको पनि गर्‍या भारी डबल्ले तसै ॥
पूजा ताहि भरत्जिको पनि भयो लक्ष्मण्हरूको पनि ।
इच्छा भो रघुनाथको अब फिरौं जाऊँअयोध्या भनी॥१२०॥

विधि से अब मैं राम का सम्बन्ध सीता से करूँ । इसी कारण शिव के इस धनुष की ऐसी [कठिन] प्रतिज्ञा रक्खी । ११६ जो वीर इस धनुष की प्रत्यंचा चढ़ा सकेगा उसी के साथ मैं अपनी पुत्री सीता का विवाह कर दूँगा । मेरे इस वचन में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आयेगा । जनक की इस प्रतिज्ञा को सुनकर देश-विदेश के वीर वहाँ आए । ११७ श्रीराम के अतिरिक्त और कौन आगे बढ़कर उस धनुष को उठा सकता था । सभी वीर अपना साहस खोकर शिव धनुष का केवल दर्शन करके ही अपने-अपने देश लौट गए । मेरी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने की कृपा केवल राम ने की । यह भी जान लिया कि ये सब इन्हीं चरणों की कृपा से हुआ है । ११८ जनक ने आगे बढ़कर विश्वामित्र से विनती की, आनन्दमग्न होकर सीतापति श्रीरघुनाथ की स्तुति की, और दहेज में एक पद्म धन सहित दस-हजार उत्तम रथ, एक करोड़ घोड़े और छः सौ मत्त हाथी दिए । ११९ एक लाख पैदल सेना तथा तीन सौ सेविकाएँ देकर पुनः वशिष्ठ एवं भरत तथा लक्ष्मण की भी भव्य पूजा की ।

जानाको मतलब् बुझी जनकजी रामको चरणमा पऱ्या ।
खुशी मन् सबको गराइ बहुतै बीदा जनक्ले गऱ्या ॥
सीताजी महतारिका अगि गईं अलिङ्गनादी गरी ।
लागिन् रूनर सोहि सूनि सबका आँसू खसे बर्बरी॥१२१॥

सीताजीकन अर्ति यो पनि दिया सासू ससूरा सरी ।
आर्को छैन बडो यही बुझि गऱ्या तिन्को टहल् बेस् गरी ॥
स्त्रीको धर्म पतिव्रता हुनु ठुलो जानेर हूनू भनी ।
अर्ती येति दिया र तेस् बखतमा बीदा भया ती पनि॥१२२॥

यै बीचमा नगरा बज्या प्रभुजिका भेरी मृदङ्गा पनि ।
स्वर्गमा पनि हर्ष भो प्रभु गया फेरी अयोध्या भनी ॥
रामको लश्कर बाह्र कोश् जनकपुर्- देखी जसै ता गयो ।
सब्का चित्तमहाँ बडो भय दिन्या उल्का बहुतै भयो॥१२३॥

यस् पृथ्वीतलका ति क्षत्रिहरुको ठूलो विनाशै गरी ।
आया तेस् बिचमा तहाँ परशुराम् उल्का भयो जुन् घरी ॥
पृथ्वी कम्प भइन् तसै बखतमा हा हा सबैमा परी ।
राजाका मनमा विचार् यहि पऱ्यो छोरा बचुन् क्या गरी॥१२४॥

अब श्रीरघुनाथ की इच्छा अयोध्या लौटने की हुई। १२० सबको अत्यन्त प्रसन्न करके जनक ने विदाई दी। सीता जी की माता आगे बढ़कर पुत्री को आलिंगन में भर कर रोने लगीं। यह देख सभी की आँखों से अश्रु प्रवाहित होने लगे। १२१ सीता जी को यह सीख भी दी कि सास-ससुर के समान महान् और कोई नहीं। अतः उनकी सेवा-टहल भली प्रकार करना। पतिव्रता स्त्री का मूल धर्म तथा उसका पालन आदि उपदेश देने के पश्चात् उन्होंने सीता को विदा किया। १२२ इसी समय प्रभु [के कटक का] नगाड़ा बज उठा और यह जानकर कि प्रभु (राम) पुनः अयोध्या चले गए, स्वर्ग में भी मृदंगादि बज उठे। जनकपुर से बारह कोस ही लम्बे राम का जलूस गया था कि सबके मन में एक भयानक विघ्न उत्पन्न होने की आशंका हुई। १२३ इस पृथ्वी-तल पर तमाम क्षत्रियों का विनाश करने वाले परशुराम का उसी समय आगमन हुआ। उस समय पृथ्वी काँप उठी और चहुँ ओर हाहाकार मच गया, सभी भयभीत हो गए। राजा दशरथ मन में सोचने लगे कि पुत्र की रक्षा किस प्रकार हो। १२४ इस प्रकार विचलित

यस्तो चञ्चल चित्तले परशुराम्- का पाउमा झट् पऱ्या ।
मेरा पुत्र बचून् प्रभो परशुराम्! भन्न्या इ बिन्ती गऱ्या ॥
यस्तो बिन्ति पनी अनादर गरी कालाग्नि जस्ता भया ।
रामको गर्व हरूँ भनी परशुराम् रामकै अगाडी गया॥१२५॥

कस्को पुत्र तँ होस् बता मकन लौ जाबो पुरानू धनू ।
भाँच्तैमा अति गर्व भो तँकन ता धेरै कुरा क्या भनूँ॥
यो ता हो हरिको धनू बिर भया ताँदो यसैमा चढा ।
भन्दै खुप् रिसले रह्या परशुराम् रामकै अगाडी खडा॥१२६॥

ताँदो आज चढाउँछस् त यसमा संग्राम् तँथ्यैं गर्दछु ।
सक्तैनस् तब हेर् म राख्तिन सबै- को प्राण् सहज् हर्दछु ॥
यस्ता क्रूर वचन् गरी परशुराम् कालाग्नि झैं रूप् धऱ्या ।
पृथ्वी कम्प गराइ लोकहरुको सम्पूर्ण सातो हऱ्या॥१२७॥

यस्तो क्रूर वचन् सुनेर रघुनाथ् क्रोध्ले अगाडी सरी ।
खोसी लीनुभयो धनुष परशुराम्- को त्यो बलैले गरी ॥
ताँदो जल्दि चढाइ बाण् पनि तहाँ लीनूभयेथ्यो जसै ।
ठूलो बल् रघुनाथको बुझि सबै खूशी भयो लोक् तसै॥१२८॥

होकर दशरथ ने परशुराम के चरणों में पड़ कर विनती की कि हे प्रभु परशुराम ! मेरे पुत्र बच जायें। ऐसी विनय को भी ठुकरा कर कालाग्नि की भाँति क्रोधित हो, राम के बल के गर्व की परीक्षा लेने के लिए परशुराम उनके सम्मुख गए। १२६ तुम किसके पुत्र हो ? मुझे बताओ। एक साधारण पुराना धनुष तोड़ने से ही तुम पर अत्यन्त गर्व छा गया है; और ज्यादा क्या कहूँ। यह तो हरि का धनुष है; यदि वीर हो तो इसकी प्रत्यंचा चढ़ाओ। यह कहते हुए परशुराम अत्यन्त क्रोधित होकर राम के ही सम्मुख आकर खड़े हो गए। १२६ यदि आज तू इसमें प्रत्यंचा चढ़ा देता है तो तुझसे मैं युद्ध करूँगा और यदि चढ़ा नहीं सकेगा तो किसी को मैं जीवित नहीं छोड़ूँगा। सहज ही सब का बध कर डालूँगा। ऐसे क्रूर वचनों का उच्चारण करके परशुराम ने कालाग्नि का रूप धारण किया। पृथ्वी को कम्पित कर सम्पूर्ण मानवों को भयभीत कर दिया। १२७ ऐसे क्रूर वचनों को सुनकर श्रीरघुनाथ जी क्रोधित हो कर आगे बढ़े और परशुराम के धनुष को बलपूर्वक छीन लिया। शीघ्रता से जैसे ही प्रत्यंचा चढ़ाकर उन्होंने बाण भी ले लिए, वैसे ही श्रीरघुनाथ जी की शक्ति को समझकर सब लोग अत्यन्त हर्षित

हूकुम् श्री रघुनाथको परशुराम्- लाई भयो यो तहाँ।
तारो आज बताउ हान्छु अहिले ब्राह्मण् म हानूँ कहाँ॥
चाँडो उत्तर देउ यस् बखतमा यस्लाइ लौ हान् भनी।
तारो क्यै नदिया त काट्छु अहिले तिम्रा इ गोडा पनि॥१२९॥

हूकुम् येति गरेर तेज् परशुराम्- को खैंचनूभो जसैं।
चिन्ह्या श्रीरघुनाथलाइ अधिको वृत्तान्त सम्झ्या तसैं॥
बिन्ती येति तहाँ गर्‍या पनि हरे चिन्ह्याँ जगन्नाथ् भनी।
जस्को अंश मिल्यो र केहि भगवान् यस्तो भयाँ मै पनी॥१३०॥

पापी भो अति कीर्तवीर्य अब ता यस्लाइ मार्छू भनी।
बालक् पो म थियाँ गर्‍याँ हजुरको ठूलो तपस्या पनी॥
यस्तो वर् खुशि भै मलाइ दिनुभो शक्ती समेतै गरी।
इच्छा पूर्ण हुन्याछ जाउ अब ता क्यै शक्ति मेरो धरी॥१३१॥

पैल्हे मार र कार्तवीर्यकन फेर् सब् क्षत्रिको नाश् पनी।
एक्काईस बखत् गर्‍या प्रभुजिको हूकुम् छ यस्तै भनी॥
क्षत्री शून्य भयाकि पृथ्वि तिमिले कश्यप्जि लाई दिया।
येती कर्म गरी सकेर अधिको सेखी पुऱ्याई लिया॥१३२॥

हुए। १२८ परशुराम को श्रीरघुनाथ की यह आज्ञा हुई कि हे ब्राह्मण! इसी समय कोई लक्ष्य बताओ जिस पर मैं प्रहार करूँ। शीघ्रता से उत्तर दो कि इस समय इस पर प्रहार करो, अन्यथा मैं तुम्हारे ये पाँव काट डालूँगा। १२९ यह आज्ञा देकर जैसे ही परशुराम की शक्ति भगवान् ने खींच ली, वैसे ही उन्हें (परशुराम को) पूर्वजन्म की बात स्मरण हो आई और उन्होंने श्रीरघुनाथ को पहिचान लिया। उसी समय इस प्रकार विनती की—हे हरि! मैंने पहिचान लिया कि आप वही जगन्नाथ हैं जिनका कुछ अंश पाकर मेरा भी अवतार हुआ है। १३० कार्तवीर्य अत्यन्त पापी हो गया है। अब मैं इसका बध करूँगा, यह निश्चय करके मैंने बालपन में ही आपकी घोर तपस्या की। उससे प्रसन्न होकर आपने मुझे शक्ति सहित ऐसा वर दिया कि अब जाओ, मेरी कुछ शक्ति को धारण करने से तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी। १३१ सर्वप्रथम कार्तवीर्य का वध करो, तत्पश्चात् सब क्षत्रियों का नाश करो। मेरी ऐसी आज्ञा है। तुम क्षत्रियों पर इक्कीस बार (प्रहार) करोगे। क्षत्रियों से रिक्त होते ही पृथ्वी को पुनः कश्यप जी को अर्पित कर दोगे। इतने कर्मों को पूरा कर अपनी अभिलाषाओं को पूर्ण करोगे। १३२ त्रेतायुग में

तामा अवतार् लिन्याछु नरमा राम्नाम् जगत्मा धरी ।
भेट् होला तिमिथ्यै उही बखतमा यो शक्ति ल्यूँला हरी ॥
ताहाँ देखि तपै गरेर रहनू ब्रह्माजिका दिन् भरी ।
येती अर्ति मलाइ दिईकन गया बैकुण्ठ धाम्मा हरि॥१३३॥

मैले काम् पनि सो सबै गरिसक्याँ राम्लाइ भेटयाँ पनी ।
मेरो शक्ति हजूरले हरि लिंदा चिन्ह्याँ प्रभू हुन् भनी ॥
मेरो जन्म सफल् भयो सहजमा पायाँ परात्मा पनी ।
बुझ्याँ तत्त्व पनी सबै हजुरको पात्रै कृपाको बनी॥१३४॥

जो छन् भक्त हजूरका ति सँगको सत्सङ्ग मेरो हवस् ।
यो भक्ति दृढ भै प्रभू ! हजुरका येही चरण्मा रहोस् ॥
येती बिन्ति तहाँ गरी सकल पाप् पुण्यै समर्पण् गऱ्या ।
इच्छित् वर् प्रभुले दिंदा परशुराम् आनन्दमा ती पऱ्या॥१३५॥

ताहाँ श्रीरघुनाथका वरिपरी घूमी नमस्कार् गरी ।
मर्जीले ति गया महेन्द्र गिरिमा मन् राम्चरण्मा धरी ॥
देख्या तेज् दशरथ्जिले र सुतको हर्षाश्रुधारा धरी ।
प्रेम्का सागरमा तहाँ डुबिगया आलिङ्गनादी गरी॥१३६॥

येती काम् गरि राम् गया सहजमा पुग्या अयोध्या महाँ ।
सीतालाइ लियेर राज्य सुख भोग् राम्ले गऱ्या क्यै तहाँ ॥

राम के नाम से मनुष्य होकर मैं जन्म लूँगा। उसी समय तुमसे भेंट होगी। यह शक्ति पुनः हरण होने के पश्चात् दिन भर ब्रह्मा का ध्यान करते रहना। मुझे इस प्रकार शिक्षा देकर भगवान् हरि बैकुण्ठ लोक को चले गए। १३३ मैंने उन सब कार्यों को पूर्ण किया। राम से भेंट भी हो गई। आपसे मेरी शक्ति हरण किये जाने पर आप को प्रभु जानकर पहिचाना। मेरा जन्म सफल हुआ। सहज ही परमात्मा को भी पा लिया। आपका कृपा-पात्र बन उस सभी तत्व-ज्ञान को भी समझ लिया। १३४ आपके जो भक्त जन हैं उनसे मेरी संगति रहे। आपके इन्हीं चरणों में यह भक्ति दृढ़ रहे। इतनी बिनती करके पाप एवं पुण्य वहीं समर्पित कर दिया, तथा प्रभु से वांछित वर पाकर परशुराम आनन्दमग्न हो गये। १३५ श्रीरघुनाथ जी के चारों ओर परिक्रमा कर परशुराम ने नमस्कार किया। राम के चरणों में अपने मन को अर्पित कर वे प्रसन्नता-पूर्वक महेन्द्र पर्वत पर चले गये। पुत्र राम की दिव्य ज्योति को देखकर नेत्रों में हर्षाश्रु भरकर प्रेम-सागर में मग्न दशरथ

क्यैंदिन् भानिज हुन् भरत्‌कन यहीं ल्याऊँ घरैमा भनी ।
भानिज्‌लाइ लिना निमित्त खुशिले आया युधाजित्‌पनि।।१३७।।
बीदा श्रीदशरथ्‌जिले पनि दिया बीदा मिलेथ्यो जसै ।
एक् शत्रुघ्न लिई भरत्‌जि त गया मामा कहाँ पो तसै ।।
आया राम बिहा गरेर पुरिमा जस्सै उठेथ्यो खबर् ।
सारा रैयतको प्रसन्न मन भो हुन्थ्यो खुशी क्या अवर्।।१३८।।
सीताराम् अघि तप् गरिन् र त यहाँ छोरा बुहारी भया ।
कौशल्याकन ता मिल्यो अदितिको शोभा सबै ताप् गया ।।
सीताराम् पनि लोकमा सकलको आनन्द मङ्गल् गरी ।
चेष्टा मानिसको गरीकन रह्या त्रैलोक्यका नाथ् हरि।।१३९।।

बालकाण्ड समाप्त

जी ने उन्हें आलिंगन में भर लिया । १३६ इतना कार्य समाप्त कर राम सहज ही अयोध्या पहुँच गये । राम ने सीता को लेकर राजसी सुख भोग करने लगे । भरत जी के मामा के मन में भाञ्जे को अपने घर ले जाने की इच्छा हुई और वे उन्हें लिवाने के लिए आये । १३७ श्री दशरथ जी ने सहर्ष विदा दी और भरत शत्रुघ्न को साथ लेकर मामा के यहाँ चले गये । राम के विवाह करके नगर में आने की सूचना जैसे ही प्राप्त हुई सारी प्रजा आनन्द से विभोर हो उठी । १३८ पूर्वजन्म में किये तप के प्रभाव से राम और सीता का पुत्र तथा वधू के रूप में यहाँ अवतार हुआ । माता कौसल्या को सूर्य के समान शोभा प्राप्त हुई और सभी दुःख व चिंताओं का नाश हुआ । सीता-राम ने भी संसार को आनन्द-मंगल प्रदान किया । त्रिलोकीनाथ मानव-रूप में मानवोचित कार्यों में रत रहे । १३९

अयोध्याकाण्ड

एकान्त स्थलमा सितापति थिया सीता हजुर्मा रही ।
हात्मा चामर ली प्रभूकन तहाँ हाँक्थिन् समीप्मा गई ॥
आकाश् मार्ग गरी बहुत् खुशि हुँदै नारद्जि ताहीं गया ।
नारद्जीकन दण्डवत् गरि तहाँ राम्जी बहुत् खुश् भया ॥१॥
संसारी म थियाँ बडो हुन गयाँ दर्शन् मिलेथ्यो जसै ।
यो भाग्योदय हो बुझ्याँ पनि यहाँ दर्शन् मिल्याको उसै ॥
मैले गर्नु छ काम् कउन् हजुरको चांडो उ आज्ञा हवस् ।
त्यो काम् सिद्ध गराउँला हजुरको आनन्द मन्मा रहोस्॥२॥
यस्ता बात् प्रभुका सुनीकन जवाफ् सोही बमोजिम् दिया ।
नारद्ले बहुतै गऱ्या स्तुति तहाँ राम्लाइ मन्मा लिया ॥
बिन्ती गर्नु कुरो थियो मनविषे बिन्ती गऱ्या त्यो पनि ।
ब्रह्माको बिनती लिई हजुरमा आई रह्याँछू भनी ॥३॥
भूको भार म दुष्ट मारि हरुँला जान्छू अयोध्यामहाँ ।
भन्न्या येति वचन् गरीकन हजुर् पाल्नू भयेथ्यो यहाँ ॥

एकान्त स्थान में सीतापति श्रीराम बैठे थे। प्रभु के निकट जा कर सीता जी भी हाथ में चँवर ले कर डुला रही थीं। आकाश-मार्ग से होते हुए नारद जी ने अत्यन्त हर्षित होते हुए उन्हें दण्डवत किया। १ मैं एक तुक्छ सांसारिक प्राणी हूँ। आपके दर्शनों से ही इतना महान् हुआ हूँ। मैं यह समझ गया हूँ कि आपके दर्शनों से ही मुझे ऐसा भाग्योदय प्राप्त हुआ है। शीघ्र आज्ञा करें। श्रीमन् का जो भी कार्य करने को है, मैं शीघ्र ही उन सब को सिद्ध करूँगा; जिससे आपका मन प्रसन्न रहे। २ नारद जी ने भी राम की स्तुति मन में ही की और उनकी ऐसी बातों को सुन कर [राम ने] उत्तर भी उसी प्रकार दिया। सर्वभाँति मन ही मन विनती करते हुए प्रन्होंने कहा कि ब्रह्मा जी की एक प्रार्थना को लेकर आपके पास आया हूँ। ३ आप यह कह कर पधारे थे कि अयोध्या जा कर दुष्टों को मार कर पृथ्वी को भार से मुक्त करूँगा। परन्तु अब तो राजा दशरथ की इच्छा आपको राजगद्दी प्रदान करने की हुई

अयोध्याकाण्ड

एकान्त स्थलमा सितापति थिया सीता हजुर्मा रही ।
हात्मा चामर ली प्रभूकन तहाँ हाँक्थिन् समीप्मा गई ॥
आकाश् मार्ग गरी बहुत् खुशि हुँदै नारद्जि ताहीं गया ।
नारद्जीकन दण्डवत् गरि तहाँ राम्जी बहुत् खुश् भया ॥१॥

संसारी म थियाँ बडो हुन गयाँ दर्शन् मिलेथ्यो जसै ।
यो भाग्योदय हो बुझ्याँ पनि यहाँ दर्शन् मिल्याको उसै ॥
मैले गर्नु छ काम् कउन् हजुरको चांडो उ आज्ञा हवस् ।
त्यो काम् सिद्ध गराउँला हजुरको आनन्द मन्मा रहोस्॥२॥

यस्ता बात् प्रभुका सुनीकन जवाफ् सोही बमोजिम् दिया ।
नारद्ले बहुतै गऱ्या स्तुति तहाँ राम्लाइ मन्मा लिया ॥
बिन्ती गर्नु कुरो थियो मनविषे बिन्ती गऱ्या त्यो पनि ।
ब्रह्माको बिनती लिई हजुरमा आई रह्याँछू भनी ॥३॥

भूको भार म दुष्ट मारि हरुँला जान्छू अयोध्यामहाँ ।
भन्न्या येति वचन् गरीकन हजुर् पाल्नू भयेथ्यो यहाँ ॥

एकान्त स्थान में सीतापति श्रीराम बैठे थे । प्रभु के निकट जा कर सीता जी भी हाथ में चँवर ले कर डुला रही थीं । आकाश-मार्ग से होते हुए नारद जी ने अत्यन्त हर्षित होते हुए उन्हें दण्डवत किया । १ मैं एक तुच्छ सांसारिक प्राणी हूँ । आपके दर्शनों से ही इतना महान् हुआ हूँ । मैं यह समझ गया हूँ कि आपके दर्शनों से ही मुझे ऐसा भाग्योदय प्राप्त हुआ है । शीघ्र आज्ञा करें । श्रीमन् का जो भी कार्य करने को है, मैं शीघ्र ही उन सब को सिद्ध करूँगा; जिससे आपका मन प्रसन्न रहे । २ नारद जी ने भी राम की स्तुति मन में ही की और उनकी ऐसी बातों को सुन कर [राम ने] उत्तर भी उसी प्रकार दिया । सर्वभाँति मन ही मन विनती करते हुए प्रन्होंने कहा कि ब्रह्मा जी की एक प्रार्थना को लेकर आपके पास आया हूँ । ३ आप यह कह कर पधारे थे कि अयोध्या जा कर दुष्टों को मार कर पृथ्वी को भार से मुक्त करूँगा । परन्तु अब तो राजा दशरथ की इच्छा आपको राजगद्दी प्रदान करने की हुई

हे त्रैलोक्यपते ! गुरू हुन त हुँ तिम्रो म क्या हुँ गुरु ।
इन्का हुन् इ गुरू भनेर इ सबै भन्छन् भनुन् लौ बरु॥८॥

तिम्रो दर्शन पाउँला भनी यहाँ प्रोहित् भयाकै म हूँ ।
गुह्यै खल्छ भनेर डर् हुन गयो धेरै कुरा क्या कहूँ ॥
खोल्न्या छैन म गुह्य चुप्प रहुँला सब् जान्दछू तापनि ।
जानी जानि म बिन्ति गर्न अहिले आयां हजुर्मा पनि ॥९॥

भोली हुन्छ तिलक् हजुर्कन यहाँ सामग्रि जम्मा भयो ।
पृथ्वीमा सुकला हवस् हजुरको सब् शास्त्रले भन्छ यो ॥
सब् इन्द्रीय जितेर आज उपवास् गर्नू सिताले सँगै ।
आज्ञा पाउँ म जान्छु काम् छ बहुतै सब्काम् विचार्छू म गैं॥१०॥

यस्तो बिन्ति गरी बशिष्ठ गुरु फेर् जस्सै गयाथ्या पनि ।
राम्ले लक्ष्मणथ्यै भन्या मतिमिलाइ काम् गर्न द्यूला भनी ॥
छैनन् भाइ भरत् पनी त तिनका खातिर् छ मेरी दया ।
कौशल्या सुनि खुश् हुनिन् भनितजो सम्चार् बताउँदै गया॥११॥

राजाले त खतम् गन्या दिनु भनी क्या गर्दछिन् कैकेयी ।
यस्मा विघ्न कदापि पर्न नदिउन् लक्ष्मी र दुर्गा भई ॥

तो मैं तुम्हारा गुरु हूँ ही, पर मैं भला क्या गुरु हूँ ! हाँ, इनका गुरु अवश्य हूँ जो ये सब [मुझे गुरु] कहते हैं। ८ तुम्हारे दर्शन पाने के लिए मैं यहाँ पुरोहित हुआ हूँ। कहीं रहस्योद्‌घाटन न हो जाये इसका भय हुआ है और अधिक क्या बताऊँ। मैं सब कुछ जानते हुए भी रहस्योद्‌घाटन नहीं करूँगा। चुप ही रहूँगा। सब कुछ जान कर भी मैं अभी आपकी शरण में विनती करने आया हूँ। ९ कल आपका तिलक होगा। सब सामग्री एकत्रित हो गई है। भूमि पर ही सोने की कृपा करें, जैसा कि सभी शास्त्र कहते हैं। सब इंद्रियों को जीत कर आज सीता जी के साथ ही उपवास करने की कृपा करें। आज्ञा दीजिए। अत्यधिक कार्य है, जाकर कार्यों के विषय में विचार करता हूँ। १० ऐसी विनती कर गुरु वशिष्ठ जैसे ही चले गये, राम ने लक्ष्मण से सलाह की और कार्यभार सौंपा। भाई भरत भी जिनके प्रति मेरा अत्यधिक प्रेम है, यहाँ मौजूद नहीं हैं। कौशल्या माता भी सुनकर प्रसन्न होंगी, और उन्हें समाचार सुनाया। ११ राजा ने तो समाचार समाप्त करते हुये कहा, कैकेयी क्या करती है। लक्ष्मी और भगवती दुर्गा इसमें कदापि विघ्न न होने दें।

कौशल्या पनि यो विचार् गरि तहाँ गर्थिन् पुजा देविको ।
द्यौताका मनमा भन्या ठहरियो काम् विघ्न गर्नूनिको॥१२॥
वाणी गै तिमी विघ्न पारिकन आउ ती मन्थरा कैकेयी ।
द्वी स्त्रीका घटमा पसेर तिमिले काम् सिद्ध लाऊ गई ॥
द्यौताका इ वचन् सुनेर झटपट् तेस् मन्थरामा पसिन् ।
कैकेयीकन खुप् भुलाउन भनी फेर् कैकेयीमा पसिन्॥१३॥
वाणीका वशमा पऱ्याकि छँदि ती जाहाँ थिइन् कैकेयी ।
काम् बित्ला भनि चट्पटाइ तहिंझट् त्यो मन्थरा गैगई ॥
नाना छल् गरि ठिक्क पारिकन सब् वृत्तान्त विस्तार् भनी ।
दुई वर्छन् तिमि मागिल्यौ भनि ठुलो सूचन् गरी यो पनि॥१४॥
वाणीले ति भुलाइयाकि छँदि लौ भन्दी भइन् कैकयी ।
राम्लाई वनवास् भरत्कन रजाइँ माग्छू म चाँडो गई ॥
दुई वर्ले जब काम सिद्ध गरुँला द्यूँला सये गाउँ भनिन् ।
बीदा दी घर मन्थराकन फिराइ रिस् गर्न लाग्दी भइन्॥१५॥
सुन्दर् वस्त्र निकालि फालि कपडा मैला शरीर्मा धरिन् ।
आभूषण् कन फ्याँ कि खूप रिसले खाली जमीन्मा परिन् ॥

कौशल्या भी यही विचार कर देवी की पूजा करती थीं। [किन्तु] देवताओं ने मन में कार्य में विघ्न उत्पन्न करने का ही निश्चय किया। १२ वाणी (सरस्वती) को आज्ञा हुई कि तुम जा कर मंथरा और कैकेयी दोनो स्त्रियों के मन में प्रवेश कर विघ्न उत्पन्न करो और कार्य सिद्ध करके आओ। देवताओं के इस वचन को सुनकर वाणी तुरन्त मंथरा में प्रवेश कर गई। कैकेयी को भी भ्रमित करने के लिए (सरस्वती) पुन: कैकेयी में भी प्रवेश कर गई। १३ इस प्रकार वाणी के वशीभूत कैकेयी जहाँ थी, कहीं अवसर न निकल जाये, ऐसा सोच कर मंथरा तुरन्त वहाँ पहुँच गई। अनेक प्रकार के छल से उसे अपने वश करके सब वृत्तान्त सविस्तार कहने लगी। बोली कि दो वर हैं, जो तुम अभी मांग लो, इसी में भलाई है। १४ वाणी के वशीभूत कैकेयी कहने लगी कि मैं इन दोनों वरों को मांग लूँगी। एक से राम को चौदह वर्ष का वनवास और दूसरे से भरत को राज्य। इन दो वरों से जब कार्य सिद्ध होगा तब मैं तुम्हें सौ गाँव दूँगी। मंथरा को विदा कर घर लौटी। कैकेयी क्रोधित होने लगी। १५ उस सुन्दर वस्त्रों को त्याग कर मैले वस्त्र शरीर में धारण कर लिये। आभूषणों को भी उतार फेंका और भूमि पर लेट गई। संसार के सज्जनों का कहना

सज्जन् बेस् सुमती पनी कुमतिका सँग्ले त बिग्री गयो ।
भन्छन् जो दुनियाँ उ लक्षण यहाँ ठीक् कैकेयीमा भयो ॥ १६ ॥
कैकेयी सित बस्नलाइ खुशिले राजा गयेथ्या जसै ।
देख्यानन् र तहाँ कता गइ भनी चाकर्नि सोध्या तसै ॥
क्रोधागार-विषे भयाकि त बुझ्याँ कारण् छ कुन् कत्ति यो ।
बूझ्याको पनि छैन गै हजुरले बुझ्नू हवस् क्यान हो ॥ १७ ॥
केटीका इ वचन् सुनीकन डराइ राजा नजीक्मा गया ।
कैकेयीकन क्यान यो रित गर्‍यौ बात् खोल भन्दा भया ॥
जो भन्छौ म पुर्‍याउँला भनि शपथ् खाँदा जसै बात् गरिन् ।
राजा वृक्ष सरी गिर्‍या पृथिविमा यस्मा बहुत् जिद् गरिन् ॥ १८
राम्लाई बनवास भरत्कन रजाइँ देऊ भनी जिद् गरी ।
दुई वर्ले यहि द्यौ दिंदौन त भन्या बाच्नू त मुर्दा सरी ॥
भोली येति कुरा भयेन त भन्या मन्याछु विष् खाइ म ता ।
भन्न्या येति कुरा सुनी फिरि गिर्‍या राजा जमीन्मा यता ॥ १९ ॥
त्यो रात् वर्ष समान् व्यतित् हुनगयो राजा ति मूर्छा भया ।
सब् सामग्रि तयार् गरीकन बिहान् मन्त्री हजुर्मा गया ॥

है कि उत्तम से उत्तम सुमति भी कुमति की संगति से बिगड़ जाती है । ठीक वही लक्षण कैकेयी में दृष्टिगोचर हुए । १६ राजा प्रसन्न हो कर जैसे ही रानी कैकेयी के पास पहुँचे वैसे ही कैकेयी को न देख कर उनकी उपस्थिति के विषय में सेविकाओं से पूछा । सेविकाओं ने विनती की कि वह कोपभवन में जाकर बैठी हैं । किन्तु कारण का कुछ ज्ञान नहीं है । आप स्वयं जाकर जानने की कृपा करें । १७ बालिका (सेविका) के इन बचनों को सुनकर राजा भयभीत होते हुए निकट गये । उन्होंने कैकेयी से कहा कि यह सब क्या कर रही हो ? सब बात मुझे स्पष्ट करो विवश करने पर जब राजा ने शपथ लिया कि जो कुछ कहोगी मैं पूर्ण करूँगा, तब कैकेयी ने सब बात कह दी । उसे सुन कर राजा वृक्ष की भाँति पृथ्वी पर गिर पड़े । १८ मेरे दो वर हैं दीजिए । एक से राम को वनवास और दूसरे से भरत को राजगद्दी । और यदि नहीं देगें तो आपका जीवित रहना मृत के समान है । यदि कल तक वह नहीं हुआ तो मैं विषपान कर प्राण त्याग दूँगी । ऐसी बात सुनकर राजा पुनः पृथ्वी पर गिर पड़े । १९ राजा मूर्छित हो गये और वह रात्रि एक वर्ष के समान बीती । सब सामग्री तैयार कर प्रातः मंत्री राजा के यहाँ गए । सब

देख्या चाल् र वहाँ विचार् हुन गयो सोध्या पऱ्यो क्या भनी ।
विस्तार् पाइ सुमन्त्र राम् लिन गया आया तहाँ राम् पनि ॥२०॥

राजालाइ त दुःख सुक्ख हुनको कारण् तिमी छौ भनी ।
वन्मा गै तिमि राज्य द्यौ भरतलाइ भन्दी भइन् यो पनि ॥
यस्ता बात् सुनि बात् गऱ्या प्रभुजिले सुन्छ्यौ कि ए कैकेयी ।
राजा खूशि रहुन् म जान्छु वनमा के काम् छ घर्मा रही॥२१॥

गाह्रो कत्ति नमानि जान्छु वनमा राजा त बोलून् भनी ।
बोल्याको प्रभुको वचन् सुनि तहाँ बोल्छन् ति राजा पनि ॥
हे राम्चन्द्र! मलाइ आज् तिमीले बाँधेर राज्यैं गरी ।
झूट्ठादेखि बचाउ पाप् तिमिकनै लाग्दैन यस्तो गरी ॥२२॥

राजा येति भन्या र फेर् पनि विलाप् खुप् गर्न लाग्दा भया ।
राजाको बुझियो र आशय तहाँ राम्चन्द्र माइथ्यैं गया ॥
कौशल्या पनि भक्तिले हरिजिको ध्यान्मा रह्याकी थिइन् ।
राम्जीलाइ नदेखि कत्ति नछुटाइ ताना प्रभूमा दिइन्॥२३॥

सुमित्राले भन्दा पछि पलक माइका खुलि गयो ।
प्रभूलाई देख्ता अधिक मन सन्तोष् पनि भयो ॥
खूशीले काख्मा लीकन जब भनिन् खाउ कछु भनी ।
सुनी राम्ज्यू भन्छन् अब त कति खाँला नि म पनि ॥२४॥

स्थिति को देख कर बड़े ही असमंजस में पड़ कर उन्होंने कारण पूछा । पूरी परिस्थिति को भली प्रकार समझकर मंत्री सुमंत्र राम को लेने गये । राम भी आ गए। २० कैकेयी ने कहा, राजा को तुम्हारे यहाँ रहने से दुख हुआ है तुम भरत को राज्य सौंप कर बन चले जाओ। इस प्रकार की बात को सुनकर प्रभु ने कहा, माता सुनो ! राजा प्रसन्न रहें। घर रह कर करना ही क्या है। मैं वन को जाता हूँ । २१ बिना संकोच वन चला जाऊँगा, महाराज आदेश दें तो। प्रभु के वचन को सुन कर राजा भी बोले, हे रामचन्द्र! मुझे आज बाँध कर [डाल दो और] राज्य करके इ असत्य से बचाओ । ऐसा करने से तुम्हें किसी प्रकार का पाप न होगा । २ राजा इतना कहकर फिर अत्यन्त विलाप करने लगे। राजा के आशय को समझ कर रामचन्द्र माता के पास गये। कौशल्या भी ह जी के ध्यान में मग्न थीं। राम को न देख कर प्रभु से अनुयोग किया । २३ सुमित्रा के बाद, माता (कौशल्या) के पलक खुलते ही

गयो खान्या बेला मकन त मिल्यो राज्य वनको ।
भरत्ले राज् पाया यहिं बसि गरुन् राज्य जनको ।।
बिदा बक्स्याजावस् खुशिसित म जान्याछु वनमा ।
म चाँडै फिर्न्याछू विरह नहवस् कत्ति मनमा ।।२५।।

वचन् सुन्दा मूर्च्छा परिकन उठ्याकी छँदि तहाँ ।
भनिन् कौशल्याले अब म तिमिलाइ छोड्दछु कहाँ ।।
भन्या राजाले ता तर म तिमिलाइ रोक्तछु यहाँ ।
कि साथै लैजाऊ मकन तिमि जान्छौ अब जहाँ ।।२६।।

तिमीलाइ बिदा दी म कसरि यहाँ दु:ख सहुँला ।
बरू प्राणै त्यागी यमपुरिमहाँ जाइ रहुँला ।।
विलाप् कौशल्याको यति सुनि दयाले भरिगयो ।
तहाँ लक्ष्मणको मन् तब अरु उपर् रिस् हुन गयो ।।२७।।

नजर् दी राम्ज्यूमा अरुसित उठ्याको रिस बढाइ ।
गर्‍या बिन्ती राम्थ्यैं अब भरतथ्यैं गर्दछु लडाइँ ।।
हजुर्का राज् हर्न्या जति जति त छन् मार्छु सबलाइ ।
पितै बाँध्छू पैले भनिकन भन्या क्या छ अरुलाइ ।।२८।।

को देख कर मन को अत्यधिक सन्तोष हुआ । अति प्रसन्नता से गोद में लेकर जब कुछ खाने को कहा तो राम बोले कि अब मैं कितना खाऊँगा । २४ मेरा खाने का समय निकल गया । मुझे वन का राज्य मिला है । भरत ने राज्य पाया है और वह यहीं रह कर राज्य करें । मुझे शीघ्र विदा देने की कृपा करें । मैं वन को जाता हूँ । मैं शीघ्र ही लौटूँगा । मन में किंचित मात्र भी चिन्ता न करें । २५ ऐसा वचन सुनकर मूर्छित हुई कौशल्या पुनः सचेत हो बोली कि अब मैं तुम्हें कैसे छोड़ सकती हूँ । राजा ने तो कह दिया परन्तु मैं अब तुम्हें रोकती हूँ । तुम अब जहाँ जाओ मुझे भी अपने साथ ले चलो । २६ तुम्हें विदा कर मैं यहाँ किस प्रकार पीड़ा सहन करूँगी । मैं प्राण तज कर यमलोक में जा कर रहूँगी । कौशल्या का यह विलाप सुनकर राम के हृदय में दया उमड़ आई और लक्ष्मण के मन में अन्य लोगों पर क्रोध आया । २७ श्रीराम की ओर एक नजर देख अन्य लोगों पर उत्पन्न क्रोध से उग्र हो कर राम से लक्ष्मण ने विनती की कि अब मैं भरत के साथ युद्ध करूँगा और श्रीमान् के राज्य को हरण करने वाले जो भी हैं सब का वध करूँगा । पिता का ही सर्वप्रथम वध करूँगा । औरों का तो कहना ही क्या । २८ चाहे

चढ्याजावस् गादी सकल रिपुको नाश् म गरुँला ।
यसै काम्ले माइका सकल मनको शोक हरुँला ॥
सुन्या लक्ष्मण्जीका यि वचन जसै राम् खुशि भया ।
बुझाया विस्तार्ले पनि तहिं ठुलो लीकन दया ॥२९॥

सुन्यौ भाइ! संसार्मा शरिर अति कच्चा छ जनको ।
शरीर् कच्चा जानी नगर तिमि रिस् कत्ति मनको ॥
सबै भोग् चञ्चल् छन् बिजुलिसरि एक् छिन् नरहन्या ।
विचार् यस्तो राखी सहु तिमि बडो हुन्छ सहन्या ॥३०॥

भ्यागु तोखाँ भनि खोज्छ डाँस्मुखविषे साँप्ले धऱ्याको पनि ।
तेस्तै भोग् गरुँला भनेर मनले भन्छन् दुनीयाँ पनि ॥
क्याको रस् छ यहाँ विचार मनले काल्सर्पको मुख् परी ।
क्या होला वन जाउँला इ सबलाइ आनन्द राख्नन् हरि॥३१॥

देश्देश्का बाटुलिन्छन् बुझ तिमि मनले बाटका पाटिमाहाँ ।
बात्चित् गर्दै रहन्छन् खुशिसित मनले बन्धुझैं राति ताहाँ ॥
प्रातःकाल्भो जसै ता उठिकन ति सबै दश्दिशा लागिजान्छन् ।
बन्धूको संग यस्तो बुझिकन गुणिले दुःखसुख् एक मान्छन् ॥३२॥

गद्दी पर बैठ भी जायें, तो भी मैं समस्त शत्रुओं का नाश करूँगा। इन कार्यों से माता के मन के सम्पूर्ण शोक का हरण करूँगा। लक्ष्मण के इन वचनों को सुनकर रामचन्द्र जी प्रसन्न हुए और महान् कृपा कर उन्हें भली प्रकार समझाया। २९ सुनो भाई! संसार में मानव-शरीर अत्यन्त क्षणभंगुर है। शरीर को ऐसा समझ कर तुम मन में किंचित्मात्र भी क्रोध न करो। सभी भोग्य वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं। इन बातों का विचार कर तुम कष्ट सहन करो। सहनशील (व्यक्ति) ही महान् होता है। ३० मेढक सर्प के मुंह को विषपान करने हेतु खोजता है। उसी प्रकार संसार में भी भोग करने को मन कहता है। मन से यह विचार करो कि काल रूपी सर्प के मुँह में किस प्रकार का रस है। वन जाने से हमारी क्या हानि हो जायेगी। भगवान् सब को आनन्द-मंगल से रक्खें। ३१ तुम अपने मन से विचार कर देखो कि लोग देश-विदेश घूमते हैं। वहाँ मार्ग में विश्राम-गृह में मित्रों की भाँति प्रसन्न हो कर परस्पर वार्तालाप करते रहते हैं और प्रातः होते ही सब अपनी-अपनी दिशाओं की ओर चले जाते हैं। ३२ ऐसे मित्रों की संगति के गुणों को समझ कर गुणी

छाया तुल्य छ लक्ष्मि, यौवन भन्या भेलै सरीको भनी ।
भन्छन् स्त्रीसुखलाइ स्वप्न सरिको साँचो कुरा हो भनी ।।
यस्तै जानि पनी मनुष्यहरु सब् संसारमा भुल्दछन् ।
भुल्नैका वशले अनेक् फजितिले संसारि भै डुल्दछन्।।३३।।

जुन् यस् देह निमित्त यो रिस गर्‍यौ चिन्छौ कि कस्तो छ यो ।
हाड् मासू र रगत् नसा यति कुरा जम्मा भई बन्छ यो ।।
विष्ठा हुन्छ कि भस्म हुन्छ पछितक् वाँच्तैन यो ता कसै ।
यस्का खातिर घात् गर्‍यौ पनि भन्या पाप् मात्र लाग्ला उसै।।३४।।

क्रोधै हो यमराज सर्व जनको वैतर्नि भन्नू पनि ।
तृष्णा हो भनि यो बुझेर तिमिले कैले नबिर्स्या पनि ।।
सन्तोष्लाइ बुझि कामधेनु सरिको सन्तोष मन्ले रहू ।
रिस गर्नू बढिया त छैन मनमा जानू असल् हो सहू।।३५।।

यस्तै हो सुन कर्मका वश हुँदा बस्तैन एक् ठाम् रही ।
कस्तै कोहि हवस् अवश्य करले जानू छ जाहाँ गई ।।
कर्मैको फल भोग गर्छ दुनियाँ यै चित्तमा लेउ भाइ ।
आमैले यहि बात् बुझीकन बिदा दीनूहवस् हामिलाइ।।३६।।

जन दुख और सुख को एक समान ही मानते हैं । धन को छाया तुल्य, यौवन को धूल के समान तथा स्त्री-सुख को स्वप्न की भाँति मानते हैं । और इस यथार्थता को मानते हुए, ऐसा जान बूझ कर भी, मनुष्य संसार में भूला रहता है और इसी कारण अनेक आपदाओं सहित संसार में भ्रमण करता रहता है । ३३ जिस शरीर के लिए इतना क्रोध किया उसे पहचानते हो ? हड्डी, रक्त, मांस और नसें यही सब मिलकर यह शरीर बनता है जो एक दिन नष्ट हो कर भस्म हो जाता है । अनन्त काल तक यह किसी प्रकार जीवित नहीं रह सकता । ऐसे शरीर के लिए किंचित् मात्र भी छल किया तो पाप के भागी होंगे । ३४ क्रोध समस्त मानव-जाति के लिए यमराज सदृश है । तृष्णा वैतरणी है इसे भी न भूलना, और सदा सन्तोषरूपी कामधेनु का सहारा लेकर रहना । क्रोध करना अच्छा नहीं, वरन् बन जाना ही उचित है; इसे सहन करो । ३५ ऐसा ही है, सो सुनो ! कर्मरत प्राणी को एक स्थान पर रहने को नहीं मिलता । किसी न किसी कार्यवश उसे एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना ही पड़ता है जहाँ जाकर वह अपने किये कार्यों के फल का भोग करता है । यही बात चित्त में धारण करके हे भाई तथा

यो बिन्ती गरि पाउमा जब पऱ्या बीदा दिइन् मन् बुझाइ ।
आँसू थाम्न कठिन् भयो र बहुतै रोइन् शरीरै रुझाइ ।।
आशीर्वाद वचन् समेत् मिलि गयो ताहाँ बिदा रामलाइ ।
लक्ष्मण्ले पनि साथ जान्छु म भनी बिन्ती गऱ्या जानलाइ।।३७।।

लक्ष्मण्लाइ हिंडलौ भन्या र रघुनाथ् सीता भयामा गया ।
सीतालाइ तिमि ता घरै बस भनी पैंले त भन्दा भया ।।
पङ्खा छत्र चमर् रहित् प्रभुकनै देख्ता त शङ्कित् भइन् ।
क्या कारण् हुनगो भनीकन सिता हात्जोरि साम्ने भइन्।।३८।।

शङ्कित् जानकिलाइ देखि प्रभुले तीमी घरैमा यहाँ ।
सासूको टहलै गरीकन रहू वर्षै त चौधैमहाँ ।।
पीताको वचनै लिई शिर-उपर् जान्छू म वन्मा प्रिये ।
चौधै वर्ष बिताइ जल्दि म यहाँ फिर्न्याछु निश्चै श्रिये।।३९।।

यस्ता बात् प्रभुका सुनीकन तहाँ सीताजि मूर्छा परिन् ।
पैंले ज्योतिषिको कुरा सब कही छोड्दीनँ सेवा भनिन् ।।
सीताका यति बात् सुन्या र खुशिभै साथै सिताजी लिया ।
ब्राह्मण् खूशि सदा रहून् भनि तहाँ दौलत् बहूतै दिया ।।४०।।

माता, आपलोग मुझे बिदा देने की कृपा करें। ३६ ऐसी विनती करके जब राम चरणों में झुके तो उन्होंने अपने मन को समझा कर बिदा दी और रो-रोकर अपने शरीर को ही भिगो लिया। राम को आशीर्वाद के वचनों के साथ बिदा मिली और लक्ष्मण ने भी साथ जाने की विनती की। ३७ लक्ष्मण को चलने की अनुमति दे कर राम सीता के पास गये। पहुँचते ही सीता जी को घर में रहने की आज्ञा दी। पंखा, छतरी तथा चँवर आदि से सुसज्जित प्रभु को देखकर वे सशंकित हुईं। वे करबद्ध होकर, उनकी इस वेशभूषा का कारण जानने के लिए सामने आईं। ३८ सशंकित जानकी को देखकर प्रभु ने कहा कि चौदह वर्ष तक तुम घर पर रह कर अपनी सासों की सेवा टहल करती रहना। हे प्रिये! मैं पिता जी की आज्ञा शिरोधार्य करके, वन को जाता हूँ। चौदह वर्ष व्यतीत कर मैं निश्चय ही शीघ्र लौटूँगा। ३९ प्रभु की ये बातें सुनकर सीता जी मूर्छित हो गयीं। पहले ज्योतिषी की सब बातें कहीं, तत्पश्चात् विनती की कि आप की सेवा नहीं छोड़ूँगी। सीता जी की यह बात सुनकर राम ने प्रसन्न हो उन्हें साथ ले लिया। फिर ब्राह्मणों को सदा खुश रखने के लिए धन-सम्पत्ति का वितरण किया। ४० माता

कौसल्याजि जहाँ थिइन् तहिँ गई लक्ष्मण्जिले बिन्तिलाइ ।
माता मेरि पिछा भइन् भनि तहाँ सुम्प्या सुमित्राजिलाइ ॥
येती काम् गरि रामका हुकुमले लक्ष्मण् तयारी भया ।
सीता लक्ष्मण साथमा लि रघुनाथ् राजा भयामा गया ॥४१॥

बीदा हून पिताजिथ्यैं जब सिता लक्ष्मण् लि राम्ज्यू गया ।
यस्तो देखि असह्य भो र दुनियाँ सब शोक गर्दा भया ॥
सीता राम्कन दुःख यो हुन गयो कैकेयि दुष्टै भई ।
सीता आज कसोरि दुःख सहनिन् घोर् जङ्गलैमा गई ॥४२॥

यो अन्याय भयो यहाँ त नबसौं जाऔं प्रभूका सँगै ।
राम्लाइ छोडि यहाँ कसोगरि बसौं बूझेन मन् ता नगै ॥
यस्ता बात् गरि लोकले त बहुतै शोक् गर्न लाग्या भनी ।
सब् विस्तार् गरि वामदेव ऋषिले सब्लाइ बुझाया पनि॥४३॥

हेलोक्हो ! अतिगर्दछौतिमितशोक् यो शोक ता छाडियौ ।
साक्षात् विष्णु इ हुन् भनेर मनले श्रीरामलाइ जानिल्यौ ॥
पृथ्वीको सब भार् हरेर रघुनाथ् फिर्छन् इ जान्छन् कहाँ ।
साँचा हुन् इ कुरा अवश्य तिमिले खेद् कीन मान्यौ यहाँ॥४४॥

को पीछे लगते देख लक्ष्मण ने कौशल्या के पास जाकर विनती की और सुमित्रा माता को उन्हें सौंप दिया । इतना कार्य कर राम की अनुमति पाकर लक्ष्मण तैयार हो गये । सीता और लक्ष्मण को साथ लेकर रघुनाथ पिता के पास गये । ४१ राम को सीता और लक्ष्मण सहित बिदा लेने के लिए पिता के पास जाते देख असहाय हो समस्त प्रजा शोकाकुल हुई । दुष्ट कैकेयी के कारण सीता तथा राम को कष्ट सहन करना पड़ा है । सीता आज किस प्रकार घोर जंगल में जाकर दुख सहन करेंगी । ४२ यह अन्याय हुआ है । यहाँ न रहें, प्रभु के संग ही चलें । राम को छोड़ कर यहाँ किस प्रकार रहेंगे । बिना गये मन नहीं मानता । ऐसी बातें कर प्रजाजन अत्यन्त शोक करने लगे । तब वामदेव ऋषि ने सविस्तार वर्णन कर सबको समझाया । ४३ हे प्रजाजन ! तुम लोग अपने इस अत्यधिक शोक का त्याग करो । श्रीराम को मन में साक्षात् विष्णु का अवतार समझो । पृथ्वी के सब भारों का निवारण करने के बाद रघुनाथ लौट आयेंगे । ये जायेंगे कहाँ ? ये सब बातें सत्य हैं । तुम व्यर्थ ही यहाँ पर क्यों शोक प्रकट करते हो । ४४ इन बातों से ऋषि ने सभी जनों के मन को अत्यन्त सन्तोष प्रदान किया ।

यस् बात्ले ऋषिले मनुष्यहरुको खुप् मन् बुझाई दिया ।
पौंच्या राम् पनि कैकयी र दशरथ् जाहाँ बस्याका थियो ॥
हे मातर् ! वन जानलाइ अब ता आयौं जना तीन् चली ।
बीदा जान मिलोस् मा जान्छु वनमा रस् राग्रतीभर् नली॥४५॥
आज्ञा जानमिलोस् पिताजिकि पनी जान्छू सदा खुश् म छु ।
दुखपाउनन्किभनी पिताजिकन शोक् मन्मा नला गोस्कछु ॥
कैकेयी यति बात् सुनी खुशि भई बस्तर् पुराना दिइन् ।
लाया श्री रघुनाथले ति कपडा सीताजिले ता दिइन्॥४६॥
यस्ता वस्त्र म लाउँ आज कसरी भन्न्या मनैमा धरी ।
लज्जाले रघुनाथका मुखविषे हेरिन् कटाक्षै गरी ॥
श्रीराम्ले मुटुरा गरी ति कपडा हात्मा जसै ता लिया ।
त्यो देखीकन राजपत्निहरु सब् रोया तहाँ जो थिया॥४७॥
दुष्टे! आज सिताजिलाइ किन यो बस्तर् पुराना दियौ ।
यस् काम्ले जति छन् यहाँ इ सबको प्राण् खैंचि ऐलै लियौ ॥
कैकेयी सित बात् वशिष्ठ गुरुले येती गऱ्याथ्या जसै ।
बीदा भै रघुनाथ् चढ्या रथविषे सम्पूर्ण रोया तसै ॥४८॥

राम भी, जहाँ कैकेयी और दशरथ थे वहीं पहुँच गये और बोले, हे माता ! वन जाने के लिए हम तीनों जने आ गये हैं। लेशमात्र भी मन में क्रोध तथा द्वेष न रखकर आप हमें वन जाने के लिए विदा देने की कृपा करें।४५ पिताजी भी कृपया आज्ञा दें—जिससे मैं वन चला जाऊँ। मैं सदा ही प्रसन्न हूँ। आप मन में किंचित् मात्र भी चिन्ता न करें कि मुझे कष्ट होगा। ये शब्द सुनकर कैकेयी प्रसन्न हुई और उन्हें पुराने वस्त्रादि लाकर दिये। श्रीरघुनाथ ने तो वह वस्त्र ले लिये और सीता जी ने भी ले लिये।४६ ऐसे वस्त्र आज मैं किस प्रकार धारण करूँ। मन में यह विचार कर सीता जी ने लज्जापूर्वक श्रीरघुनाथ की ओर कटाक्ष-पूर्ण दृष्टि से देखा। श्रीराम ने उन वस्त्रों को अपने हाथ में ले लिया, यह देख सब राज-पत्नियाँ (माताएँ) रोने लगीं।४७ अरी दुष्टे! तूने आज सीता को ये पुराने वस्त्र क्यों दिये ? तूने इस कार्य से यहाँ जो लोग हैं उन सबके प्राणों को खींच लिया है। गुरु वशिष्ठ ने कैकेयी से जैसे ही यह बात कही श्रीरघुनाथ बिदा होकर रथ में चढ़ गये। उस समय सब लोग रोने लगे।४८ रथ में चढ़कर सीताराम वन को चल पड़े। साथ में लक्ष्मण भी गये। घर छोड़ कर उस रात्रि को रघुपति एक

सीताराम् वनमा चल्या रथ चढी लक्ष्मण् गया साथमा ।
वृक्षैका तलमा रह्या रघुपती घर् छोडि तेस् रातमा ॥
सुन्दर् एक् तमसा नदी तहिँ थिइन् तिन्का दुवै तिर् भरी ।
आयो लश्कर रामजिका सँग बस्यो खाली अयोध्या गरी॥४९॥
फिर्नन् ता रघुनाथ सँगै फिरियला जानन् चलौंला सँगै ।
राम्लाइ छोडि यहाँ कसोगरि बसौं काहाँ बसौंला नगै ॥
यस्तो सुर् प्रभुले बुझीकन तहाँ युक्ती गर्न्या छल्नको ।
प्रातःकाल भयो उठेर झटपट् मन्सुब्गर्न्याचल्नको ॥५०॥
फर्की फेरि शहर् गया झइँ गरी बाटो छली राम् गया ।
फर्क्याछिन् रघुनाथ् भनेर दुनियाँ सम्पूर्ण फिर्दा भया ॥
यस् रीत्ले दुनियाँ फिराइ शहरै श्री राम् वनैमा गया ।
गङ्गाका तिरमा पुगेर अब ता रथ् थाम भन्दा भया॥५१॥
सुन्दर् वृक्ष थियो ठुलो तिरविषे एक् शिशपाको तहाँ ।
दोस्रो वास् रघुनाथको तहिं भयो त्यै वृक्षका तल्महाँ ॥
फल् फूल् लीकन भेट्नलाइ गुहजी आया बडा हर्षले ।
निर्मल् देह भयो तसै बखतमा श्रीरामका स्पर्शले ॥५२॥

वृक्ष के नीचे रहे। जहाँ एक सुन्दर तमसा नदी बह रही थी। उसके दोनों ओर अयोध्या को सूना कर सहस्रों जन श्रीराम जी के साथ आकर बैठे। ४९ यदि श्रीरघुनाथ जी लौट चलेंगे तो हम लोग भी साथ ही लौटेंगे। अन्यथा जहाँ राम जायेंगे वहीं साथ ही साथ हम भी जायेंगे। राम को छोड़कर हम लोग यहाँ कैसे रहेंगे। प्रभु ने उन लोगों की ऐसी भावनाओं को जानकर उनको छलने की युक्ति की, और प्रातः होते ही तुरन्त उठकर चलने की ठानी। ५० लौट कर पुनः नगर की ओर जाने का बहाना कर मार्ग बदल कर राम चले गये। राम को लौटा हुआ समझ कर समस्त जन लौट गये। इस प्रकार अयोध्यावासियों को नगर की ओर लौटा कर श्रीराम वन को चल दिये। और गंगा तट पर पहुँच कर रथ को रोक देने को कहा। ५१ नदी के किनारे एक सुन्दर शिशपा (शीशम) का बड़ा वृक्ष था। दूसरा डेरा श्रीरघुनाथ जी ने उसी वृक्ष के नीचे डाला। वहाँ निषादराज गुह अत्यन्त हर्षित होकर फल-फूलादि लेकर भेंट करने को आये। श्रीराम के स्पर्श मात्र से ही उनका शरीर निर्मल हो गया। ५२ उन्होंने विनती की कि हे स्वामी! आज मेरा घर भी पवित्र हो जाये। हे करुणानिधान! मैं आपका सेवक हूँ,

कर्ता हूँ पनि भन्नु छैन अभिमान् जन्ले न गर्नू कहीं।
कर्मैको फल भोग मिल्छ तिमिले यो बुझ्नु जाहाँ तहीं ॥५७॥
धीरा भै रहनू विपत्ति सहनू कस्तै परून् तापनि।
कैले मोहविषे नपर्नु जनले माया छ संसार् भनी ॥
यस्तै बात् सुनि रात् बित्यो गुहजिको राम्का नजीक्मा रही।
गङ्गा तर्न हुकुम् भयो प्रभुजिको ताहाँ उज्यालो भई ॥५८॥
गंगे ! आज म जान्छु घोर वनमा केवल् नमस्कार् गरी।
फिर्दामा म पुजा अवश्य गरुँला सामग्रि ठूलो गरी ॥
यस्तो विन्ति गरी सिता पतिजिको साथै चलिन् पार् तरी।
आज्ञाले घरमा फिऱ्यो गुह पनी भक्ती मनैमा धरी ॥५९॥
गंगा पार् तरि मिर्ग मारि पकुवा तारेर खाया तहाँ।
तेस्रो वास् रघुनाथको तहिं भयो एक् वृक्षका तल्महाँ ॥
चौथो वास् रघुनाथको हुन गयो आश्रम् भरद्वाजको।
राम्ज्यूको ऋषिले गऱ्या स्तुति तहाँ सुर्जानिकाम्काजको॥६०॥

तन-मन से उनके वचनों को सुनने लगे। ५६ सुख-दुख का दाता यहाँ कोई नहीं है ? वास्तव में सुख-दुख के रूप में यह सब कर्मों का फल प्राप्त होता है। कहना मूर्खता है, न कहने से सब धर्म का नाश होता है। मैं कर्ता नहीं हूँ यह कहना ही उचित है। किसी को भी अभिमान नहीं करना चाहिए। तुम यही जान लो कि इस संसार में कर्मों का ही फल भोग करने को मिलता है। ५७ कैसी भी विपत्ति आ जाय धैर्य-पूर्वक सहन करना चाहिए। संसार को माया रूपी जान कर कभी भी मोह के वश में न पड़ना चाहिए। राम के निकट बैठ ऐसी बातें सुनते हुए गुह की रात बीती। उजाला होने पर गंगा पार करने के लिए प्रभु की आज्ञा हुई। ५८ "लौटते समय पर्याप्त सामग्री लेकर मैं अवश्य पूजा करूँगा। हे गंगे! आज तो मैं केवल नमस्कार कर घनघोर वन को जाती हूँ।" ऐसी विनती कर सीता अपने पति के साथ गंगा जी को पार कर चली गई। आज्ञा पाकर गुह भी मन में भक्ति-भाव धारण कर घर लौट गये। ५९ गंगा के पार आकर गुह ने मृग का शिकार किया और उसी का भोजन किया। श्रीरघुनाथ का तीसरा पड़ाव वहीं एक वृक्ष के नीचे पड़ा और चौथा पड़ाव भरद्वाज ऋषि के आश्रम में हुआ। कार्यों के विस्तार को समझ कर ऋषि ने रामजी की स्तुति की। ६० पाँचवें दिन मार्ग-प्रदर्शन के लिए ऋषिकुमारों को साथ में

पाँचौंदिन् ऋषिका कुमार् सँगलिया बाटो बताउन् भनी ।
रामज्यूलाइ यमुनाजितारितिकुमार् साँझमा त फर्क्या पनि ।।
सीताराम् पनि चित्रकूट् पुगि गया वाल्मीकि बस्थ्या जहाँ ।
वाल्मीकीकन दण्डवत् गरि बहुत् आनन्द मान्या तहाँ।।६१।।

वाल्मीकीकन भन्दछन् रघुपती क्यै दिन् रहन्छू यहाँ ।
कुन् जग्गा बढिया छ सब् तरहले होला सुविस्ता कहां ।।
सून्या वाल्मिकिले मनुष्य सरि भैं रामले गऱ्याका कुरा ।
सोही माफिक विन्ति बात् पनि गऱ्या वाल्मीकि छन् ज्ञनपुरा।।६२।।

जान्दैनन् महिमा बडा ऋषि पनी जस्का त एक् नामको ।
यस्ता हौ रघुनाथ् ! हजुर्कन यहाँ क्या काम् असल् ठामको ।।
सज्जन्को हृदयै छ घर् हजुरको अच्छा बहुत् फेर् कहाँ ।
विस्तार् एक् सुनिबक्सनू पनि हओस् बिन्ती म गर्छू यहाँ।।६३।।

व्याधा हूँ अधिको म सप्तऋषिको निर्मल् कृपाले गरी ।
वाल्मीकी भनि नाम् चल्यो जब जप्याँ राम्नाम उल्टा गरी ।।
उल्टै नामकि ता छ यस्ति महिमा विस्तार धेर् क्या कहूँ ।
गंगाका र इ चित्रकूट गिरिका बीच्का जगामा रहू।।६४।।

लिया । रामजी को यमुना पार करवा कर वे ऋषिकुमार संध्या तक लौट भी आये । सीता-राम भी चित्रकूट, जहाँ बाल्मीकि रहते थे, पहुँच गए और बाल्मीकि मुनि को दण्डवत कर अत्यन्त आनन्दित हुए । ६१ कुछ दिन वहीं रहने की इच्छा प्रकट करते हुए रघुपति बाल्मीकि से कहते हैं—कौन-सा स्थान सर्वप्रकार से सुविधापूर्ण एवम् उत्तम होगा । मनुष्य की भाँति राम द्वारा कही गई बात को बाल्मीकि मुनि ने सुना । और उसी प्रकार विनय-पूर्ण वार्ता की । क्योंकि वाल्मीकि तो पूर्ण ज्ञानी थे । ६२ हे रघुनाथ आप तो ऐसे हैं कि जिनके कार्य की महिमा को ऋषि नहीं समझ सकता । आपके लिए उत्तम स्थान की क्या आवश्यकता है ? सज्जनों का हृदय ही आपका आगार है, इससे बढ़कर उत्तम स्थान आपको और कहाँ मिलेगा । मैं एक बात विस्तार-पूर्वक कहता हूँ, आप श्रवण करने की कृपा करें । ६३ मैं किसी समय एक बहेलिया था । सप्तर्षियों की असीम कृपा से जब राम-नाम को उलटी ओर से जपना आरम्भ किया तब बाल्मीकि के नाम से प्रख्यात हुआ । उलटे नाम की ऐसी महिमा है कि और अधिक क्या कहूँ । आप गंगा तथा चित्रकूट पर्वत के मध्य के स्थल में निवास करें । ६४ बाल्मीकि ऋषि के वचनों को सुन कर प्रभु

वाल्मीकी ऋषिका वचन् सुनि बहुत् खुश् भै जगन्नाथ् गया ।
गंगाका र ति चित्रकूट गिरिका बीच् पारि बस्ता भया ॥
गंगा देखि सुमन्त्र फर्कि दशरथ् जाहाँ बस्याका थिया ।
ताहाँ जल्दि गयेर जो छ समचार् बिल्कुल् सुनाई दिया ॥६५॥
बर्को दूध घसी जटा मुकुट झैं बाँध्या दुवै भाइले ।
फिर् लौ जा भनि यो हुकूम् तहिं दिया राम्ले सिताभाइले ॥
गंगा पार् रघुनाथ् गया नजरले हेर्दा कठिन् भो तहाँ ।
छोड्याँ देख्न जसै रुँदै रथ लिई दौडेर आयाँ यहाँ ॥६६॥
सेवा बिन्ति गरेस् भनी हुकुम भो लक्ष्मण् सिता रामको ।
हाम्रो शोक् रतिभर् कदापि नगरुन् हूँदैन शोक् कामको ॥
यस्ता बात् गरि राम् गया भनि सबै बिस्तार् सुनाया जसै ।
कौसल्या दशरथ्जिलाइ रिसले वाक्वाण् बजारिन् तसै॥६७॥
वाक्शर्ले अति ताप् भयो र दशरथ् भन्छन् मलाई कति ।
भन्छ्यौ मर्ने बखत् यसै हुन गयो छाड्यो शरीर्ले गति ॥
ऐले मर्छु सराप् पनी छ तिमिले खुप् पुत्र शोक्ले गरी ।
जस्तै हामि मर्‍यौं उसै गरि मर्‍या ठूलो विपत्ती परी ॥६८॥

अत्यन्त हर्षित हुए और जगन्नाथ (श्रीराम जी) चले गए तथा गंगा के किनारे चित्रकूट पर्वत के मध्य में निवास करने लगे। गंगा के तट से सुमंत्र भी राजा दशरथ के पास लौट आए और उनको सभी समाचार सविस्तार सुनाया। ६५ बरगद का दूध मल कर दोनों भाइयों ने अपनी जटाओं को मुकुट सदृश बाँधा। फिर उसी समय राम और सीता ने मुझे लौटने की आज्ञा दी। गंगा पार जाते हुए श्रीरघुनाथ को देखना मेरी इन आँखों के लिए कठिन हो गया। उनके आँखों से ओझल होते ही रथ लेकर रोते हुए दौड़ता हुआ यहाँ आया हूँ। ६६ लक्ष्मण, सीता तथा राम की यह आज्ञा हुई है कि हमारी ओर से सेवा विनती कहना और कहना कि हमारे लिए किंचित मात्र भी शोक न करें। शोक किसी अर्थ का नहीं होता। सुमंत्र ने इस प्रकार की बातों से जैसे ही राम-गमन के विषय में विस्तृत हाल सुनाया, वैसे ही कौशल्या ने दशरथ जी पर क्रोधवश वाग्वाणों का प्रहार किया। ६७ दशरथ अत्यन्त दुःखित हो बोले कि मुझे कहाँ तक कहोगी। मेरा शरीर भी गतिहीन हो रहा है और मेरे मरने का समय आ गया है। मैं अभिशापित भी हूँ कि पुत्र के अतिशोक से व्यथित हो कर ही मुझे मरना है "जिस प्रकार हम मर रहे हैं उसी प्रकार घोर विपत्ति

येती एक तपस्विले अघि सराप् जो दी गयाथ्या मरी ।
तिन्को तेहि सरापको फल मिल्यो ठीक् आज उस्तै परी ।।
सब् विस्तार सरापको कहिसकी हा राम ! सीता गरी ।
प्राणै त्याग् दशरथ्जिले जब गऱ्या खलबल् पऱ्यो तेस्घरी।।६९।।

प्रातःकाल भयो वशिष्ठ गुरु झट् मन्त्री लि दर्बार् गया ।
तेल्माथी दशरथ्जिलाइ धरि फेर् छोरा झिकाई लिया ।।
चाँडै आउनको वशिष्ठ गुरुको आज्ञा छ भन्न्या सुनी ।
दूतैका सँग लागि भाइकन ली आया भरत्जी पनि ।।७०।।

कैकेयी सित भेट् भयो भरतको सोध्या पिता छन् कहाँ ।
सद् वृत्तान्त गरी भरत्कन त सब् विस्तार् सुनाइन् तहाँ ।।
सून्या शोक् मनमा पऱ्यो भरतको साह्रै रिसाया पनि ।
पापी हौ तिमी कुम्भिपाक् नरकमा भोग् गर्न जाउली भनी।।७१।।

कैकेयीकन गालि दीकन तहाँ दुःखी बहुतै भया ।
कौसल्याजि जहाँ थिइन् तहिं रुँदै धाउँदै भरत्जी गया ।।
हे मातर् ! मनमा कदापि नपरोस् मत् छैन मेरो रति ।
पाप् लागोस् कछु मत् भया गुरुजिलाइ काटेर माऱ्या जति।।७२।।

से व पुत्र-शोक से तुम भी मरोगे ।" ६८ कुछ समय पूर्व एक तपस्वी मुझे यह श्राप दे कर मरे थे । उसी श्राप का फल मुझे आज इस प्रकार से प्राप्त हुआ है । श्राप के विषय में विस्तारपूर्वक कह चुकने के बाद, 'हे राम! हे सीता!' कहते हुए दशरथ जी ने जब प्राण त्याग किये उसी समय रनिवास में खलबली मच गई । ६९ प्रातः होते ही गुरु वशिष्ठ तुरन्त मन्त्री को लेकर दरबार में गए । दशरथ जी को वहीं रख कर फिर सबको बुलवाया । गुरु वशिष्ठ के तुरन्त आने के आदेश को समझ कर दूत के संग भाई को लेकर भरत जी भी आए । ७० भरत की भेंट कैकेयी से हुई । उससे उन्होंने पिता के विषय में पूछा कि वे कहाँ हैं । कैकेयी ने सब समाचार सविस्तार सुनाया । यह सब सुन कर भरत को महान् शोक हुआ । वे अत्यन्त क्रोधित हुए और बोले कि तुम पापिन हो, तुम कुम्भीपाक नरक का दुःख भोग करोगी । ७१ कैकेयी को धिक्कार कर भरत अत्यन्त दुखित हुए और रोते, विलाप करते हुए कौशल्या के पास गए और बोले, हे माता! मेरे मन में कदापि कोई छल नहीं, और यदि हो तो मुझे गुरुजी को बध करने के समान पाप लग जाये । ७२ जब यह विनती करके भरत अत्यन्त विलाप करके रो रहे थे उसी समय गुरु वशिष्ठ

बिन्ती यो गरि दुःखमा परि विलाप् गर्थ्या भरत्जी तहाँ ।
मन्त्रीवर्ग समेत् बशिष्ठ गुरुजी पौंच्या नजीक्मा तहाँ ॥
देख्या शोक भरत्जिको र गुरुले पीता बित्याछन् भनी ।
शोक् गर्नू बढिया त छैन किन शोक् गर्छौ महाराज् ! भनी॥७३॥

नाना तत्त्व कही तहाँ भरतको सब् शोक् गुरूले हऱ्या ।
सब् आज्ञा गुरुको लिई भरतले काम्काज् पिताको गऱ्या ॥
राजाको किरिया जसो गरि सक्या दान्को असङ्ख्यै गरी ।
तेस् बीच्मा मनले विचार् भरतले राख्या बहुत् शोक् गरी॥७४॥

माता मेरि त राक्षसी सरि भइन् इन्का नजीक्मा यहाँ ।
बस्नू योग्य अवश्य छैन अब ता जान्छू प्रभू छन् जहाँ ॥
यस्तो चित्त थियो तहाँ भरतको इन्को छ यो मन् भनी ।
मालूम् ता गुरुमा थियो तरपनी भन्छन् उचित् हो भनी॥७५॥

बाबाको छ हुकुम् यहाँ भरतले राज् गर्नु, राम्ले गई ।
चौधै वर्ष तलक् बसून् वनविषे मानो मुनीश्वर भई ॥
सीता राम् यहि बातले वन गया याहाँ हजूर्ले पनि ।
गादी चढ्नुहवस् हुकूम् दिनुहवस् यो राज्य मेरो भनी॥७६॥

यस्तो बिन्ति गरी वशिष्ठ गुरु चुप् जस्सै रह्याथ्या तहाँ ।
उत्तर् जल्दि दिया तहाँ भरतले क्या गर्छु यो राज् यहाँ ॥

सभी मंत्रिगणों सहित वहाँ पहुँच गए। भरत जी को शोकाकुल देख गुरु ने पिता की मृत्यु की सूचना दी। वे बोले, शोक करना ठीक नहीं, आप व्यर्थ ही शोक क्यों करते हैं। ७३ अनेक प्रकार के तत्वों का ज्ञान दे कर गुरु ने भरत के शोक को शान्त किया। गुरु की आज्ञा लेकर भरत ने पिता का क्रियाकर्मादि किया। जैसे ही राजा का क्रिया-कर्म समाप्त हुआ वैसे ही असंख्य दान-पुण्य आदि किए। उसी बीच भरत ने शोकाकुल हो कर मन में विचार किया। ७४ मेरी माता तो राक्षसी तुल्य है। इसके समीप रहना अवश्य ही उचित नहीं है, अतः अब जहाँ प्रभु हैं वहीं जाता हूँ। गुरु को विदित था कि भरत के मन में ऐसा ही विचार था जो उचित ही था। ७५ पिता (दशरथ) की आज्ञानुसार भरत को यहाँ राज्य करना है और राम को चौदह वर्ष तक वनों में मुनियों के रूप में रहना है। सीता-राम इसी कारण वन को गए। अतः आप राजगद्दी पर बैठ कर, 'यह मेरा राज्य है' कह कह कर राज्य करें। ७६

कीर्तीमा अपकीर्ति पारि कसरी राज् गर्नु याहाँ बसी।
दाज्यूको टहलै गरी सँग रह्या लक्ष्मण् रह्याछन् जसी॥७७॥
गया जाहाँ सीतापति म पनि जान्छू अब तहाँ।
फगत् एक् कैकेयी यहिं बसिरहून् छोड्दछु यहाँ॥
फलाहारी हुन्छू शिरभरि जटा धारि वनमा।
म भोली जान्याछू हिंडिकन विचार् यै छ मनमा॥७८॥
प्रभूको गादी हो प्रभुकन फिरायेर घरमा।
म गादी सुम्पन्छू किन म गरुँला राज्य करमा॥
भरत्का यस्ता वात् सुनिकन सबै खुश् अति भया।
भरत् भोलीबेरै उठिकन सबेरै हिंडिगया॥७९॥
सबै माता भ्राता गुरु सहित सब् फौज पनि ली।
फकत् सीतारामको चरणतलमा चित्त पनि दी॥
भरत् गङ्गा पौंच्या गुहजिकन शंका हुन गयो।
ठुलो लश्कर् देख्या नबुझिकन तार्नै डर भयो॥८०॥
लडौंला नाउ खैंची भरत कपटी हुन् यदि भन्या।
भनी मन् मन् लश्कर्हरुकन तयार् हौ पनि भन्या॥

ऐसी बिनती कर जैसे ही गुरु वशिष्ठ चुप हुए, भरत ने तुरन्त उत्तर दिया कि क्या राज्य करूँगा यहाँ! कीर्ति में अपकीर्ति ले कर किस प्रकार यहाँ बैठ कर राज्य करूँ। भाई की सेवा कर साथ में रह कर लक्ष्मण यश के पात्र हुए। ७७ सीतापति जहाँ गए हैं मैं भी अब वहीं जाता हूँ, केवल कैकेयी अकेली यहाँ पर रहे। फलाहारी होकर शिर में जटा धारण कर मैं कल पैदल ही वन को चला जाऊँगा, यही मैंने मन में ठाना है। ७८ यह गद्दी प्रभु की है, अतः प्रभु को घर लौटा कर मैं गद्दी उनको सौंप दूँगा। भरत की ये बातें सुन कर सब लोग अति प्रसन्न हुए। भरत ने कहा कि मैं क्यों विवशता-पूर्वक राज्य करूँगा और दूसरे दिन उठकर सबेरे ही चल पड़े। ७९ सब माताओं, तथा गुरु सहित सब सेना को भी साथ लेकर केवल सीता-राम के चरण-तल में एकाग्रचित्त लगाकर भरत गंगा पर पहुँचे। निषादराज को शंका उत्पन्न हुई और भरत की विराट सेना को देखकर वास्तविकता को जाने बिना उन्हें पार उतारते भी डरने लगे। ८० यदि कोई कपट होगा तो नाव को खींचकर लड़ेंगे, यही मन में विचार कर उन्होंने अपनी सेना को सचेत किया। स्थिति की गम्भीरता को समझ कर भरत ने कहा कि मैं सब समझता हूँ।

ठुलो भित्री मत्लब् गरिकन गयो बुझ्दछु भनी ।
तहाँ भेटी राखी नजर तिर हेर्‍या कछु भनी ॥८१॥

जसै देख्या आँसू गहभरि धरी शोक् पनि गरी ।
कहाँ मिल्छन् सीतापति मकन भन्दा घरिघरि ॥
जसै शिर् पाऊमा गरि ति गुहले ढोग् पनि दिया ।
भरत्ले अङ्कैमाल् गरुँ भनि उठाईकन लिया ॥८२॥

भरत्जीले सोध्या गुहसित सिताका पति यहाँ ।
सुत्याको स्थल् कुन् हो मकन कहु जान्छू अब तहाँ ॥
गया विस्तार् पाई रघुपति सुत्याका शयनमा ।
भरत्ले खेद् मान्या कुश-शयन देखेर मनमा ॥८३॥

अहो ! मेरो खातिर् वन वन सिताजी पति सँगैं ।
कुशासन्मा सुत्छिन् न त यसरि सुत्थिन् अघि कतैं ॥
अहो धिक्कार् मेरा जनम जननी कैकयि भइन् ।
इनैले गर्दामा पतिसँग सिताजी वन गइन् ॥८४॥

कहाँ छन् सीतानाथ् कति पर गया भेट्तछु कहाँ ।
छ केही मालूम् ता मकन कहु जान्छू अब तहाँ ॥

वे गुह से भेंट करने गये और कुछ समझने हेतु उसकी ओर देखा । ८१ गुह ने भरत के शोकाकुल अश्रुपूर्ण नेत्रों को देखा । सीतापति कहाँ मिलेंगे, कह कर भरत बार-बार निषादराज से पूछने लगे । जैसे ही गुह ने पाँव में मस्तक रख कर नमस्कार किया, भरत ने उसे आलिंगन करने के लिए उठा लिया । ८२ भरत ने गुह से सीतापति के शयनस्थल का पता पूछा । विस्तारपूर्वक जान कर भरत रघुपति के शयनस्थल की ओर गए और राम की कुशों की शय्या देख कर भरत जी को अत्यन्त खेद हुआ । ८३ ओह! मैं ही निमित्त हूँ कि सीता जी पति के साथ वन-वन में कुशासन पर सोती हैं । इस प्रकार पहले कभी नहीं सोईं । ओह! धिक्कार है मेरी जन्मदात्री जननी कैकेयी को जिसके कारण आज सीता जी पति के साथ वन चली आईं । ८४ कहाँ हैं सीतानाथ ? कितनी दूर जाने पर उनसे भेंट होगी ? कहाँ हैं ? कुछ मालूम हो तो बताओ मैं अब वहीं जाता हूँ । तब गुह ने भी उन्हें स्थान बता दिया जहाँ राम थे । गुह के दिये हुए समाचार से ही राम-मिलन की आशा से भरत प्रसन्न हुए । ८५ सब कुछ विस्तारपूर्वक बता कर गुह ने भरत को

बताया याहाँ छन् भनि ति गुहले रामकन पनि ।
गुहैका सम्चार्ले खुशि पनि भया भेट्तछु भनी ॥८५॥
सब् विस्तार् बताइ ताहिं गुहले गङ्गाजि तारीदिया ।
ताहाँ देखि भरत् चली पुगिगया जाहाँ भरद्वाज् थिया ॥
एक् दिन् ताहिं मुकाम् गऱ्या भरतले सन्मान् ऋषीले गऱ्या ।
बिल्कुल् सैन्य जती थिया भरतका मेज्मानिलेछक् पऱ्या॥८६॥
भोली बेर सबेर लश्कर लिई बीदा ऋषीथ्यैं भया ।
कैल्हे पुग्दछु चित्रकूट गिरिमा भन्दै भरत्जी गया ॥
खुश् भै लश्कर चित्रकूट गिरिका पौंच्या नजीक्मा जसै ।
खोज्या ताहिं भरत्जिले अघि गई डेरा प्रभूको तसैं ॥८७॥
डेरा देखी भरत्जी तहिं नजिक गया पाउका छाप देख्या ।
श्रीराम्का पाउका छाप् चिन्हकन खुशिले माथले ताहिं टेक्या ॥
भन्छन् धन्न्यै रह्याँछू सहज नमिलन्या पाउका छाप देख्याँ ।
ब्रह्माजीले नपाउनु छ तपनि सहजै माथले आज टेक्याँ ॥८८॥
यस्तो बोल्दै प्रभूको चरणधुलिविषे भक्तिले लट्पटीदै ।
कैल्हे पुग्छू कहाँ छन् भनिकन मनले दस्दिशा दृष्टि दीदै ॥
जाँदा ताहीं भरत्ले प्रभुजिकन जसै नेत्रले देख्न पाया ।
स्वामित्लाइ आज पायाँ भनिकन खुशिले पाउमा पर्न धाया॥८९॥

गंगा पार करा दिया। वहाँ से चल कर भरत भरद्वाज जी के आश्रम में पहुँच गये। एक दिन वहीं ठहरे। ऋषि ने भरत का सम्मान किया। इस सत्कार को देख कर भरत की सम्पूर्ण सेना चकित रह गई। ८६ दूसरे दिन प्रातः सेना को लेकर भरत ने ऋषि से विदा ली। चित्रकूट पर्वत पर शीघ्रातिशीघ्र पहुँचने की इच्छा से भरत चल पड़े। सेना जैसे ही चित्रकूट पर्वत के पास पहुँची वैसे ही भरत अति प्रसन्न हो आगे बढ़ कर प्रभु के डेरे की खोज करने लगे। ८७ डेरा ज्ञात होने पर भरत जी जब निकट पहुँचे तो उन्हें पाँवों के चिह्न दृष्टिगोचर हुए। श्रीराम के चरण-चिह्न पहचान कर भरत ने अत्यन्त हर्षित होकर वहीं अपना मस्तक रख दिया। मैं धन्य हूँ जो आज अप्राप्य पद-चिह्नों को प्राप्त कर पाया जिन्हें ब्रह्मा भी नहीं पा सकते। ८८ इसी प्रकार भक्ति-भावना में डूबे हुए भरत जी, प्रभु की चरण-धूलि से शरीर को पवित्र करते हुए, 'कब पहुँचूँगा, राम कहाँ हैं' आदि बातें मन में सोचते

देख्या पाऊ पऱ्याका गहभरि बहँदा अश्रुधारा धऱ्याको।
सब् राज्यै तृण् बराबर् गरिकन बहुतै आफुमा मन् गऱ्याको ॥
यस्तो देखी कृपाले भरतकन तहाँ काखमा राखिलीया।
जस्तो मन् ह्वो भरत्को बुझि रघुपतिले खुप् कृपादृष्टि दीया॥९०॥
श्रीसीतापति माइका चरणमा राख्या र शिर् फेर् पिता।
काहाँ छन् किन आज देखितनँ यहाँ क्या गर्दछन् छन् कता ॥
भन्दै खोज्नि गऱ्या पिताकन तहाँ श्रीरामजीले जसै।
सब् विस्तार वशिष्ठले भनिदिंदा शोक् गर्न लाग्या तसै॥९१॥
गंगा स्नान गरी तिलाञ्जलि दिया फेर् पिण्डदानै पनि।
फल् फूल्ले रघुनाथले तहिं दिया पाऊन् पिताले भनी ॥
तेस् दिन्मा उपवास् गऱ्या जब बित्यो रात् फेरि गंगा गया।
गंगा स्नान् गरि फेर् फिरेर मढिमा आएर बस्ता भया ॥९२॥

तहाँ सीतारामका चरण-तलमा शिर् पनि धरी।
अयोध्यै लैजान्छू भनिकन ठुलो मन्सुब गरी ॥
भरत् बिन्ती गर्छन् किन रघुपते ! आज वनमा।
हजूर्ले आयाको मकन अति ताप् हुन्छ मनमा ॥९३॥

हुए दशों दिशाओं की ओर दृष्टि डालते चले। जाते-जाते प्रभु के दर्शन पाते ही कहते हैं—आज स्वामी को पाया और अत्यन्त प्रसन्न हो उनके चरणों में आत्म-समर्पण कर दिया। ८९ पाँव पड़ते, नेत्रों से अश्रुधार बहाते, तथा समस्त राज्य-लोभ को तिनका सदृश समझ कर अपने हृदय को राम-चरणों में अर्पित करते हुए भरत को राम ने कृपापूर्वक अपनी गोद में बैठा लिया। भरत की ऐसी मनोभावना देख कर रघुपति ने उन्हें महान् कृपा की दृष्टि से देखा। ९० भरत ने प्रथम श्रीसीतापति के चरणों में मस्तक झुकाया फिर सीता-माता को प्रणाम किया। श्रीराम ने पिता को वहाँ न देख उनके विषय में पूछा कि वे कहाँ हैं, वे क्या कर रहे हैं आदि। गुरु वशिष्ठ द्वारा विस्तृत रूप से सब समाचार ज्ञात होने पर वे अत्यन्त शोकाकुल हुए। ९१ गंगा-स्नान करके तिलांजलि दे श्रीरघुनाथ ने फल-फूलों आदि से पिण्ड-दानादि किया। उस दिन उपवास किया। रात्रि व्यतीत होने पर पुनः गंगा में स्नानादि करके लौटे और अपनी मड़ैया में आकर बैठे। ९२ वहाँ सीता-राम के चरणों पर सिर रख कर भरत ने उनके अयोध्या लौट चलने की उत्कट अभिलाषा प्रकट की। भरत ने विनती की, हे रघुपते, आज आपके इस प्रकार वन चले

स्वामिन्! हजुर्को म त दास पो हूँ।
यो राज्य गर्नाकन योग्य को हूँ॥
यो गादि ता याहिं हजूरको हो।
मैले त सेवा गरि बस्नु पो हो॥९४॥

छोरा हुनन् यज्ञ बहुत् गरीनन्।
सम्पूर्ण लोक्को पनि ताप् हरीनन्॥
तब् पो ति छोरासित राज्य छाडी।
जानू असल् हो त छँदै छ झाडी॥९५॥

बेला त यो होइन जान वन्मा।
मेरा त यै निश्चय हुन्छ मन्मा॥
जाऔं घरै फर्कि सधाइ जावस्।
मेरी इ मातासित रिस् नआवस्॥९६॥

यस्ता प्रकार्ले गरि बिन्ति गर्दै।
आँखा भरी आँसु बहूत धर्दै॥
रोया भरत्ले जब पाउमा गै।
बोल्या प्रभूले पनि खूशि मन् भै॥९७॥

हे भाइ! गर्छौ किन आज जिद्दी।
फिर्नू असल् छैन नि काम् नसिद्धी॥
जान्छू म वन्मा तिमि फर्कि जाऊ।
तेस् राज्यको काम् तिमिले चलाऊ॥९८॥

आने से मेरे मन में घोर संताप हो रहा है। ९३ हे स्वामी, मैं तो आपका सेवक हूँ। यह राज्य करने योग्य नहीं हूँ। यह गद्दी तो आपकी है, मुझे तो सेवा करके रहना ही उचित है। ९४ जिसके पुत्र नहीं हुए, जिसने यज्ञादि भी नहीं किया, और न जिसने सम्पूर्ण लोकों का निवारण ही किया, ऐसे पुत्र को राज्य त्याग कर वन जाना ही उत्तम होगा। ९५ मैंने तो मन में यही निश्चय किया है कि आपके वन जाने का यह समय नहीं है। चलें, घर लौट चलें जिससे सबका सुधार हो और अपनी माता के प्रति मेरा क्रोध दूर हो जाय। ९६ इस प्रकार विनती करते हुए नेत्रों में अश्रु भर चरणों में गिर कर जब भरत रोए तो प्रभु ने प्रसन्न मन से कहा। ९७ हे भाई! आज तुम इतनी जिद्द क्यों करते हो। विना कार्य-सिद्धि के लौटना उचित नहीं है। मैं वन जाता हूँ, तुम

रामले वनै गै मुनि भेष धर्नू ।
याहीं भरत्ले बसि राज्य गर्नू ।।
भन्न्या पिताको जब सुन्न पायाँ ।
आज्ञा उसैले वन जान आयाँ ।।९९।।

ई बात् भरत्ले जब सुन्न पाया ।
फेरी चरण्मा परि बिन्ति लाया ।।
हे नाथ् ! पिता हुन् मतिहीन् भयाका ।
स्त्रीका त साह्रै वशमा पऱ्याका ।।१००।।

उन्ले भन्याथ्या पनि राज्य छाडी ।
जानू असल् होइन आज झाडी ।।
स्वामित् ! बहुत् बिन्ति छ फर्कि जाऊँ ।
फर्कन्नँ भन्न्या त जवाफ् नपाऊँ ।।१०१।।

यस्तो भरत्ले जब जिद्दि लीया ।
उत्तर् प्रभूले पनि फेरि दीया ।।
फर्कन्नँ भैया तिमि फर्कि जाऊ ।
पिताजिलाई पनि दोष् नलाऊ ।।१०२।।

खुप् सत्यवादी त पिताजि थीया ।
साँचै हुनाले वरदान दीया ।।
सो पूर्ण गर्नाकिन जान्छु वन्मा ।
साँचो कुरा हो बुझिलेउ मन्मा ।।१०३।।

लौट जाओ और राज-काज का सब कार्य संचालित करो । ९८ ज
मैंने पिता की यह आज्ञा सुनी कि राम मुनि-वेष धारण करें और भर
यहाँ रह कर राज्य करें तदनुसार मैं वन जाने के लिए आय
हूँ । ९९ जब भरत ने यह बात सुनी तो वे पुनः राम के चरणों में गि
कर विनती करने लगे । हे नाथ! पिता की मति हीन हो गई थी,
स्त्री के वशीभूत थे । १०० उन्होंने यदि कहा भी तो भी राज्य छोड़क
वन को जाना आज अच्छा नहीं । हे स्वामी! मेरी हार्दिक विनती
कि आप लौट चलें; न लौटने की बात मुझसे न कहें । १०१ भरत
जब इस प्रकार हठ किया तो भी प्रभु ने पुनः यही उत्तर दिया कि मैं नह
लौटूँगा । तुम लौट जाओ और पिता पर भी दोषारोपण न करो । १०
पिता जी अत्यन्त सत्यवादी थे । सत्य के कारण ही उन्होंने वरदान दिये

उत्तर् प्रभूको सुनि दुःख मान्या ।
फेरी चरण्मा परि बिन्ति लाया ।।
फिर्नू हवस् स्वामित ! बिन्ति गर्छु ।
यस् दण्डकारण्य विषे म जान्छु ।।१०४।।

यस्ता वचन् सूनि भरत्जिलाई ।
फेरी हुकूम् भा तिमि फर्क भाई ।।
यो राज्य साटचा पनि हुन्छ झूटो ।
हे भाइ ! गर्छौं किन आज भूटो ।।१०५।।

हुकूम् यस्तो सूनी भरत पनि राम्का चरणमा ।
परी बिन्ती गर्छन् म त रघुपते ! छू शरणमा ।।
चरण् बाहिक् एक् छिन् रहन पनि ताप् हुन्छ मनमा ।
नफर्क्या स्वामित्का पछिपछि म ता जान्छु वनमा ।।१०६।।

न ता फर्की जान्या न त मकन लान्या वन पनि ।
भन्या मर्छू स्वामित् ! अब अरु कुरा केहिन भनी ।।
भनी आसन् बाँधी जब मरणमा निश्चय धऱ्या ।
खुशी भै श्रीराम्ले पनि अति दयालू मन गऱ्या ।।१०७।।

दिया सूचन् राम्ले गुरुकन बुझाऊ तिमि भनी ।
गुरूले एकान्तै लगिकन भरत्जीकन पनि ।।

वही पूर्ण करने मैं वन जा रहा हूँ। बात सत्य है, यह मन में जान लो। १०३ प्रभु के इस उत्तर को सुन कर भरत बहुत ही दुःखित हुए और पुनः चरणों में गिरकर विनती करने लगे। हे स्वामी! मैं आपसे विनती करता हूँ कि आप लौटने की कृपा करें। दण्ड-स्वरूप इस वन में मैं ही निवास करता हूँ। १०४ ऐसे वचनों को सुनकर उन्होंने भरत को पुनः आज्ञा दी कि हे भाई! तुम लौट जाओ। यह राज्य बदलने से भी पिता जी का वचन झूठा हो जायगा। हे भाई! आज व्यर्थ ही फिर हठ क्यों करते हो। १०५ ऐसी आज्ञा सुन कर भरत फिर राम के चरणों में गिर कर विनती करने लगे, हे रघुपते! मैं आपकी शरण में हूँ और आपके चरणों के विना एक क्षण रहने से भी मेरे मन में ताप होगा। यदि आप नहीं लौटते तो स्वामी के पीछे-पीछे मैं भी वन को जाऊँगा। १०६ न ही लौटेंगे और न ही मुझे वन ले जायेंगे तो मैं अब कुछ न कहूँगा, यूँ ही मर जाऊँगा। ऐसा कह कर जब मरने के लिए आसन बाँध लिया तो श्रीराम ने भी मन ही मन प्रसन्न हो अत्यन्त दया दिखाई। १०७ तब

बुझाया बात् खोलीकन सुन इ जो हुन् रघुपति ।
जगन्नाथ् साक्षात् हुन् त्रिभुवनपतीका अधिपति ॥१०८॥
अघी ब्रह्माजीले सकल भुमिको भार् हर भनी ।
स्तुती गर्दा खुश् भै सुन म हरुँला भार्हरु पनि ॥
भन्याका हूनाले उहि वचन पालन् गरुँ भनी ।
प्रभू जान्छन् वन्मा पछि त सुन फिर्छन् घर पनि ॥१०९॥
प्रभूकै इच्छा हो नतर कसरी कैकयि पनि ।
बनै जाउन् भन्थिन् प्रभुकन रती तुल्य नगनी ॥
कुरो यस्तो जानी नगर तिमि यो आग्रह यहाँ ।
भुमीको भार् टारीकन पछि त जान्छन् प्रभु कहाँ ॥११०॥
रावण् मारि उतारि भारि भुमिको फिर्छन् जगन्नाथ् भनी ।
यस्ता हुन् रघुनाथ् भनेर गुरुले खोलेर गुह्यै पनि ॥
सब् विस्तार गरीदिया र गुरुको बाणी सुनी खुश् भया ।
फर्क्यानन् रघुनाथ् भनी मन बुझ्यो राम्का नजीक्मा गया॥१११॥
हे नाथ् तत्त्व सुन्याँ म फिर्छु अब ता जान्छू अयोध्यामहाँ ।
पूजा गर्न दिनू हवस् हजुरका एक् जोर् खराऊ यहाँ ॥

राम ने गुरु से भरत को समझाने की विनती की। गुरु जी ने भरत को एकान्त में ले जाकर बात को स्पष्ट करके समझाया। सुना यह है कि रघुपति साक्षात् जगन्नाथ, तथा त्रिभुवनपति के भी अधिपति हैं। १०८ ब्रह्मा जी के सम्पूर्ण पृथ्वी के भार हरण करने की स्तुति पर प्रसन्न होकर श्रीराम ने भू-भार हरण करने का वचन दिया था। उसी वचन को पालन करने हेतु प्रभु अभी वन जा रहे हैं। इसके बाद वे घर भी लौटेंगे। १०९ यह सब प्रभु की ही इच्छा है। नहीं तो प्रभु को किंचित् मात्र भी न समझ कर कैकेयी किस प्रकार वन जाने को कहती। इन बातों को जान-समझ कर तुम यह आग्रह न करो। भू-भार हरण करने के बाद प्रभु जायेंगे कहाँ (अर्थात् घर ही तो लौटेंगे)। ११० रावण को मार कर भू-भार हरण करके जगन्नाथ लौटेंगे। रघुनाथ की लीला चाहे गोपनीय हो, गुरु ने स्पष्ट रूप से विस्तार-पूर्वक वर्णन कर दी। गुरु की वाणी को सुनकर भरत प्रसन्न हुए और रघुनाथ लौट आयेंगे यह मन में जान कर राम के निकट गए। १११ हे नाथ ! मैंने सब तत्वों को सुन लिया। अब मैं अयोध्या जाता हूँ, पूजा हेतु आप अपनी दोनों खड़ाऊँ देने की कृपा करें। ऐसी विनती करके चारों ओर परिक्रमा करके भरत ने प्रणाम किया।

मन्‌मा सन्तोष पाऊ मकन दिनदिनै सम्झँदै दिन् बिताऊ।
छुट्‌नन् सब् कर्म तिम्रा रतिभर मनमा शोक् नराखेर जाऊ॥११६॥

कैकेयी करुणा बुझी खुशि भई बीदा प्रभूथ्यैं भइन्।
श्रीराम्‌को चरणारविन्द मनले भज्दै अयोध्या गइन्॥
सब् लश्कर्‌हरु ली भरत् पनि बिदा भै फेर् अयोध्या गया।
सब् लश्कर्‌हरुलाइ राखि घरमा आफू फरक् भै रह्या॥११७॥

नन्दीग्राम्‌मा सऱ्याका भुमिशयन गरी रोज् फलाहार् गऱ्याका।
एक् गट्‌ठा सब् जटाको गरिकन ति खराउ गादिमाथी धऱ्याका॥
गर्थ्या सब् राज्यको काम् तपनि सब कुरा गादिमा बिन्ति गर्दै।
यस्तै रीत्‌ले बिताया दिन भरतजिले राममा चित्त धर्दै॥११८॥

केही दिन् चित्रकूट्‌मा बसिकन रघुनाथ् बालिमकीथ्यैं बिदा भै।
जान्छू वन्‌मा म फिर्छू भनिकन खुशिले अत्रिका आश्रमै गै॥
अत्रीका पाउमा शिर् धरिकन म त हूँ राम् भनी नाम् बताया।
श्रीराम्‌का वाणि सुन्दा मन अति खुशि भै अत्रिले हर्ष पाया॥११९॥

सीतापति ने भी उसके कृत्यों को क्षमा करके उसे अभयदान दिया और कहा कि इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं। यह मेरी ही इच्छा है। यह मन में सोचकर मेरी ओर से सन्तोष धारण करो और मेरा स्मरण करती हुई दिन व्यतीत करो। सब अपराधों से तुम्हारी मुक्ति होगी, तुम मन में चिंचित् मात्र भी शोक न करो और जाओ। ११६ कैकेयी भी राम की करुणा को समझ कर प्रसन्न हुई और प्रभु से विदा लेकर अपने मन में राम के चरणारविन्दों का भजन करती हुई अयोध्या चली गयी। भरत भी सम्पूर्ण सेना-सहित विदा लेकर अयोध्या चले गए। सारी सेना को घर में रखकर स्वयं दूसरे स्थान पर निवास करने लगे। ११७ भरत जी नन्दीग्राम में भूमि पर शयन करते। सदैव फलाहार ग्रहण करते। जटा को एक जूट करके बाँधते। खड़ाऊँ को अपनी गोद में रख कर सेवा करते तथा गद्दी पर स्थापित कर सविनय ध्यानपूर्वक राज्य के सभी कार्य करते। इसी प्रकार नियमित रीति से भरत जी ने राम के ध्यान में लीन हो दिन व्यतीत किए। ११८ कुछ दिन चित्रकूट में रहकर रघुनाथ ने बाल्मीकि से वन जाने के लिए विदा ली। उपरांत अत्यन्त हर्ष के साथ अत्रि मुनि के आश्रम में जाकर उनके चरणों में सिर नवा कर अपना परिचय दिया। श्रीराम की वाणी सुन, मुनि को बड़ी प्रसन्नता हुई। ११९ सीतापति की पूजा कर ऋषि ने उनके चरणों

पूजा सीतापतीको गरिकन ऋषिले पाउमा बिन्ति लाया ।
बृद्धा छन् पत्नि मेरी सकल विषयमा एक् रती छैन माया ।।
भित्रै छन् आज दर्शन् दिन मढुलिविषे भित्र सीताजि जाउन् ।
सीताजीलाइ पाई अब त ति बुढिले जन्मको सार पाऊन् ।।१२०।।

अत्रीको बिन्ति सूनी हुकुम पनि दिया लौ सिता भित्र जाऊ ।
अत्रीकी पत्नि भेटीकन अब तिमिले जल्दि फर्कर आऊ ।।
आफ्ना नाथ्को हुकूम् यो सुनिकन खुशि भै भित्र सीताजि जाई ।
भेटिन् बृद्धा बहुत् भैकन बसिरहन्या अत्रिकी पत्निलाई ।।१२१।।

सीताले पाउमा शिर् धरिकन बहुतै प्रेम् बुढीमा बढाइन् ।
जोर् जोर् कुण्डल् र सारी दिइकन बुढिले अङ्गराग् फेर् चढाइन् ।।
यस्ले शोभा निरन्तर् दृढ पनि रहला यो पनी बिन्ति लाइन् ।
सीताजीलाइ आशिष् दिइ ति अनसुयाले बहुत् हर्ष पाइन् ।।१२२।।

सीता र लक्ष्मण सहित् गरि रामलाई ।
भोजन् मा दिन्छु भनि खुप्सित चीज् बनाई ।।
भोजन् गराइ रघुनाथकि जानि माया ।
ताहाँ सपत्नि भइ रामकि कीर्ति गाया ।।१२३।।

अयोध्याकाण्ड समाप्त

में विनती की कि मेरी पत्नी वृद्धा है और उसके मन में किंचित् मात्र भी भक्ति नहीं है। अतः दर्शन देने के लिए सीताजी अन्दर पधारने की कृपा करें, जिससे सीताजी के दर्शन प्राप्त कर बुढ़िया को जन्म के फल प्राप्त हो जायें। १२० अत्रि की विनती सुन कर श्रीराम ने सीता को अन्दर जाने की आज्ञा दी। अत्रि की पत्नी से भेंट करके अब तुम शीघ्र ही लौट आओ। अपने नाथ की आज्ञा पाकर प्रसन्न हो सीता अन्दर गईं और अत्यन्त वृद्धा अत्रि-पत्नी से भेंट की। १२१ सीता ने पैरों पर सिर रख कर वृद्धा के प्रति अत्यन्त प्रेम प्रदर्शित किया। अत्रि-पत्नी ने सीता जी को जोड़-कुण्डल और साड़ी देकर उबटन का लेप किया और कहा कि इससे तुम्हारे शरीर की शोभा स्थिर रहेगी। इस प्रकार सीता जी को आसीस देकर अनसूया को अत्यन्त हर्ष प्राप्त हुआ। १२२ सीता एवं लक्ष्मण-सहित राम को भोजन कराने के लिए विविध प्रकार के भोजन तैयार किये। भोजन करा के रघुनाथ की माया को समझ कर ऋषि तथा उनकी पत्नी दोनों ने राम-कीर्ति के गीत गाये। १२३

अयोध्याकाण्ड समाप्त

अरण्यकाण्ड

अत्रीका आश्रमैमा बसि रघुपतिले प्रेमले दिन् बिताई।
दोस्रा दिनमा सबेरै उठिकन बनमा जान मनसुब् चिताई॥
अत्रीजीका नजीक्मा गइकन अब ता जान्छु बीदा म पाऊँ।
रस्ता यो जाति होला भनिकन कहन्या एक् अगूवा म पाऊँ॥ १॥

सीताराम्को हुकूम् यो सुनिकन ऋषिले भन्दछन् क्या बताऊँ।
सब्को रस्ता त देख्न्या यहिं हजुर भन्या कुन् अगूवा खटाऊँ॥
चिन्छू लीला हजुर्को तरपनि अगुवा यहिं अस्सल् खटाई।
यै मर्जी पूर्ण गर्नाकन पनि अगुवा आज दिन्छू पठाई॥ २॥

अत्रीले बिन्ति येती गरिकन अगुवा शिष्य धेरै खटाया।
केही रस्ता त आफै पनि पछि पछि गै रामलाई पठाया॥
एक् कोश् तक् पौचँदामा बडि नदि बहँदी नाउले तर्नुपर्न्या।
मिल्थिन् त्योतारिफर्क्या मढितिर ऋषिकाशिष्य सब्फिर्नु पर्न्या॥३॥

सीताराम् बनमा पुग्या बन थियो साह्रै खजित्को तहाँ।
बाघ् भालू अरु दुष्ट राक्षसहरू डुल्छन् निरन्तर् जहाँ॥

अत्रि के आश्रम में रघुपति ने प्रेमपूर्वक दिन व्यतीत किया। दूसरे दिन सबेरे उठकर वनगमन का निश्चय कर अत्रि जी के निकट जा कर विदा माँगी और कहा कि उत्तम पथ-प्रदर्शक की भी व्यवस्था कर दें। १ सीताराम का यह आदेश सुन कर ऋषि कहते हैं कि जब श्रीमन् स्वयं ही सब को पथ-प्रदर्शन करनेवाले हैं तो मैं आपके लिए किस पथ-प्रदर्शक को भेजूं। आपकी लीलाओं को मैं भली प्रकार जानता हूं, फिर भी मैं आपकी इच्छा-पूर्ति के लिए इस समय एक पथ-प्रदर्शक को भेज दूंगा। २ अत्रि यह विनती करके कुछ दूर तक स्वयं ही राम के पीछे-पीछे गये और कई शिष्यों को पथ-प्रदर्शनार्थ नियुक्त कर दिया। एक कोस चलने के पश्चात् एक बड़ी नदी को नाव द्वारा पार करवा कर ऋषि के सब शिष्य आश्रम की ओर लौट पड़े। ३ सीताराम जिस वन में पहुंचे वह अत्यन्त घना था, जहां बाघ, भालू तथा दुष्ट राक्षसगण निरन्तर घूमा करते थे। वहां पहुंच तत्पर होकर प्रभु जी

ताहाँ पौंचि हुकूम् भयो प्रभुजिको भाई ! तयारी भई ।
सीताका म अगाडि हिड्छु तिमिले हिड्नू पछाडी रही ॥ ४ ॥

यस्ता बात् गरि राम लक्ष्मण तहाँ हिड्थ्या तयारी भई ।
एक् सुन्दर बनमा तलाउ मिलिगो ठूलो छ कोश् बन् गई ॥
ठण्डा जल् तहिं पान् गरेर रघुनाथ् छायाँ बस्याथा जसै ।
आयो ताहिं विराध राक्षस ठुलो डर् दीन लाग्यो तसै ॥ ५ ॥

को हौ स्वी पनि साथमा छ किन यो आयौ बड़ा वन्महाँ ।
कस्तो सुर् मनमा छ फेर् अब उपर् जानू छ इच्छा कहाँ ॥
मैले सुन्दर गाँस् बनाउन असल् मान्याँ र सोध्याँ यहाँ ।
सब् नाम् कामस मेत् बताउ तिमिले जुन् काम् छ जान्छौ जहाँ॥६॥

राक्षस्का इ वचन् सुनी प्रभुजिले नाम् काम् बताया सबै ।
बाँच्ने मन् छ भन्या सिता र हतियार् छोडेर जाऊ उसै ॥
यस्तो बोलि सिताजिलाइ लिन सुर् बाँधेर राक्षस् जसै ।
दौडेथ्यो रघुनाथले पनि ति हात् दूबै गिराया तसै ॥ ७ ॥

जस्सै हात गिऱ्या तसै त रिसले खाँ रामलाई भनी ।
दौडन्थ्यो मुख बाइ फेर् प्रभुजिले काटचा ति गोडा पनि ॥

ने आज्ञा दी कि भाई लक्ष्मण ! तुम सीता के पीछे-पीछे हो लो, मैं आगे-आगे चलता हूँ । ४ इस प्रकार बातचीत कर राम-लक्ष्मण तत्परता से चल पड़े । लगभग एक कोस चलने के पश्चात् एक सुन्दर वन में पहुँचे जहाँ एक तालाब मिला । शीतल जल पान कर जैसे ही रघुनाथ एक वृक्ष के नीचे उसकी छाया में बैठे कि एक बड़ा विशालकाय भयंकर राक्षस वहाँ आकर उन्हें भयभीत करने लगा । ५ तुम कौन हो जो स्त्री के साथ इस बीहड़ वन में आये हो । तुम्हारे मन में क्या इच्छा है और आगे कहाँ जाना चाहते हो ? सब नाम, काम सहित, किस कार्य वश कहाँ जाओगे इत्यादि बातें सविस्तार बताओ । तुम्हें अपने उदर का आहार बनाने की इच्छा हुई है इसी कारण से पूछ रहा हूँ । ६ राक्षस के इन वचनों को सुन कर राम ने नाम तथा काम सब बता दिया । राक्षस ने कहा, यदि जीवित रहना चाहते हो तो सीता और अस्त्रों को छोड़ कर चले जाओ । इतना कहकर मन में निश्चय कर के राक्षस सीता को पकड़ने के लिए दौड़ा, वैसे ही रघुनाथ ने उसकी दोनों भुजाओं को काट दिया । ७ भुजाएँ कट कर गिरते ही राक्षस क्रोधित होकर जैसेही राम को भक्षण करने के लिए दौड़ा वैसे ही प्रभु ने उसके पावों को भी काट

हात् गोडा नहुँदा त सर्प सरिको पस्र्‍यो भुमीमा जसै ।
हात् गोडा सब काटिया तब पनी घस्रेर आयो तसै ।। ८ ।।

घस्रो घस्रि उ सर्दथ्यो प्रभुजिले काट्या तहाँ शिर् पनि ।
विद्याधर् गण हो छुटोस् अब सराप् जाओस् परम्धाम् भनी ।।
राक्षस् देह मर्‍या सराप् पनि टर्‍यो विद्याधरै फेर् भयो ।
श्रीराम्‌को स्तुति खुप् गरेर खुशि भै फेर् स्वर्गलोक्‌मा गयो ।। ९ ।।

जस्सै स्वर्ग विराध् गयो प्रभुजिले रस्ता वनैको लिया ।
पालन् गर्छुम योगिको अब भनी मन्‌मा दया खुप् लिया ।।
ध्यान् गर्दै शरभङ्गजी बनमहाँ जाहाँ बस्याका थिया ।
ताहीं श्रीरघुनाथजी खुशि हुँदै पोंचेर दर्शन् दिया ।।१०।।

ताहीं श्रीशरभङ्गले प्रभुजिमा तन् मन् वचन् सब् धरी ।
आफ्नू कर्म जती थियो तहिं तती सम्पूर्ण अर्पण् गरी ।।
अस्सल् ताहि चिता बनाइ हरिको दर्शन् नजर्‌ले गरी ।
ताहाँ देह दहन् गरी चलिगया संसार सागर् तरी ।।११।।

मुक्ति श्रीशरभङ्गको जब भयो तस्सै मुनीश्वर्‌हरू ।
आया भेट्‌न भनी बहुत् खुशि भई बन्‌मा थिया जो अरू ।।

दिया । हाथ-पाँव से रहित होकर वह सर्प के समान पृथ्वी पर लोटने लगा, फिर भी वह खिसक-खिसक कर आगे बढ़ा । ८ इस प्रकार खिसकते हुए आता देख प्रभु ने उसका सिर भी काट दिया । वह पहले विद्याधर था । अब श्राप से मुक्त हो उसका राक्षस शरीर भी मृत्यु को प्राप्त हुआ और उसने पुनः विद्याधर के रूप को धारण किया, तथा अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक श्रीराम की स्तुति कर स्वर्गलोक को चला गया । ९ विद्याधर के स्वर्ग चले जाने के बाद प्रभु जी ने वन का मार्ग लिया । दया से भर कर योगियों के कष्ट-निवारण के लिए श्रीरघुनाथजी श्रीशरभंग का स्मरण कर के उनके आश्रम में जाने के लिए उस वन की ओर चल दिए । १० श्रीशरभंभ जी ने वहाँ प्रभु में ही अपना तन, मन, धन से ध्यान लगाकर कर्म-मुक्त होकर एक उत्तम चिता का निर्माण करके हरि के दर्शन किये । तदुपरान्त शरीर को अग्नि में समर्पित कर संसार-सागर तर कर चले गये । ११ श्रीशरभंग जी की मुक्ति होते ही अन्य मुनीश्वरगण जो वन में थे प्रसन्न चित्त से भगवान् से भेंट करने के लिए आये । उन्हीं को अपना स्वामी जान कर खूब स्तुति की ।

हात्जोरी स्तुति खुप् गऱ्या ति ऋषिले ख्वामित् इनैं हुन् भनी ।
कोमल् चित्त गरी तहाँ नजरले हेऱ्या प्रभूले पनि ॥ १२ ॥

बिन्ती सब ऋषिले गऱ्या हजुरमा हाम्रो विपत्ती पनि ।
देख्या पूर्ण दया हुन्या थिइ बहुत् आपत् रह्याछन् भनी ॥
जाऔं सब् ऋषिका मढीमढिविषे वाहीं गई यो दया ।
होला चित्तविषे भनी ति ऋषिले भन्दा प्रभूजी गया ॥ १३ ॥

देख्या तेस् वनमा अनेक् पृथिविमा खप्पर र सोध्या तहाँ ।
कस्का खप्पर हुन् अनेक् नजरले देखछू मऱ्याका यहाँ ॥
श्री सीतापतिका वचन् सुनि तहाँ बिन्ती ऋषीले गऱ्या ।
ई शिर् हुन् ऋषिका यहाँ छल परी धेरै ऋषीश्वर् मऱ्या ॥१४॥

राक्षस्का छलले बहुत् ऋषि मऱ्या भऱ्या कुरा यो सुनी ।
ताहाँ सब् ऋषिलाइ राखि सबका साम्ने प्रतिज्ञा पनि ॥
सब् राक्षस्हरुको म नष्ट गरुँला भन्या प्रभूले गऱ्या ।
खूशी मन् हुनगो र ताहिं ऋषि ता आनन्दमा सब् पऱ्या ॥१५॥

केही वर्ष बिताइ ताहिं हरिले सब् योगिको ताप् हऱ्या ।
माया फेरि सुतीक्ष्णका उपर भै प्रस्थान् प्रभूले गऱ्या ॥
जाहाँ भक्त सुतीक्ष्ण छन् तहिं गई दर्शन् प्रभूले दिया ।
पूजा पूर्ण गरी सुतीक्ष्ण ऋषिले राम्लाइ मन्मा लिया॥१६॥

प्रभु ने भी शान्त एवम् कोमल हृदय से उन्हें देखा । १२ सब ऋषियों ने प्रभु के समक्ष विनती की कि हमारी विपत्तियों को देख कर, हे रघुनाथ ! आप अवश्य दया करेंगे । आपत्ति से पीड़ितों के मठों में स्वयं जा कर दया करने की कृपा करेंगे । तदनुसार प्रभु जी सभी ऋषियों के आश्रमों में गये । १३ उस वन में पहुँच कर अनेक मृतकों की खोपड़ियों को बिखरा हुआ देखकर प्रभु को यह जानने की उत्कण्ठा हुई कि ये किसकी खोपड़ियाँ हैं । श्रीसीतापति के वचनों को सुन कर ऋषि ने विनती की कि ये शीश छल द्वारा मारे गये ऋषीश्वरों के हैं । १४ राक्षसों द्वारा छल से मारे गये ऋषियों की मृत्यु का कारण जान कर, सभी उपस्थित ऋषियों को एकत्र करके उनके समक्ष प्रभु ने प्रतिज्ञा की कि मैं सब राक्षसों को नष्ट कर दूँगा; यह सुन कर ऋषिगण अत्यन्त आनन्दित हुए । १५ कुछ वर्षों तक वहीं रह कर हरि ने सब ऋषियों के कष्टों का हरण किया । इसके पश्चात् सुतीक्ष्ण के ऊपर कृपा करने हेतु प्रभु ने वहाँ से प्रस्थान

सयुज्यै मुक्ति मिल्ला तिमिकन सुन यो देह जैले त छुट्ला।
भऱ्या आज्ञा प्रभूको सुनिकन अब ता कर्मको पाश टुट्ला॥
भन्या यो मन् ऋषीको हुन गइ बहुतै चित्तमा हर्ष पाया।
सीतारामले अगस्ती सित गइ कछु दिन् बस्न मन्ले चिताया॥१७॥

प्रभूका साथैमा पछि पछि सुतीक्ष्णै पनि गया।
अगस्तीका भाई सित पुगि त एक् रात् प्रभु रह्या॥
ति अग्नीजिह्वा खुप् खुशि पनि भया ईश्वर भनी।
चिनी ताहाँ तिन्ले विधिसित गऱ्या पूजन पनि॥१८॥

तहाँ देखी सीतापति उठि सबेरै चलिगया।
अगस्ती काहाँ छन् भनि खबर ली दाखिल भया॥
अगस्तीले खुश् भै स्तुति गरि बहुत् मन् पनि धऱ्या।
विराट् रूप्ले वर्णन् गरिकन त पूजा पनि गऱ्या॥१९॥

सुन्दर धनू र तरवार् सँग बाण् धऱ्याका।
ठोक्रा त जोडि अधि इन्द्रजिले धऱ्याका॥
ताहीं थिया सब दिया रघुनाथलाई।
बिन्ती गऱ्या सकल भार् हर आज जाई॥२०॥

किया। भक्त सुतीक्ष्ण को प्रभु ने दर्शन दिया। पूजा पूर्ण करके ऋषि सुतीक्ष्ण ने मन में राम का ध्यान किया। १६ राम ने विचार प्रगट किया कि इस शरीर से सायुज्य मुक्ति मिलनी चाहिए। देह से छुटकारा पाने की बात प्रभु से सुन कर वह अत्यन्त हर्षित हुए। उन्हें यह सोच कर बड़ा सन्तोष हुआ कि अब मैं कर्म के बन्धन से भी मुक्त हो जाऊँगा। सीताराम ने अगस्त्य मुनि के पास जाकर वहाँ कुछ दिन रहने का विचार किया। १७ सुतीक्ष्ण भी प्रभु के साथ हो लिये। अगस्त्य के भाई के पास जा कर प्रभु एक रात वहाँ रहे। उन्हें ईश्वर जान कर अग्निजिह्वा मुनि भी अत्यन्त प्रमुदित हुए। उन्होंने श्रीराम का पूजन विधिवत किया। १८ वहाँ से उठ कर सीतापति सबेरे ही चले गए। अगस्त्य जी के आश्रम का पता लेकर वहाँ पहुँच गए। अगस्त्य ने भी मन ही मन ध्यान धर के स्तुति की और विराट रूप से पूजा भी की। १९ वहाँ पर अगस्त्य ने इन्द्र का रक्खा हुआ सुन्दर धनुष और बाणों से भरे हुए तरकस की जोड़ी श्रीरघुनाथ को अर्पण की और विनती की कि आज ही जाकर पृथ्वी का सम्पूर्ण भार हरण कीजिये। २०

आठ् कोशम असल पञ्चवटी भन्याको ।
आश्रम् असल् छ रमणीय बहुत् बन्याको ॥
ताहीं बसेर कुछ दिन् तिमिले बिताऊ ।
सब् साधुमाथि करुणा तहिं गैं चिताऊ ॥२१॥

यस्तो अगस्ति ऋषिको उपदेश पाई ।
श्रीराम् तयार् पनि भया तहिं जानलाई ॥
मालूम् थियो त पनि जुन् ऋषिले बताया ।
सो मार्ग जानकन पाउ उतैं चलाया ॥२२॥

जान्थ्या प्रभू अलिकती पर केहि जाई ।
जंगल्विषे अधिक वृद्ध जटायुलाई ॥
देख्या र राक्षस भनीकन मार्नलाई ।
माग्या धनू प्रभुजिले र लिला जनाई ॥२३॥

मार्न्या कुरा सुनि जटायु बहुत् डराई ।
राजाजिको प्रिय सखा हुँ भनी कराई ॥
गर्न्याछु हित् यहिं बसी म सिताजिलाई ।
कल्याण् मिलोस् हजुरदेखि बहुत् मलाई ॥२४॥

श्रीरामले पनि तहाँ अति खूशि मन्ले ।
आनन्द निर्भय दिया पछि फेरि तिन्ले ॥

यहाँ से आठ कोस की दूरी पर एक अति उत्तम एवं रमणीय आश्रम है जिसे पंचवटी कहते हैं; तुम वहीं रहकर कुछ दिन व्यतीत करो और समस्त साधुवर्ग पर करुणा करके उनके कष्ट-निवारण का उपाय सोचो। २१ अगस्त ऋषि के ऐसे उपदेश पाकर श्रीरामजी भी जाने के लिए तत्क्षण तैयार हो गये। यद्यपि वह सब कुछ स्वयं ही जानते थे, फिर भी ऋषियों के बताये हुए मार्ग से चल पड़े। २२ कुछ दूर चल कर जंगल के मध्य में एक अत्यन्त वृद्ध गिद्ध (जटायु) को देखा। उसे राक्षस समझ कर मारने के लिए प्रभु ने धनुष माँगा। २३ मारे जाने की बात सुनकर जटायु बहुत भयभीत हुआ और चिल्लाकर कहने लगा कि मैं राजा दशरथ का प्रिय सखा हूँ और यहीं रहकर मैं सीता जी का कुछ कल्याण करूँगा; अतः आप मेरे ऊपर कृपा-दृष्टि रखें और मेरा कल्याण करें। २४ श्रीराम ने भी अत्यन्त प्रसन्न मन से उसे अभयदान दिया। तदुपरान्त उसने पुनः विनती की कि हे स्वामी! मैं आपकी शरण

खवामित् ! शरण् छु भनि खुप्सित बिन्ति लाया ।
श्रीराम् तहाँपछि त पञ्चवटी त आया ॥२५॥

डेरा पऱ्यो प्रभुजिको तहिं बीच बन्मा ।
एकान्त देखिकन हर्ष भयो र मन्मा ॥
आनन्द पूर्वक रह्या रघुनाथ ताहीं ।
आर्को त आश्रम नजीक थियेन काहीं ॥२६॥

एकान्त देखिकन लक्ष्मणले चरण्मा ।
बिन्ती गरया रघुपती ! म त छू शरण्मा ॥
ज्ञान् कुन् कहिन्छ भनि कुन् त कहिन्छ विज्ञान् ।
जान्दीनँ केहि म विषे त ठुलो छ अज्ञान् ॥२७॥

आज्ञा हवस् सकल तत्त्व म सुन्न पाउँ ।
जान्नया पुरुष् अरु छ को र करा म जाऊँ ॥
यो बिन्ति लक्ष्मणजिको सुनि हर्ष पाया ।
लक्ष्मण्जिलाइ सब तत्त्व तहाँ बताया ॥२८॥

यै ज्ञान् कहिन्छ सुन येहि कहिन्छ विज्ञान् ।
यो रीत् गरीकन बस्या हुँदि छुट्छ अज्ञान् ॥
खोलेर येहि रितले प्रभुले बताया ।
लक्ष्मण्जिले पनि तहाँ सब तत्त्व पाया ॥२९॥

यै बीचमा नजिक शूर्पणखा त आई ।
देख्या तहीं प्रभुजिले पनि दुष्टलाई ॥

में हूँ । इसके बाद श्री राम पंचवटी चले गये । २५ उसी वन के मध्य में श्रीराम जी का डेरा पड़ा । निकट में और कोई आश्रम नहीं था । एकान्त स्थान देख वे मन में हर्षित हुए और आनन्दपूर्वक वहीं रहने लगे । २६ एकान्त वन को देखकर लक्ष्मण ने श्रीरघुपति से कहा कि मैं आपकी शरण में हूँ । ज्ञान-विज्ञान का मुझे कोई ज्ञान नहीं । यही मुझमें अज्ञानता है । २७ अत: सब तत्त्वों को मुझे सुनाने की कृपा करें, क्योंकि यहाँ और अन्य कौन पुरुष है, जिसके पास मैं जाऊँ । लक्ष्मण की यह विनती सुनकर राम अत्यन्त हर्षित हुए और उन्हें तत्त्वज्ञान का उपदेश दिया । २८ ज्ञान-विज्ञान के विषय में समझा कर तथा किस रीति से अज्ञान का नाश होता है, यह सभी स्पष्ट रूप से प्रभु ने बताया और लक्ष्मण ने भी उन सब तत्त्वों को सीख लिया । २९ इसी बीच शूर्पणखा भी वहाँ आ

कन्दर्पका बश परी प्रभुको नजीक् गै ।
सोधी तहाँ प्रभुजिलाइ बहूत खुश् भै ॥३०॥
नाम् सब् कह्या प्रभुजिले जब नाम सूनी ।
ऐले म भज्दछु पति भनि येति गूनी ॥
बिन्ती गरी मकन पत्नि बनाइलेऊ ।
कन्दर्पको कठिन ताप छुटाइदेऊ ॥३१॥
यस्ता वचन् सुनि सिताकन हाँसि हेरी ।
उत्तर् दिया प्रभुजिले सँगमै छ मेरी ॥
सीता बुझीकन नभज् तँ पती मलाई ।
भाई छ खालि बरु भज् पति भाइलाई ॥३२॥
साँचो भन्या भनि त लक्ष्मणका नजीक् गै ।
आयाँ म पत्नि हुन येति भनेर खुश् भै ॥
सून्या वचन् सकल लक्ष्मणले र ताहाँ ।
दास् हूँ म ता मसित कुन् सुख मिल्छ याहाँ ॥३३॥
जा वाहिं मालिक उ हुन् उहिं वस्नु अच्छा ।
बुद्धी रहेनछ बहुत् रहिछस् तँ कच्चा ॥
यस्ता वचन् सुनि र शूर्पणखा रिसाई ।
सीताजिलाइ अब खाँ भनि फर्कि आई ॥३४॥

गयी । प्रभु ने भी उस दुष्टा को देखा । घमण्ड के वशीभूत हो अत्यन्त ह
से भरी वह प्रभु के निकट गयी और उनसे प्रश्न किया। ३० प्रभु ने अप
परिचय दिया । उसने जब प्रभु का नाम सुना तो मन में कुछ सोचव
विनती की कि मुझे भी अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कर कामदेव के कठि
ताप से मुक्त करने की कृपा करें । ३१ ऐसे वचन सुनकर सीता की अ
हँसकर देखते हुए प्रभु ने उत्तर दिया कि घर में मेरी पत्नी सीता बैठी
अतः मुझे तुम पति न कहो । भाई लक्ष्मण अकेला है अतः उसे ही प
कहकर भजो । ३२ इस कथन को सत्य मानकर शूर्पणखा लक्ष्मण
निकट गयी और पत्नी बनने की इच्छा प्रकट करके अत्यन्त हर्षित हुई
लक्ष्मण ने उसकी बातें सुनकर कहा कि मैं तो राम का दास हूँ, मुझ
तुम्हें यहाँ क्या सुख प्राप्त हो सकता है । ३३ जहाँ अपना मालिक है, व
रहना उत्तम है । तुम बुद्धिहीन हो और ज्ञान में परिपूर्ण नहीं ह
ऐसे वचन सुनकर शूर्पणखा क्रोधित हुई और सीता जी को भक्षण करने
लिए दौड़ी । ३४ पृथ्वी के भारहरण-हेतु प्रभु ने बीज बोया और लक्ष

भार् हर्न वीज् प्रभुजिले तहिं रोप्न आँट्या ।
लक्ष्मणजिलाइ भनि नाक र कान काट्या ॥
आज्ञा लि लक्ष्मणजिले पनि काटिदीया ।
भागी डराइकन भाइ जहाँ त थीया ॥३५॥

विस्तार् गरी त्रिशिर दूषण खर् भन्याका ।
राक्षस् पनी सुनि ति अग्नि सरी बन्याका ॥
आया जहाँ प्रभु थिया तहिं तीन भाई ।
लश्कर् समेत् अधिक जल्दि कदम् बढाई ॥३६॥

राक्षस् भनी प्रभुजिले तहिं चाल पाया ।
लक्ष्मणजिलाइ तहिं काम् प्रभुले अह्राया ॥
हे भाइ ! आज तिमिले इ सिताजिलाई ।
गूफाविषे लागि बसीरहु जल्दि जाई ॥३७॥

एक् बात् नबोलिकन जल्दि उठेर जाऊ ।
संग्रामको वखत भो अब बेर् नलाऊ ॥
मार्छु म दुष्टकन तेज् अधिकै जनाई ।
चौधै हजार्कन सहज् टुकुरा बनाई ॥३८॥

यस्तो हुकूम् हुन गयो र सिताजिलाई ॥
लक्ष्मणजिले सँग लिईकन जल्दि जाई ।
गूफाविषे बसिरह्या रघुनाथ् तयारी-
चाँडै भया धनु र बाणहरु ठिक्क पारी ॥३९॥

जी के द्वारा शूर्पणखा की नाक और कान दोनों कटवाये । इससे भयभीत होकर शूर्पणखा अपने भाई के पास भाग खड़ी हुई । ३५ खर, दूषण तथा त्रिशिरा राक्षसों को शूर्पणखा ने विस्तारपूर्वक सारी घटना सुनायी, जिसे सुनते ही अग्नि के समान अपनी सेना को लेकर शीघ्रता से तीनों भाई वहाँ पहुँचे, जहाँ प्रभु विराजमान थे । ३६ प्रभु जी ने राक्षसों को पहचान कर लक्ष्मण को कार्य सौंपते हुए कहा, "हे भाई ! आज तुम सीता को लेकर गुफा के बीच जाकर रहो । ३७ कुछ भी न कहकर शीघ्रता से उठकर चले जाओ । संग्राम का समय आ गया है, अब देर न करो । दुष्टों को मैं तीव्रता से मार डालूँगा और चौदह हजार सेनाओं को सहज ही में टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा । ३८ ऐसी आज्ञा पाकर लक्ष्मण जी सीता जी को लेकर तुरन्त चले गये और गुफा के अन्दर बैठे रहे । श्रीरघुनाथ भी धनुष

आया खर त्रिशिर दूषण तीन भाई ।
लश्कर् समेत् सँग लिईकन रिस् बढाई ॥
ठाकुर्जिका उपर बाणकि वृष्टि पाऱ्या ।
ठाकुर्जिले पनि ति बाण् सब काटि टाऱ्या ॥४०॥
तिन्का ति सर्व हतियार्हरु काटि टारी ।
सम्पूर्ण राक्षसहरूकन जल्दि मारी ॥
काटचा खर त्रिशिर दूषणलाइ ताहाँ ।
सम्पूर्ण राक्षस सक्या घरि चारमाहाँ ॥४१॥
माऱ्या खर त्रिशिर दूषणलाइ जस्सै ।
सीता र लक्ष्मण पनी प्रभुसीत तस्सै ॥
आया डराइकन शूर्पणखा त भागी ।
रावण् जहाँ छ उहिं जाँ भनि जान लागी ॥४२॥
रावण् जहाँ छ उहिं पौंचि विलाप गर्दै ।
सब् भाइ बन्धुहरुको मनलाइ हर्दै ॥
देख्यो तहाँ बहिनिलाइ त नाक् गयाकी ।
त्यो फेरि बुज्झि पनि कान नभै रह्याकी ॥४३॥
माया भयो बहिनिमाथि र झट्ट ऊठ्यो ।
विस्तार सोध्न नजिकै पनि जल्दि छूट्यो ॥

और बाणों को ठीक करके तत्परता से तैयार हो गये । ३९ खर, त्रिशिरा और दूषण तीनों भाई अत्यन्त कुपित हो सेना-सहित आ गये । उन्होंने राम के ऊपर बाणों की वृष्टि की । श्रीराम ने भी उन सब बाणों को काटकर नष्ट कर दिया । ४० उनके सारे हथियारों को काट कर सब राक्षसों को भी तुरन्त मार डाला । चार घण्टे के अन्दर खर, त्रिशिरा और दूषण-सहित सारी राक्षस-सेना को समाप्त कर दिया । ४१ जैसे ही खर, त्रिशिरा और दूषण का बध हुआ, वैसे ही सीता और लक्ष्मण भी प्रभु के पास आ गये । और शूर्पणखा भयभीत होकर रावण के पास भाग गयी । ४२ रावण के पास पहुँच कर वह विलाप करने लगी । उसके दुःख से सभी भाई-बन्धु प्रभावित हो गये । उन्होंने बहन की नाक कटी हुई देखी तथा उसको कानों से भी विहीन देखा । ४३ बहन की इस अवस्था को देख वे सब करुणा से परिपूर्ण हो गये और उसके निकट जाकर उसी समय सारा हाल विस्तारपूर्वक जानने की जिज्ञासा प्रकट की । उन्होंने पूछा, हे बहन, तेरी नाक और कान काटनेवाला यह कौन

हे बैनि ! कुन् पुरुष हो भन नाक काट्न्या ।
खूबै रहेछ सहजै पनि मर्न आँट्न्या ॥४४॥

जस्ले त नाक् सित इ कान्कन आज काट्यो ।
हे बैनि ! जान सुन त्यो अग मर्न आँट्यो ॥
यस्ता वचन् सुनि र नाम समेत् बताई ।
सीता र लक्ष्मण सहित् रघुनाथलाई ॥४५॥

ती छन् पराक्रमि त पञ्चबटी बस्याका ।
ठोक्रा भिरीकन धनू पनि खुप् कस्याका ॥
गर्छू विचार मनले त यही म मान्छु ।
सब् भस्म पो गरिदिनन् कि भनेर ठान्छु ॥४६॥

आईरह्याँछु म त खुप्सित मन् डराई ।
फिर्छन् ति सर्व ऋषिलाइ त खुश् गराई ॥
आश्चर्य मानिकन दौडि म याहिं आयाँ ।
विस्तार पनी हजुरमा सब बिन्ति लायाँ ॥४७॥

सीताजिलाइ अति सुन्दरि मानि ताहाँ ।
ल्याऊँ टपक्क टिपि सुन्दरिलाइ याहाँ ॥
भन्ना-निमित्त अति चित्त धरी गयाकी ।
पायाँ विपत् नकटि बुच्चि समेत् भयाकी ॥४८॥

ल्याऊ समर्थ छ भन्या तिमि आज जाऊ ।
साम्ने त हर्न छ कठिन् तिमि मन् नलाऊ ॥

पुरुष है, जिसने सहज ही अपनी मृत्यु को आमंत्रित किया है। ४४ जिसने भी यह कुकर्म किया है, हे बहन, तुम यह जान लो कि अब वह मृत्यु को प्राप्त होनेवाला है। यह सुनकर शूर्पणखा ने सीता, लक्ष्मण और राम के नाम बता दिये। ४५ पंचवटी में तीन पराक्रमी हैं, जो तरकस एवम् धनुष-बाण धारण किये हैं, मुझे ऐसा लगता है कि ये सबका नाश कर देंगे। ४६ मैं अत्यन्त भयभीत होकर आ रही हूँ। ऋषियों को प्रसन्न करके वे घूमते रहते हैं। उनके कार्यों से चकित हो कर मैं दौड़ कर यहाँ आयी हूँ और आपके सम्मुख विस्तारपूर्वक विनती की है। ४७ सीता जी अपूर्व सुन्दरी हैं, उसे उठाकर आप यहाँ ले आयें, यही मन में विचार करके आपसे कहने आयी हूँ। नाक-कान से रहित हो कर अत्यन्त कष्ट पा रही हूँ। ४८ यदि आप में सामर्थ्य है तो आज ही जाकर सीता

एक् युक्तिले छल गरीकन हर्नुपर्ला।
साम्ने कदापि नगया तहिं देह मर्ला ॥४९॥
तेस्ले बहुत भयमा परि बात् गऱ्याको।
लश्कर् समेत् त्रिशिर दूषण खर् मऱ्याको॥
सून्यो र बैह्निकन खातिर खूब दीयो।
एकान्तमा गइ लहड् पनि खूब लीयो॥५०॥
सामान्य मानिस भया कसरी ति माऱ्या।
लश्कर् खर त्रिशिर दूषण छुट्टि पाऱ्या॥
सामान्य होइन इ ता परमेश्वरै हुन्।
नाहीं त भाइहरुको अघि तिक्तथ्यो कुन्॥५१॥
ईश्वर् भया हुँदि कसै पनि मार्दछन् ती।
सामान्य हुन् पनि भन्या हरुँला सिताजी॥
ईश्वर् भया हुँदि विरोध् गरि खुश् हुन्याछन्।
रीसै हुन्याछ भजुँला त ममाथि ता झन्॥५२॥
येती विचार् गरि तऱ्यो र समुद्र पारि।
मारिच् जहाँ छ ऋषिको सरि रूप धारी॥
पुग्यो तहाँ र रथ राखि नजीक् गयाको।
विस्तार् गऱ्यो खरहरू सब नाश् भयाको॥५३॥

को ले आओ। पहले यह सोच लो कि सीता का सामने से हर करना कठिन है। एक युक्ति से उसे हरण करना होगा, सामने कदा न जाना, वर्ना मारे जाओगे। ४९ सेना-सहित खर, त्रिशिरा और दूष के मारे जाने की ख़बर सुनकर रावण अत्यन्त भयभीत हुआ, फिर भी उस अपनी बहन को सान्त्वना दी और एकान्त में जाकर अपने मन को ब प्रयत्न से उत्साहित किया। ५० राम द्वारा अपने भाइयों के संहार व समाचार सुनकर रावण बड़ी चिन्ता में पड़ जाता है। वह सोचता है f यह राम कौन हो सकता है? जो भी हो यह कोई साधारण मनुष्य t नहीं है, अवश्य ही यह परमेश्वर है; यदि यह साधारण मनुष्य होता तो मे भाइयों के सम्मुख कैसे टिक पाता? ५१ यदि राम ईश्वर होंगे तो किस प्रकार से मार लेंगे और यदि साधारण मनुष्य होंगे तो मैं सीता का हर कर लूँगा। ईश्वर होंगे तो मेरे विरोध पर वह प्रसन्न होंगे और भज करने से मुझ पर क्रोधित होंगे। ५२ यह विचार करके ऋषि के समा रूप धारण कर वह समुद्र पार मारीच के पास पहुँचा। रथ को वह

यस्तो पऱ्यो मकन आज सहाय देऊ।
सुन्दर् ठुलो मृग स्वरूप् तिमि आज लेऊ॥
राम्‌चन्द्रलाइ छलि दूर् तिमिले गराया।
सीता जसै म हरुँला तब फर्कि आया॥५४॥

मारीचले यति हुकूम् जब ताहिं सून्यो।
तेस्तो हुकुम् सुनि तहाँ मनभित्र गून्यो॥
बिन्ती गऱ्यो सकल तेज् प्रभुको जनाई।
स्वामित् भनेर मनले जय खुप् चिताई॥५५॥

कस्ले गऱ्यो र उपदेश् तिमि आज आई।
सीता म हर्छु मृग हो तँ भन्यो मलाई॥
त्यौ शत्रु हो तिमि त्यसैकन मार ताहाँ।
कूलै समेन् क्षय गराउन खोज्छ याहाँ॥५६॥

को सक्छ जित्न र ठुलो तिमि सूर गर्छौ।
यो सूर् लिया कुल समेत् तिमि आज मर्छौ॥
एक् बाणले मकन चार् सय कोश साऱ्या।
बालक् थिया तपनि भस्म सुबाहु पाऱ्या॥५७॥

खड़ा करके उसके निकट पहुँचा और खर आदि के मारे जाने के वि में सविस्तार कह सुनाया। ५३ मेरे ऊपर आज ऐसी समस्या आ प है, तुम मेरी सहायता करो। तुम आज एक अत्यन्त सुन्दर मृग का धारण करो और छल से रामचन्द्र को दूर तक ले जाओ और जैसे ही सीता का हरण कर लूँ, वैसे ही तुम चले आना। ५४ मारीच ने यह आ सुनकर अपने मन में विचार किया और प्रभु के सम्पूर्ण पराक्रम का व कर विनती की, और स्वामी कहकर मन में जय-जयकार किया। उसने कहा कि किसके उपदेश को सुनकर आज तुम आकर सीता-ह के लिए मुझे मृग बनने को कह रहे हो। यदि वह शत्रु है तो तुम ही मार डालो, नहीं तो वह तुम्हारा सम्पूर्ण कुल ही समाप्त कर देगा। उन्हें कौन जीत सकेगा, जो तुम ऐसी धारणा बना रहे हो। ऐसा विच करना उचित तथा कल्याणकारी नहीं, उनसे युद्ध करने पर तुम कुल-स नष्ट हो जाओगे। उनके बाण के एक प्रहार से मैं चार सौ कोस जा गिरा। जिस समय वह एक बालक थे, उस कोमल अवस्था में उन्होंने सुबाहु को भस्म कर दिया। ५७ आज मैं मृग-रूप धा करके वन में गया। उनके एक ही बाण ने मुझे पछाड़ दिय

आज्काल् गयाँ वनविषे मृग-रूप धारी ।
एक् बाणले यहि पनी त दिया पछारी ॥
छाद्‌दै रगत् अति डरायर भागि आयाँ ।
जावैन भन्छु अब खुप् सित चेत पायाँ ॥५८॥
तस्मात् तिमी पनि विरोध् मति यो नलेऊ ।
सीता म हर्छु भनि आग्रह छाड़िदेऊ ॥
सब् नष्ट हुन्छ तिमिले मति यस्ति लीया ।
देख्यौ खर त्रिशिर दूषण मारिदीया ॥५९॥
हीतै कहन्छ भनि यो तिमि जानिलेऊ ।
आर्को कहन्छु म गुठिल् तिमि चित्त देऊ ।
ई ता अनन्त अधिनाथ् परमेश्वरै हुन् ।
ब्रह्माजिले पनि भजिन्छ सदा पुरुष् जुन् ॥६०॥
नारद्‌जिका वचन सूनि म आज भन्छु ।
स्वामित् ! म ता हित चिताइ सदा रहन्छु ॥
लौ मार रावण भनी वरदान माग्या ।
ब्रह्माजिले र उहि सुर् प्रभु गर्न लाग्या ॥६१॥
जाऊ घरै बसिरहू मति यो नलेऊ ।
ईश्वर् बुझेर उहि माफिक चित्त देऊ ॥

रक्त-वमन करते हुए अत्यन्त भयभीत होकर मैं भाग कर आया हूँ । अब मैं चैतन्य हो गया हूँ, अब वहाँ नहीं जाऊँगा । मैं सम्हल गया हूँ और उनके पराक्रम को समझ गया हूँ । ५८ अतः तुम इस विरोध करने की भावना को त्याग दो । सीता-हरण का विचार छोड़ दो । ऐसे विचारों से, तुम्हारा सर्वनाश होगा । उन्होंने खर, त्रिशिरा और दूषण का वध कर दिया सो तुमने देख ही लिया है । ५९ मैं तुम्हारे हित की बात कहता हूँ, इसे समझो । एक और विशेष रहस्य की बात कहता हूँ, उसे ध्यान लगाकर सुनो । ये तो अनन्त अधिनाथ परमेश्वर ही हैं; इनको स्वयं ब्रह्मा जी ही नित्य भजते हैं । ६० आज मैं नारदजी द्वारा बतायी हुई बातें कहता हूँ । स्वामी ! मैं तो सदैव हित का ही चिन्तन करता हूँ । ब्रह्मा से रावण-वध का वरदान माँगा और तदनुसार प्रभु ने उसके लिए तत्परता दिखायी । ६१ अपनी बुद्धि से ऐसी बातों को निकाल दो और घर में जा कर रहो । उन्हें ईश्वर समझकर उनका ध्यान करो । प्रभु जो करते हैं, करें, यह उनकी लीला है । उसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप उचित नहीं ।

जो गर्दछन् प्रभु गरुन् छ लिला उनैको ।
चल्दैन जोर् प्रभुविषे अरुका कुनैको ॥६२॥

मारीचले जब त बात् यति सब् बतायो ।
झन् बात् सुनी बुझि त खुप्सित चित्त लायो ॥
मारीचलाइ अनि रावण भन्छ हेरी ।
सीता म हर्छु मृग भैकन जाउ फेरि ॥६३॥

ईश्वर् त हुन् यदि भन्या ति अवश्य मार्छन् ।
सामान्य हुन् यदि भन्या ति अवश्य हार्छन् ॥
ईश्वर् भया पनि असल् छ अवश्य तर्छु ।
सामान्य हुन् त म सितासँग भोग गर्छु ॥६४॥

जाऊ अवश्य म सिताजि हरेर लिन्छु ।
बोल्यौ यहाँ कछु भन्या त म काटिदिन्छु ॥
यस्तो हुकूम् गरि तहाँ जब बीच पार्‍यो ।
मारीचले पनि तसै जिय आश मार्‍यो ॥६५॥

आखिर् मर्‍याँ म हरिदेखि भन्या त तर्छु ।
यस् दुष्टदेखि मरिया त नरक् म पर्छु ॥
यस्तो विचार् गरि तहाँ मृगरूप धारी ।
सुकूम् शिरोपर धरीकन भो तयारी ॥६६॥

प्रभु के ऊपर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ सकेगा । ६२ मारीच से यह सब बातें ध्यान से सुनकर रावण कहता है कि तुम पुनः मृग बन कर चले जाओ—मैं सीता का हरण करूँगा । ६३ यदि वे ईश्वर होंगे तो अवश्य मुझे मार डालेंगे, अन्यथा स्वयं ही पराजित होंगे । यदि वे ईश्वर होंगे तो उनके हाथ से मारे जाने पर मैं तर जाऊँगा, अन्यथा सीता के संग भोग करूँगा । ६४ तुम अवश्य जाओ—मैं सीता को हर कर ले आऊँगा । अब तुम आगे कुछ मत कहो, अन्यथा मैं तुम्हारा वध कर डालूँगा । रावण की ऐसी आज्ञा को सुनकर मारीच ने भी अपने जीवन की आशा छोड़ दी । ६५ उसने सोचा—यदि मैं प्रभु के हाथों से मरूँगा तो तर जाऊँगा, इस दुष्ट द्वारा मारे जाने से तो मैं नरक को ही प्राप्त होऊँगा, इसलिए ईश्वर के हाथों मारा जाना ही उचित होगा । यह सोच कर मारीच ने मृग-रूप धारण किया और रावण की आज्ञा को स्वीकार करते हुए तैयार हो गया । ६६ बड़े ही विचित्र ढंग से उछलते-कूदते हुए सीताजी

दौड्यो लिला पनि चरित्र विचित्र गर्दै ।
सीताजिका नजिक गैकन ताहिं फिर्दै ॥
सीताजिलाइ गरुँ मोह भनेर दाग्यो ।
लीला गरीकन वरीपरि चर्न लाग्यो ॥६७॥

छल् हो भनी प्रभुजिले पनि चाल पाया ।
एकान्तमा गइ सिताकन काम् अह्राया ॥
सीते ! अदृश्य भइ लौ बस अग्निमाहाँ ।
छाया सिता पनि बनायर छोड याहाँ ॥६८॥

एक् भिक्षुको रुप लि रावण आज आई ।
हर्न्याछ दुष्ट तिमिलाइ स्वरूप् छिपाई ॥
चाँडो अवश्य तिमिले पनि रूप् छिपाऊ ।
एक् वर्षसम्म छिपि दिन् तिमिले बिताऊ ॥६९॥

यस्तो हुकूम् सुनि अदृश्य सरूप धारी ।
छाया सिता पनि दुरुस्त गरिन् तयारी ॥
सीता छिपीकन रहिन् जब अग्निमाहाँ ।
छाया सिता-सँग बस्या रघुनाथ ताहाँ ॥७०॥

छाया सिताजि अति चित्र विचित्र मानी ।
खेलाउँ तेस मृगलाइ भनेर ठानी ॥
बिन्ती गरिन् रघुपते ! मृग आज देऊ ।
खेलाउँछू अधिक जाति छ पक्रिलेऊ ॥७१॥

को आकर्षित करने के लिए वह उनके निकट जाकर चरने लगा । ६
प्रभुजी ने इस छली मृग को पहचान कर सीता से कहा कि हे सीते, तु
अग्नि में अदृश्य होकर रहो और यहाँ अपनी जगह पर छाया-रूपी सीत
को रख दो । ६८ एक भिक्षु के रूप में रावण यहाँ आज आयेगा औ
वह दुष्ट इस छद्म वेष में तुम्हें हरण करेगा । अतः तुम भी तुरन्त अपन
रूप छिपा लो और इसी प्रकार तुम एक वर्ष व्यतीत करो । ६९ ऐसं
आज्ञा सुनकर सीताजी अदृश्य हो गयीं और छाया-रूपी सीता को रखक
स्वयं अग्नि में छिप गयीं । रघुनाथ छाया रूपी सीता के संग वहाँ रहे । ७
छाया-रूपी सीता ने अत्यन्त आश्चर्य-चकित होकर उस मृग से खेलने
विचार से रघुनाथ से विनती की—हे रघुपति ! इस सुन्दर मृग को पक
कर आज ही ला दें, मैं उससे खेलूँगी । ७१ सीताजी की विनती सुनक

इच्छा थियो प्रभुजिको पनि बिन्ति सूनी ।
जानू असल् छ भनि यो मनभित्र गूनी ॥
हात्मा धनू लि मृगका पछि आफु धाया ।
लक्ष्मण्जिलाइ बस तीमि भनी अह्राया ॥७२॥

लक्ष्मण् रह्या तहिँ सिता-सित चौकिदारी ।
मारीचलाइ प्रभुले पनि खुप् लघारी ॥
मार्‍या तहाँ जब त दिक् बहुतै गरायो ।
हे भाइ लक्ष्मण ! मर्‍याँ भनि छल् करायो ॥७३॥

छल्का वचन् सुनि सिताजि बहुत् डराइन् ।
लक्ष्मण्जिलाइ तिमि जाउ भनी अह्राइन् ॥
लक्ष्मण्जिले हुकुम यो सुनि बिन्ति पार्‍या ।
हे माइ ! जो मृग थियो प्रभुले त मार्‍या ॥७४॥

तेस्तो कहाँ मृग थियो मृगरूप-धारी ।
मारीच राक्षस थियो र त आज मारी ॥
ठाकूर्जिले तहिँ गिराइदिँदा करायो ।
हे भाइ लक्ष्मण ! मर्‍याँ भनि छल् गरायो ॥७५॥

ज्योतिस्वरूप् तहिँ भयो र मिल्यो हरीमा ।
आश्चर्य भो सकललाइ तसै घरीमा ॥
यस् दुष्टले पनि त यो गति आज पायो ।
भन्न्या बुझेर सब जन्कन हर्ष आयो ॥७६॥

प्रभुजी की आन्तरिक इच्छा हुई कि मुझे जाना ही उत्तम है। वे धनुष हाथ में लेकर मृग के पीछे दौड़ पड़े। लक्ष्मणजी को वहीं रहने की आज्ञा दी। ७२ लक्ष्मण सीता के संरक्षक बनकर वहीं रहे। प्रभु ने भी मारीच को बड़ी दूर तक दौड़ने के बाद मारा। मारीच (प्रभु को) दुविधा में डालने के लिए छलपूर्ण स्वर में चिल्लाया—'मर गया'। ७३ इस छलनामय पुकार को सुनकर सीता अत्यन्त भयभीत हुई। लक्ष्मण को तुरन्त आज्ञा दी कि वे राम की सहायता के लिए दौड़ें। लक्ष्मण ने उनकी यह आज्ञा सुनकर विनती की कि हे माता, जो मृग था, उसे प्रभु ने मार डाला है। ७४ वह मृग नहीं था, वह तो मृग-रूपी मारीच था, जो प्रभु द्वारा मारे जाते ही "हे भाई लक्ष्मण मरा" कहकर चिल्लाया। ७५ वह ज्योति-स्वरूप धारणकर हरि में विलीन हो गया। उस समय सबको आश्चर्य

लक्ष्मण्जिको वचन् सुनि सिता रिसाइन् ।
आँसू बहुत् नजरदेखि पनी खसाइन् ।।
बोलिन् अवाच्य पनि लक्ष्मणलाइ ताहाँ ।
भज्ली मलाइ भनि मन् छ कि आज याहाँ ।।७७।।
राम्देखि बाहिक अवर् त भजैनँ मैले ।
तिम्रै अगाडि यहि छोड्दछु देह ऐले ।।
तिम्रो त चित्त अति दुष्ट रहेछ जान्याँ ।
काम् देखि आज तिमिलाइ त शत्रु मान्याँ ।।७८।।
यस्तो वचन् सुनि ति लक्ष्मणजी रिसाया ।
बोलिन् अवाच्य भनि भिन्न मनै चिताया ।।
धिक् चण्डि ! येति भनि खुप् सित चट्पटाया ।
वन्-देविलाइ रखवारि तहाँ खटाया ।।७९।।
सीताजिलाइ तहिं छोडि उठी गयाका ।
दूरै हुँदा नजरदेखि फरक् भयाका ।।
देख्यो र रावण सितातिर जल्दि आयो ।
सन्न्यासिको स्वरुप लीकन रूप् छिपायो ।।८०।।
सन्यासि हुन् भनि बहुत् गरि भक्ति लाइन् ।
पूजा प्रणाम् पनि गरीकन हर्ष पाइन् ।।

हुआ कि दुष्ट को भी यह मोक्षगति प्राप्त हुई है और साथ ही यह जान कर सबको हर्ष भी हुआ। ७६ लक्ष्मणजी के वचन सुनकर सीताजी क्रोधित हुई। उनके नेत्रों से अश्रु प्रवाहित होने लगे। उन्होंने लक्ष्मण को अपशब्द भी कहे और कहा कि कदाचित् तुम यह समझते हो कि राम को कुछ हो जायगा तो उनकी अनुपस्थिति में मैं तुम्हारी सेवा करने लगूँगी। ७७ राम के अतिरिक्त मैं किसी की सेवा नहीं करूँगी। यहाँ तुम्हारे सामने मैं अपने प्राणों को त्याग दूँगी। तुम्हारे इस पापी मन को मैं आज ही पहचान सकी हूँ। आज से मैं तुम्हें अपने शत्रु के समान मानती हूँ। ७८ सीता के इस प्रकार के वचनों को सुनकर लक्ष्मण को क्रोध आया। उनके अपशब्दों को सुनकर निवेदन किया—'धिक्कार चण्डी!' कहकर खूब बड़बड़ाये। वन-देवी को (उनकी) रक्षा-हेतु नियुक्त किया। ७९ सीताजी को अकेली छोड़कर लक्ष्मण के आँखों से ओट होते ही रावण सीता के पास आया। उसने अपने वास्तविक रूप को छिपाकर एवं संन्यासी का रूप धारण करके सीता को छलने की युक्ति की। ८०

बिन्ती गरिन् बस गुरो ! प्रभु फर्कि आई ।
गर्नन् बहुत् प्रिय हजूर्कन चित्त लाई ॥८१॥
यस्ता वचन् सुनि सितातिर दृष्टि दींदो ।
को हो पती बुझुँ भनीकन गुह्य लींदो ॥
सोध्या सितासित पती पनि जो छ को हो ।
नाम् काम् समेत् तिमि बताउ न आज जो हो ॥८२॥
सीताजिले पनि भनिन् सब जो छ नाम् काम् ।
सन्यासि जानिकन कत्ति नपारि छल्छाम् ॥
सोधिन् तहाँ म पनि नाम्हरु सुन्न पाऊँ ।
कुन् हो बताउ तिमिले पनि नाम ठाऊँ ॥८३॥
यस्ता वचन् सुनि सिताकन हर्न आँटी ।
नाम् काम् तहाँ सब कह्यो रतिभर् नढाँटी ॥
बोल्यो अवाच्य पति मानि मलाई लेऊ ।
राम्चन्द्रलाइ तिमिले अब छाडिदेऊ ॥८४॥
यस्तो वचन् सुनि अलिक् यनले डराइन् ।
बात्ले त दुष्टकन तृण् सरिको गराइन् ॥
हे दुष्ट रावण ! अवश्य त आज मर्लास् ।
ऐले जसै प्रभुजिका अगि याहिं पर्लास् ॥८५॥

संन्यासी समझकर सीताजी उसके प्रति भक्ति-भावना से परिपूर्ण होकर विनती करने लगीं। उन्होंने कहा कि आप विराजें। प्रभु अभी लौटकर आते होंगे और तब वह आपका उचित स्वागत-सत्कार करेंगे और भक्ति-वार्ता करेंगे। ८१ यह सुनकर संन्यासीरूपी रावण ने सीताजी की ओर प्रश्नपूर्ण दृष्टि से देखा और कहा कि तुम्हारे पति कौन हैं, नाम और काम-सहित बताओ। ८२ सीताजी ने भी उसे वास्तव में संन्यासी ही समझकर सविस्तार सब कुछ कह सुनाया। तत्पश्चात् संन्यासी का परिचय तथा निवास-स्थान जानने की जिज्ञासा प्रकट की। ८३ यह सुनकर रावण ने सीताजी को हरण करने का निश्चय करके अपना पूर्ण परिचय देते हुए कहा कि अब तुम मुझे ही अपना पति मान लो और रामचन्द्र को हृदय से त्याग दो। ८४ उसके ऐसे वचनों को सुनकर सीताजी लेश-मात्र भी भयभीत नहीं हुई और उस दुष्ट को एक तिनके के समान समझकर कहा, हे दुष्ट रावण ! आज तू प्रभु के लौटने पर अवश्य ही उनके हाथों से मारा जायेगा। ८५ ऐसी वाणी सुनकर रावण अत्यन्त

यस्ता वचन् सुनि रिसायर जल्दि ऊठ्यो ।
धाऱ्यो सरूप् र अब हर्छु भनेर छूट्यो ॥
बीस् बाहु दश् मुख शरीर् पनि शुद्ध कालो ।
देखाइ सब्कन तरास् मन-भित्र हाल्यो ॥८६॥

सीताजीलाइ मन्ले चिह्निकन मनसा मातृवत् बुद्धि गर्दो ।
हात्ले मैले छुँदामा अनुचित छ भनी स्पर्श केही नगर्दो ॥
आफ्ना नङ् सब् जमीन्मा धसिकनजमिनैजल्दि हात्ले उठायो ।
सीताजीलाइ रथ्मा धरिकन दगुऱ्यो रामदेखी छुटायो ॥८७॥

हा राम् ! लक्ष्मण! येति मात्र मुखले बोलेर साह्रै रुँदी ।
तन् मन् रामविषे धरेर बहुतै विह्वल् निरन्तर् रुँदी ॥
देख्या ताहिं जटायुले र उडि गै रथ् चूर्ण पारीदिया ।
घोडा चूर्ण गराइ फेर् धनु समेत् टुक्टुक् गराईदिया ॥८८॥

रावण् झन् वीर थीयो झटपट करमा क्रोधले खड्ग लीयो ।
काट्यो दूवै पखेटा रिससित र तहाँ भूमिमा पारिदीयो ॥
बाधा पाई जटायू पृथिवितल गिऱ्या फेरि रथ्को तयारी ।
जल्दी पाऱ्यो र सीता लिइकन पुगिगो दुष्ट त्यो सिन्धु पारि ॥८९॥

क्रोधित हुआ और तत्क्षण उठकर खड़ा हो गया और अपना वास्तविक रूप धारण किया। तब सीताजी को हरण करने के लिए बीस भुजाओं तथा दस शीशोंवाले अपने रूप को प्रदर्शित कर अपने मन में आवेग उत्पन्न किया। ८६ सीताजी को हृदय से पहचान कर माता-तुल्य समझकर अपने हाथों से स्पर्श करना अनुचित समझा, अतः उसने अपने नाखूनों को भूमि में धँसाकर सीताजी को जमीन-सहित उठाकर रथ में रख लिया और राम से विलग कर ले गया। ८७ हा राम ! हा लक्ष्मण ! केवल इतना ही सीताजी के मुख से निकल पाया और वह अत्यन्त व्याकुल होकर विलाप करने लगीं। केवल राम को ही अपने ध्यान में बसाये हुए मन ही मन अपना तन-मन राम को अर्पण करती हुई वह बार-बार विलाप करती रहीं। मार्ग में उनकी ऐसी दशा देख जटायु उनकी सहायता को दौड़ा और उसने रावण के रथ को चूर-चूर कर दिया। घोड़ों को भी मार डाला और रावण के धनुष के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। ८८ रावण तो वीर था ही। उसने तुरन्त तलवार खींचकर क्रोधित जटायु के दोनों परों को काटकर उसे धराशायी कर दिया। पंखों से विहीन जटायु भूमि पर गिर पड़ा। शीघ्र ही रावण ने रथ तैयार किया और सीताजी को

आकाश्मा जब ऋष्यमूक गिरिका ऊपर् पुगीथिन् जसै ।
आफ्ना सब् गहना फुकालि बलियो पोको बनाइन् तसै ॥
राम् लक्ष्मण्कन यो दिउन् भनि तहाँ पोकै खसालिन् पनि ।
सुग्रीव्ले त गुफाविषे धरिलिया कस्ले खसाल्यो भनी ॥९०॥

सीताजीलाइ लङ्का लगिकन मनमा मातृवत् बुद्धि गर्दो ।
भित्री जुन् हो बगैंचा तहिं असल अशोक् वृक्षका नीच धर्दो ॥
सेवा खुप् गर्न लाग्यो तर पनि मनमा माइले दुःख पाइन् ।
हाराम्! हाराम्! जगन्नाथ्! यहि वचन गरी राममा चित्त लाइन् ॥९१॥

मारीच् मारेर फिर्थ्या प्रभु पनि वनमा देखिया ताहिं भाई ।
राम्ले ताहीं विचार्‍या मन मन इ कुरा भाइ पुग्नै नपाई ॥
माया सीता बन्याकी अलिकति पनि याद् छैन ई भाइलाई ।
साँचै सीता इनै हुन् भनिकन मलले भन्दछन् चाल् नैंपाई ॥९२॥

यो बात् बोल्दिनँ गुह्य राख्छु म पनी मानून् सिता हुन् भनी ।
सीता निश्चय हुन् भन्या त रिसले लड्नन् रिपूथ्यैं पनी ॥
यस्तो निश्चय मन् भयो प्रभुजिको लक्ष्मण् पुग्या झट् तहाँ ।
सोध्या श्री रघुनाथले किन सिता छोडेर आयौ यहाँ ॥९३॥

साथ लेकर वह दुष्ट समुद्र को पार कर गया। ८९ आकाश मार्ग से जैसे ही सीताजी ऋष्यमूक पर्वत पर पहुँचीं, उन्होंने अपने समस्त आभूषण उतार कर एक गठरी में बाँध लिये और नीचे गिरा दिये, जिससे वे किसी के द्वारा राम-लक्ष्मण के पास पहुँचा दिये जायें। सुग्रीव ने उन्हें उठाकर तुरन्त अपनी गुफा में रख लिया। ९० रावण ने सीताजी को लंका ले जाकर अपने हृदय से उन्हें माता-तुल्य जानकर अपने अंतःपुर की वाटिका में अशोक वृक्ष के नीचे बैठा दिया और खूब सेवा की। तथापि सीता माता के मन में महान् दुख रहा और वह मन ही मन हा राम! हा राम! हा जगन्नाथ! जपकर राम की स्मृति को अपने मन में बसाती रहीं। ९१ मारीच का बधकर लौटते समय राम ने वन-बीच भाई लक्ष्मण को देखा और भाई के पहुँचने के पूर्व ही मन ही मन विचार किया कि सीता माया-रूपी बनी हुई हैं, यह भाई को किंचित-मात्र भी स्मरण नहीं है। सत्य ही सीता यहीं होगी, ऐसा सोचकर मन में कहते हैं। ९२ यह बात मैं गुप्त रक्खूँगा, किसी से न कहूँगा। इसे ही सीता मान लें। निश्चय ही सीता होने पर शत्रु के साथ लड़ने का विचार प्रभु के मन में हुआ। तुरन्त ही रघुनाथ ने प्रश्न किया कि सीता को छोड़कर क्यों आये हो? ९३

लक्ष्मण्ले पनि यो हुकूम् सुनि तहाँ बिन्ति गऱ्या क्या करूँ ।
जो दुर्वाच्य गरिन् सबै भनुँ भन्या सक्तीनँ मेलै बरु ॥
मारीच्का छलका वचन् सुनि बहुत् दुर्वाच्य बोलिन् जसै ।
सम्झायाँ भरसक् अपेक् तरहले लागेन बिन्ती कसै ॥९४॥

फेर् उत्तर् प्रभुले दिया अनुचितै हो यो गऱ्या तापनि ।
छोड्नू कत्ति थियेन दुर्वचनले स्त्री हुन् ति सीता भनी ॥
येती बात् गरि राम आश्रमविषे जल्दी कदम् ली गया ।
देख्यानन् र सिताजिलाइ बहुतै शोक् गर्न लाग्दा भया ॥९५॥

की राक्षस्हरुले हऱ्या कि वनमा की दुष्टले पेट् भऱ्या ।
एक् थोक् क्या त भयो अवश्य म गयाँ कुन् दुष्टका खेल् परऱ्या ॥
वन्देवीहरुलाइ मालुम भया विस्तार् बताऊ यहाँ ।
सीता मेरि पियारि देख्तिनँ म ता जान्छू सिता छन्जहाँ ॥९६॥

यस्ता रीत्सित सोधि सोधि रघुनाथ् ज्ञानै स्वरूपी पनि ।
जस्तो मानिस गर्छ सोहि रितले हा मेरि सीता ! भनी ॥
फिर्थ्या तेस् वनमा बडा विरहले सोध्या नपाई उसै ।
यै बीच्मा वनमा त रथ् र धनुको देख्या अनेक् टुक् तसै ॥९७॥

यह आज्ञा सुनकर लक्ष्मण ने भी विनती की कि मैं क्या करूँ, मारीच की छलपूर्ण चीख को सुनकर सीताजी ने अनेक दुर्वचनों का प्रहार किया और मैंने अनेक प्रकार से समझाने की चेष्टा की, परन्तु सब व्यर्थ हुआ। ९४ प्रभु ने फिर उत्तर दिया कि यह तो अनुचित ही हुआ है। स्त्री के दुर्वचनों को सुनकर भी उसे स्त्री समझकर अकेला नहीं छोड़ना चाहिए। इतना कहकर राम ने शीघ्रता से आश्रम में देखा। सीता को न देख कर अत्यन्त शोकाकुल हुए। ९५ किन्हीं राक्षसों ने हरण किया होगा या वन में किसी दुष्ट ने अपने पेट का आहार बनाया होगा—कुछ तो अवश्य ही हुआ है। मेरे चले जाने पर किस दुष्ट ने यह खेल किया ? वनदेवियो ! यदि तुम्हें विदित हो तो मुझे विस्तारपूर्वक बता दो। मेरी प्यारी सीता कहीं दृष्टिगोचर नहीं होती। मैं तो सीता जहाँ होंगी, वहीं जा रहा हूँ। ९६ ज्ञान-स्वरूपी होने पर भी सीता को न देखकर रघुनाथ अत्यन्त व्याकुल हो उसी प्रकार हा मेरी सीते ! कहकर पुकारते हुए उस वन में भटकने लगे, जिस प्रकार मनुष्य किया करता है। उसी बीच वन में रथ एवम् धनुष के टुकड़े देखे। ९७ लक्ष्मण से कहते हैं, भाई ! तुम यहाँ देख रहे हो—क्या हुआ है, कोई और ही आकर विजय प्राप्त कर ले गया

भन्छन् लक्ष्मणलाइ भाइ ! तिमिले देख्यौ यहाँको कुचाल् ।
अर्को आइ जिती लियेछ बिचमा मैले त देख्याँ कुचाल् ॥
येती बात् गरि राम् अलिक् पर गया देखछन् त पल्टी रही ।
चिन्नैलाइ कठिन् जटायुकन ता दूवै पखेटा गई ॥९८॥

अज्ञान् कत्ति थियेन तापनि तहाँ लीला नरैको गरी ।
चीन्याको नचिन्ह्यौ गरेर भगवान् भन्छन् अगाडी सरी ॥
हे भाई ! धनु देउ दुष्ट मिलिगो मार्छू म वाणै धरी ।
खान्या येहि रहेछ हेरि बुझियो पल्टेछ खुब् पेट् भरी ॥९९॥

सून्या बात् र जटायुले पनि हवाल् वृत्तान्त बिन्ती गऱ्या ।
सूनी पूर्ण दया भयो नजिक गै छाम्यार सब्ताप् हऱ्या ॥
सीताको समचार् खबर् कहि तहाँ साम्ने जटायू मऱ्या ।
स्नान् दाहा गरि मांसपिण्डह रुदी क्रीया प्रभूले गऱ्या ॥१००॥

सायुज्यै मुक्ति पाई स्तुति पनि बहुतै भक्ति राखेर लाई ।
पौंच्या धाम्मा जटायू प्रभु पनि नरको ठिक्क लीला जनाई ॥
वन्वन्मा फिर्न लाग्या विरह गरि गरी सोद्धछन् जाँहि ताँहि ।
दोस्रादेखन्यामिल्यानन्सकलबढुड्याएक् पनी काँहि नाहीं ॥१०१॥

है । मैं तो कुछ अनर्थ के लक्षण ही देखता हूँ । इतना कहकर राम ने कुछ दूर जाने पर पख कटे हुए जटायु को अचेत अवस्था में पड़ा देखा, जिसे पहचानना भी कठिन था । ९८ प्रभु अज्ञानी नहीं थे, तथापि मनुष्य की ही लीला करके अपरिचित की भाँति आगे बढ़कर भगवान कहते हैं, हे भाई ! दुष्ट मिल गया । धनुष दे दो, मैं बाण से इसका बध करता हूँ । इसी ने सीता को खाया है और पेटभर खाकर लेटा हुआ है । ९९ इन बातों को सुनकर जटायु ने भी विनती-स्वरूप सारा वृत्तान्त कह सुनाया । वृत्तान्त सुनकर दया से पूर्ण हो राम ने उसके निकट जाकर उसका स्पर्श किया और उसके दुख-ताप का हरण किया । सीता के विषय में सारा समाचार ज्ञात करने के पश्चात् जटायु का प्राणान्त हो गया । स्नानोपरान्त दाहसंस्कार कर मांस-पिण्डादि देकर प्रभु ने उसका क्रिया-कर्म किया । १०० अत्यन्त भक्तिपूर्वक स्तुति करने के बाद, मुक्ति पाकर जटायु स्वर्ग-धाम को पहुँचे । प्रभु भी मनुष्य के समान लीला करते हुए, विरह व्यक्त करते तथा सीता के विषय में पूछ-ताछ करते हुए, वन-वन भटकने लगे, परन्तु दूसरा और कोई ऐसा नहीं मिला, जिसने सीताजी को देखा हो । १०१ राम की भेंट एक कबंध नामक राक्षस से हुई,

छातीमा मुख् भयाको शिर पनि नहुँदा नाम् कबन्धै रह्याको ।
चार् चार् कोश् सम्म पुग्न्या दुइ अति बलिया दीर्घ बाहू भयाको ।
राक्षस् थीयो तहाँ एक् बसि बसिकन सब् हातले खैंचि खान्या ।
तिनका बाहु बीच्मा रघुपति पुगदा रोकियो मार्ग जान्या ॥१०२।

राक्षस्ले घोरियाको बुझिकन रघुनाथ् भन्दछन् भाइलाई ।
हे लक्ष्मण् ! आज देख्यौ अब बिच परियो निल्छ की हामिलाई ॥
ठाकुर्जीका वचन् ई सुनिकन बिनती ताहिं लक्ष्मण्जि गर्छन् ।
हे नाथ्! क्या डर् छ यस्को दुइ भइ दुइ हात् काटिद्यूँ याहिं झर्छन् ॥३॥

येती बात् गरि हात् दुवै सहजमा काटी खसाल्या जसै ।
राक्षस्ले पनि हात् गिऱ्या जब तहाँ आश्चर्य मान्यो तसै ॥
सोध्यो आज म वीरका पनि सहज् हातै खसाल्यौ यहाँ ।
को हौ क्या मनमा लियेर बनमा डुल्छौ छ जानू कहाँ॥१०४॥

उत्तर् श्री रघुनाथले पनि दिया हाँसेर विस्तार गरी ।
सून्यो राम भनी तहाँ र मनले चीन्ह्यो इनै हुन् हरि ॥
ठाकुर्जीकन चीन्हि खुश् अधिक भै विस्तार आफ्नू गऱ्यो ।
हे नाथ्! आज चिन्ह्याँ हजूर्कन यहाँ पायाँ र सब् ताप् टऱ्यो॥१०५।

जिसका मुख उसकी छाती में था और सिर था ही नहीं। उसकी भुजाएं चार-चार कोस की लम्बाई में थीं और बहुत ही बलिष्ठ थीं। वह अपने उन्हीं बलिष्ठ भुजाओं से अपना आहार खींच कर खाता था। उसकी दोनों भुजाओं के बीच में रघुपति आ गये, जिसके कारण उनका आगे जाने का मार्ग रुक गया।१०२ राक्षस से घिरा हुआ समझकर राम भाई से कहते हैं, हे लक्ष्मण! आज देखो, कदाचित् यह राक्षस हमें निगल न ले। ठाकुर के इन वचनों को सुनकर लक्ष्मणजी बिनती करते हैं, हे नाथ, इसका क्या भय है दोनों मिलकर दोनों भुजाओं को काट डालें, बस यह यहीं गिर जायेगा। १० ऐसा कहकर जैसे ही दोनों भुजाओं को सहज ही काटकर गिरा दिया यह देखकर राक्षस को भी अपनी भुजाओं के कटकर गिरने से आश्चर्य हुआ अतः उसने पूछा, आज मुझ-जैसे वीर की भुजाओं को सहज ही में गिराने वाले तुम कौन हो, किस उद्देश्य से वन में घूम रहे हो और कहाँ जाना है ? १०४ रघुनाथ ने भी हँसकर धीरे से उत्तर दिया, राम कहकर पुकारे जाते हैं, और मन में हरि समझकर पहचाने जाते हैं। ठाकुरजी को पहचानकर, अत्यन्त हर्षित हो उसने बिनती की—हे नाथ! आज आपको यहाँ पहचानकर मेरे सब पापों का नाश हुआ। १०५ गन्धर्व होने प

ब्रह्मादेखि अवश्य पाइ वरदान् गन्धर्व हूँ तापनि ।
राम्रो छू भनि गर्व भो र ऋषि ता साह्रै नराम्रा भनी ।।
हाँस्याँ कोहि र अष्टवक्र ऋषिले राक्षस् भयास् लौ भनी ।
पैले श्राप गरी दिया पछि त फेर् मुक्ती बताया पनि ।।१०६।।

राक्षस् भैकन फिर्दथ्याँ म रिसले शिर् इन्द्रजीले हऱ्या ।
ब्रह्माको वरदान् थियो र म जियाँ इन्द्रादि सब् छक् पऱ्या ।।
शीरै गै पनि यो जियो अब कसो गर्ला भनी खुप् दया ।
आयो इन्द्रजिका र खानकन मुख् छाती विषे दी गया।।१०७।।

चार्चार् कोश तलक् समाउन भनी लामा त हातै दिया ।
सो हात् आज गिराइबक्सनुभयो याहीं तलक् ई थिया ।।
जस्तो मुक्ति ति अष्टवक्र ऋषिले पैले बताया यहाँ ।
तस्तो ठिक्क भयो इ हात् गिरिगया मुक्ती त पायाँ यहाँ ।।१०८।।

क्याबात् धन्य रहेंछु आज म प्रभू ! आस्रा गऱ्याँथ्याँ जति ।
रातोदिन् रटना थियो चरणको भैगो शरण्को गति ।।
खाडल् खुप् गहिरो खनेर उसमा यो देह मेरो धरी ।
पोली भस्म गराइबक्सनु हवस् जान्छू म संसार तरी।।१०९।।

भी ब्रह्माजी से वरदान पाकर, अपनी सुन्दरता पर गर्व करने पर, ऋषियों को कुरूप कहकर उनकी हँसी उड़ाने पर, अष्टावक्र ऋषि ने मुझे राक्षस होने का शाप दिया, साथ ही इस शाप से मुक्ति पाने का भी मार्ग बताया। १०६ मैं राक्षस बनकर घूमने लगा था। क्रोधित होकर इन्द्र ने मेरे सिर का हरण कर लिया। ब्रह्मा के वरदान से मैं जीवित रहा और इन्द्रादि सभी आश्चर्य-चकित हुए। सिर कट जाने पर भी यह जीवित रहा, अब क्या करेगा, यह सोचकर इन्द्रजी को अत्यन्त दया उत्पन्न हुई और भोजन करने के लिए उन्होंने मेरे वक्षस्थल में मुँह बना दिया। १०७ चार कोस लम्बी भुजाएँ शिकार को पकड़ने के लिए दीं। वे हाथ भी अब गिरा दिये गये। शाप का प्रभाव भी यहीं तक के लिए था। जिस प्रकार अष्टावक्र ऋषि ने पहले ही बता दिया था, ठीक वैसा ही हुआ। हाथों के गिरने पर उन्होंने मुक्ति पाने को बताया था। १०८ क्या बात है ! मैं धन्य हूँ कि जो कुछ आशा करता था और रात-दिन इन्हीं चरणों की रट लगाये था और प्रभु की शरण में मुझे गति प्राप्त हो गयी। मेरे शरीर को भस्म करके एक गहरा गड्ढा खोदकर भूमि को अर्पित करने की कृपा करें, जिससे मैं संसार से मुक्ति पा जाऊँ। १०९ सीता को प्राप्त करने का भी उचित

सीता पाउनको उपाय विनती गर्न्याछु साँचो गरी।
भन्न्या या बिनती सुन्या र हरिले पोलीदिया खाक् गरी॥
सुन्दर् शुद्ध स्वरूप् धर्‍यो प्रभुजिले खुश् भै दिया वर् पनि।
भक्तीले बहुतै गर्‍यो स्तुति र त्यो पौंच्यो परम् धाम् पनि॥११०॥

हे नाथ्! सीताजि मिल्निन् अब तिमि शबरी छन् जहाँ ताहिं जाऊ।
साह्लै भक्ती छ तिम्रा चरणकमलको ताप तिन्का छुटाऊ॥
येती बिन्ति जगन्नाथ् सित गरि जब धाम् त्यो गयो राम फेरि।
आश्रम्मा पौंची दर्शन् शबरिकन दिया खुप्कृपा राखिहेरी॥१११॥

आसन्देखि उठेर जल्दि शबरी राम्का चरण्मा परिन्।
सक्भर्को बहुतै पुजा गरि तहाँ हात् जोरि बिन्ती गरिन्॥
हेनाथ्! हीन् कुलकी स्त्री जाति म गरीब् जान्दीनँ तिम्रो स्तुति।
आधार् मात्र फगत् छ यै चरणमा यस्तै छ मेरो गति॥११२॥

विस्तार् सब् गुरुदेखि सूनि गुरुको आज्ञा मनैमा लिई।
कैले देख्छु हजूरलाइ भनि खुप् तन् मन् हजुर्मा दिई॥
पूजा नित्य हजूरको गरि यहाँ स्वामित्! बस्याकीथियाँ।
हे नाथ् आज दया भयो हजुरको प्रत्यक्ष देखीलियाँ॥११३॥

उपाय मैं आपको बताऊँगा। कबंध की ऐसी बिनती सुनकर हरि ने उसके शरीर को भस्म कर दिया। तदुपरान्त एक सुन्दर शरीर प्रकट हुआ और प्रभुजी ने भी हर्षित होकर उसे आशीर्वाद दिया। भक्तिपूर्वक स्तुति कर वह परमधाम को पहुँच गया। ११० कबंध प्रभुजी से कहता है, हे नाथ! जहाँ शबरी रहती है, आप वहीं चले जायें, अब आपको सीताजी मिल जायेंगी। उसकी आपके चरणों में अगाध भक्ति है; आप जाकर उसके तापों का अन्त करें। जगन्नाथ से इतनी विनती कर जब वह परम-धाम पहुँच गया, तब राम ने भी आश्रम में पहुँच कर शबरी को कृपापूर्वक दर्शन दिये। १११ शबरी राम को देखकर तुरन्त आसन से उठ बैठी, और राम के चरणों पर गिर पड़ी। अपनी शक्ति के अनुसार पूजाकर हाथ जोड़कर विनती की—हे नाथ! मैं एक नीच कुल की दीन स्त्री हूँ। आपकी स्तुति किस प्रकार करूँ, यह ज्ञान नहीं है, हमें केवल आपके चरणों का ही सहारा है, चाहे मेरी जैसी गति हो। ११२ गुरु की बतायी हुई विधि को सुनकर और उनकी आज्ञा मन में धारणकर कभी आपको देखती हूँ, तन-मन लगाकर नित्य आपकी पूजा करके मैं यहाँ रह रही हूँ। हे नाथ! आज आपकी इतनी कृपा हुई कि मैं साक्षात् आपके दर्शन पा रही

क्याले आज बहुत् प्रसन्न हुनुभो कुन् कर्म मैले गन्याँ।
योगीको मनले नभेटि सकिन्या मैले त दर्शन् गन्याँ॥
यस्तो बिन्ति सुनी दया बहुत भो हेतू प्रभूले कह्या।
उच् नीच् स्त्री र पुरुष् विचार् दिनँ म ता खुश् हुन्छु भक्तीभया॥११४॥

नौ साधन् कि त भक्ति छन् ति नवमा पैलो त सत्संग हो।
पैलो साधन् पो भयो पनि भन्या बाँकी रह्याका ति जो॥
आठ् साधन्हरू हुन् ति ता क्रमसितै मिल्छन् असल् सङ्गले।
सत्को संग भया सबै बनिगया क्या हुन्छ कुन् सङ्गले॥११५॥

सत्को सङ् भै रह्याकी दिनदिन न उपर् भक्ति ठूलो भयाकी।
सज्जन्को सङ्ग पाईकन सग गुणमा पार पौंची गयाकी॥
देख्याँ मैले र दर्शन् दिन भनि खुशिले आज आफैं म आई।
दीयाँ दर्शन् र पायौ तिमि अधम भया पाउँथ्यौ क्या मलाई॥११६॥

मुक्ती भो आज तिम्रो अब फजिति छुट्या खुशि भै आज जाऊ।
मेरी सीता कहाँ छन् कछु खबर भया त्यो पनी सब् बताऊ॥
हूकुम् जस्सै सुनिथिन् तब तहिँ विनती गर्दछिन् क्या बताऊँ।
सर्वव्यापी हजूर्ले बुझि त नसकिन्या एक् रती छैन ठाउँ॥११७॥

हूँ। ११३ पता नहीं, कैसे आज आप इतने प्रसन्न हो गये। आज मैंने कौन-सा ऐसा सुकर्म किया। आज मैंने आपका दर्शन पा लिया, जिसे बड़े-बड़े योगी नहीं पा सकते हैं। शबरी की ऐसी विनती सुनकर, प्रभु का हृदय दया से भर उठा। उन्होंने कहा—मैं ऊँच-नीच तथा स्त्री-पुरुष का विचार नहीं रखता, मैं तो प्राणिमात्र की भक्ति से प्रसन्न होता हूँ। ११४ भक्ति के नौ साधन हैं, जिनमें प्रथम तो सत्संग है। प्रथम साधन हो जाने पर जो भी शेष आठ हैं, अच्छी संगत से भी कठिनता से प्राप्त होते हैं। सत् के संग होने पर सब बनता है, जो कुसंग से नहीं बनता। ११५ सत्संग में रहकर प्रतिदिन मेरी भक्ति में तल्लीन, सज्जनों के सम्पर्क से सभी गुणों से परिपूर्ण देखकर, प्रसन्न होकर मैं आज स्वयं दर्शन देने के लिए आया हूँ। तुम्हें दर्शन मिल गया, अन्यथा तुम अधम होती तो क्या मुझे पा सकती थीं। ११६ आज तुम्हारी मुक्ति हुई। आज तुम्हारे संकट दूर हो गये हैं। मेरी सीता कहाँ है, यदि तुम्हें कोई सूचना हो तो वह भी मुझे बताओ। राम की यह आज्ञा सुनते ही, शबरी विनती करने लगी, मैं क्या बताऊँ, आप तो स्वयं सर्वव्यापी हैं, आपसे छिपा हुआ कोई स्थान नहीं। ११७ यह मैं सत्य ही कह रही हूँ, परन्तु आज मनुष्य-रूप

साँचो बिन्ती गर्‍याँ यो तर पनि नरको आज यो रूप धारी।
आज्ञा भो ता म बिन्ती पनि हजुरविषे गर्दछू काल् विचारी॥
सीता लङ्काविषे छन् अब त हजुरले भेट सुग्रीवलाई।
बक्स्याजावस् ति गर्नन् जतिजति अरु काम् बिल्कुलै पार लाई॥११८॥

पम्पा भन्न्या तलाऊ पनि नजिक हुन्या ऋष्यमूक् पर्वतैका।
टाकूरैमा ति बस्छन् अति फजिति सही दिन् बिताई सधैंका॥
बालीको डर् हुनाले तहिं बहुत बस्या बालि जाँ दैन ताहाँ।
बालीलाई नजानू भनिकन छ सराप् सब् गर्‍याँ बिन्ति याहाँ॥११९॥

सुग्रीव् सीत मित्यारि गर्न सब काम् हुन्याछ सीता पनि।
मिल्निन् आज म देह खाग् गरि यहीं पोल्छू नजीक् भै भनी॥
बिन्ती पारि चिताविषे पसि शरीर् त्यो जो छ सब् खाग् गरिन्
ठाकुर्‌को अति भक्तिले ति शबरी संसार सागर् तरिन्॥१२०॥

क्या दुर्लभ् रघुनाथ् खुशी हुन गया जात्‌की अधम् भै पनि।
श्रीराम्‌का अगि देह छाडिकन पार् पौंचिन् सहज्मै तिनी॥
ब्राह्मण् भैकन भक्ति गर्दछ भन्या उस्का त झन् क्या कुरा।
जो कोही पनि भक्ति भो भनि भन्या योगी ति हुन्छन् पुरा॥१२१॥

धारण कर यह आज्ञा की है, तो मैं अवसर को विचार करके आपसे विनती करती हूँ—सीताजी लंका में हैं। जब आप सुग्रीव से भेंट करेंगे तो जो काम होंगे, सब अवश्यमेव पूर्ण होंगे। ११८ वह सुग्रीव पंपा नामक तालाब के निकट ऋष्यमूक पर्वत के शिखर पर अत्यन्त संकटमय तथा दुखी जीवन व्यतीत कर रहा है। बालि के भय से वह वहीं रहता है। बालि को शाप है, इसलिए वह वहाँ नहीं पहुँच सकता। ११९ सुग्रीव से मित्रता होने पर पर जब सब कार्य पूर्ण होंगे, तब सीता भी मिल जायेंगी। आज मैं आप के निकट इस देह को भस्म करती हूँ। ऐसी विनती करके शबरी ने चिता में प्रवेश किया और अपने शरीर को अग्नि को अर्पित कर दिया। इस प्रकार की भक्ति से शबरी ने संसार-सागर पार कर लिया। १२० नीच जाति की होकर भी शबरी का साहस देखकर, रघुनाथ अत्यन्त प्रसन्न हुए। जब ऐसे लोग श्रीराम के ही समक्ष देह त्याग कर परम-धाम को प्राप्त कर सकते हैं, तो फिर ब्राह्मण होकर भक्ति करने पर तो उसका कहना ही क्या! जो कोई भी हो, उनका भक्त होने पर मनुष्य पूर्ण योग्य होता है। १२१ हे मनुष्यो! रघुनाथ के चरणों की भक्ति मोक्ष दिलानेवाली है, यह जानकर कामधेनु के समान राम का मन

हे लोक् हो ! रघुनाथका चरणको भक्ती छ मुक्ती दिन्या ।
यो जानीकन कामधेनु सरिका राम् नाम् मनैमा लिन्या ।।
क्या गर्छौं अरु मंत्र-तंत्रहरुले छोडेर सब् राममा ।
तन्मन्लाइ अवश्य जान मनले सार् मिल्छ यैं काममा।।१२२।।

अरण्यकाण्ड समाप्त

में ध्यान करने से अन्य मंत्र तथा यंत्रों का प्रयोग करके क्या करेगा ? मन से निश्चित ही जानो कि तन-मन से एकान्त में ध्यान धरकर चिन्तन करने से ही सार प्राप्त होता है । १२२

किष्किन्धा काण्ड

जस्सैमुक्त भइ गइन् ति शबरी सब् बात् सुनी राम् पनि ।
जान्छू आज म ऋष्यमूक गिरिमा सुग्रीव भेट्छू भनी ।।
जान्थ्याकोश् भरिको तलाउ मिलिगो पम्पा भन्याको पनि ।
चीन्ह्या श्रीरघुनाथले शबरिले यैं हो भन्याको भनी ।।१।।

माछा कच्छप चल्दछन् कमलको सब् गिर्छ केसर् तहाँ ।
केसर्ले जब छोपियो पनि भन्या देखिन्छ जल् पो कहाँ ।।
नीला लाल सफेद् कमल् पनि अनेक् रङ्गा भयाका तहाँ ।
बोल्छन् हाँस चकोर सारसहरू लाटाकुस्यारा जहाँ ।।२।।

जैसे ही शबरी चुप हुई, राम ने सारी बातें सुनने के पश्चात् ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव से भेंट करने के लिए तत्काल ही जाने की इच्छा प्रकट की । लगभग एक कोस दूर जाने के बाद पम्पा नामक एक ताल उन्हें मिला, जिसे शबरी के कथनानुसार श्रीरघुनाथ ने पहचाना । १
उस ताल में मछली और कछुए रहते थे और कमल के केसर गिरकर जल को पूर्णरूप से ढके हुए थे, जिससे जल कहीं भी दिखायी नहीं देता था । उस ताल के कमल लाल, नीले तथा सफेद अनेक रंगों में खिले हुए थे, जहाँ हंस, चकोर तथा सारस समूह बोलते रहते थे । २

जस्तो निर्मल हुन्छ सन्तहरुको मन् सोहिमाफीक जल् ।
निर्मल् देखि बहुत् प्रसन्न हुनुभो लाग्यो र साह्रै असल् ॥
थोडाजल् पनि पान् गरी सकल वन् हेर्‍या जगन्नाथ् तहाँ ।
देख्या सुग्रिवले डरायर नजर् लाया प्रभू छन् जहाँ ॥३॥
बालीको छल हो भन्या बुझि तहाँ हात्ले इशारा दिया ।
औरै कोहि रहेछ सज्जन भन्या हेरेर हाँसी लिया ॥
ब्राह्मण्को लडिका बनेर हनुमान् जाऊ ति को हुन् कहाँ ।
जान्छन् क्या मनमा छ सब् वरिपरी हेरेर डुल्छन् तहाँ ॥४॥
सुग्रीवले हनुमानलाइ जव यो हूकूम् दिया जौ भनी ।
ब्राह्मण्को लडिका बनेर हनुमान् राम्का हजुर्मा पनि ॥
पौंची पाठ्सित बिन्ति पारि सब काम् सोध्या प्रभूको जसै ।
विस्तार् नाम र कामको प्रभुजिले खुश् भै बताया तसै ॥५॥
सुग्रीव्को हनुमानले पनि तहाँ विस्तार बिन्ती गर्‍या ।
बोकूँ श्रीरघुनाथलाइ भनि फेर् आफ्नू स्वरूप् झट् धर्‍या ॥
राम् लक्ष्मण्कन बोकि जल्दि हनुमान् सुग्रीवका पासमा ।
पौंचाऊँ रघुनाथलाइ भनि खुप् कूद्याति आकाशमा ॥६॥
जल्दी पर्वतका उपर् पुगिगया छायाविषे राम् रह्या ।
सुग्रीव्लाइ खबर् दिनाकन तहाँ जल्दी हनूमान् गया ॥

जैसे सन्तों के हृदय जल के समान निर्मल होते हैं, उसी प्रकार उस ताल में निर्मल जल को देख अत्यन्त प्रसन्न हुए और आकर्षित हुए। कुछ जलपान करके श्रीजगन्नाथ ने सारे बन को देखा। प्रभु जहाँ थे, वहाँ सुग्रीव ने भयभीत होकर देखा। ३ बालि का छल तो नहीं है, यह जानने के लिए हाथ से इशारा करना और सज्जन हो तो देखकर हँस देना, यह कहकर सुग्रीव ने ब्राह्मण-पुत्र के रूप में हनुमान को उनके विषय में यह पता लगाने के लिए कि उनके मन में क्या है, और इस प्रकार चारों ओर देखकर क्यों घूम रहे हैं ? यह जानकारी करने को कहा। ४ सुग्रीव ने जब हनुमान को यह आज्ञा दी तो हनुमान भी ब्राह्मण के पुत्र के रूप में श्रीराम के समक्ष पहुँचे और नियमित रूप से प्रभुजी से समस्त कार्यों के विषय में ज्ञान देने की विनती की। प्रभुजी ने भी प्रसन्न होकर नाम तथा कार्य के विषय में पूर्ण-रूप से बताया। ५ हनुमान ने भी सुग्रीव के विषय में विस्तारपूर्वक विनती की। श्रीरघुनाथजी को ढोने के लिए अपने वास्तविक रूप को धारण किया। राम-लक्ष्मण दोनों को

विस्तार् पायर आइ सुग्रिवजिले दर्शन् प्रभूको गऱ्या।
हाँगा कोमल भाँचि आसन दिया आनन्दसागर् पऱ्या ॥७॥
आसन् सुग्रिवलाइ लक्ष्मणजिले द्रीया, हनूमानले—
लक्ष्मण्जीकन बस्न आसन दिया ताहीं ठुला मानले ॥
सब् वृत्तान्त बताइ लक्ष्मणजिले विस्तार् सुनाया जसै।
सीता जुन् गहना खसालि गइथिन् हाजिर् गराया तसै ॥८॥
हा राम्! लक्ष्मण! येति मात्र मुखले बोलेर आकाशमा।
जान्थिन् सब गहना फुकालिकन ता हाम्रा यसै वासमा ॥
गिर्न्या पाठ् सित पो खसालि ति गइन् चिन्हीनँ याहीं थियाँ।
कस्का हुन् यहि चीन्हि बक्सनुहवस् यै हो हजूर्मा दियाँ ॥९॥
येती बिन्ति गरी दिया ति गहना देख्या प्रभूले पनि।
चीन्ह्या सब् गहना र शोक् बहुत भो हा! मेरि सीता भनी ॥
रोया छातिविषे धऱ्या र गहना नाना विलाप्ले जसै।
लक्ष्मण् सुग्रिवले तहाँ प्रभुजिको दिल् खुश् गराया तसै॥१०॥
हे राम्! रावणलाइ मारि सहजै सीताजिलाई यहाँ।
हाजिर् हामि गराउँला हजुर्मा त्यो दुष्ट जाला कहाँ ॥

ढोकर सुग्रीव के पास पहुँचने के लिए आकाश की ओर अत्यन्त तीव्र गति से कूदे। शीघ्रता से पर्वत के शिखर पर पहुँच कर राम को छाया में रखकर हनुमान तुरन्त सुग्रीव को सूचना देने के लिए गये। विस्तारपूर्वक समाचार पाते ही सुग्रीव तुरन्त ही राम के दर्शनों के लिए आये और वृक्ष की शाखा को तोड़कर आसन देते हुए आनन्द के सागर में डूब गये। ६-७ सुग्रीव को लक्ष्मणजी ने आसन दिया और लक्ष्मणजी को बैठने के लिए हनुमानजी ने आसन दिया। लक्ष्मणजी ने जैसे ही विस्तारपूर्वक सारा हाल बताया, वैसे ही सीताजी द्वारा गिराये गये आभूषणों को सुग्रीव ने प्रस्तुत किया। ८ आकाश-मार्ग से जाते समय केवल हे राम! हे लक्ष्मण! मुँह से चीत्कार करती हुई, सीताजी ने अपने आभूषणों को उतार-उतार कर हमारे इसी निवास-स्थान पर गिरा दिया था, ये वही चिन्ह हैं, यह कृपया पहचानने का कष्ट करें। ९ इतना कहकर उन्होंने गहने दे दिये। प्रभुजी ने भी उन गहनों को भली प्रकार पहचान लिया और अत्यन्त शोकाकुल होकर बोले! हाय सीते, और गहनों को वक्ष से लगाकर अनेक प्रकार से विलाप करते हुए रोने लगे। यह देखकर लक्ष्मण और सुग्रीव ने प्रभुजी को ढाढ़स बँधाकर उनके हृदय को शान्त किया। १० हे राम!

येती बिन्ति तहाँ ति सुग्रिवजिले रामका हजुरमा गन्या ।
बोल्या श्री हनुमानले पनि तहाँ अग्नी त साक्षीधऱ्या ॥११॥
अग्नी साक्षि धरेर सुग्रिवजिले रामथ्यैं मित्यारी गरी ।
बाहाँ जोरि सखा भई नजिकमा सुग्रीव् बस्या तेस् घरी ।
सुग्रीव्ले तहिं बिन्ति बात् पनि गऱ्या हे नाथ्! फजीती सही ।
बालीका डरले बहुत् दिन बित्या येसै जगामा रही ॥१२॥
याहाँ बालि त आउँदैन छ सराप् मातङ्गजीको र पो ।
पायाँ बस्न नहीं भन्या मकन ता कस्ले बचाऊँदथ्यो ।
बालीको बल बिन्ति गर्छु अहिले जस्देखि सब् डर्दछन् ।
कस्तै वीर हउन् लड्या पनि भन्या लड्न्या सबै मर्दछन् ॥१३॥
ठूलो वीर् मयपुत्र दानव थियो मायावि नाऊँ थियो ।
बालीसीत लडाइँ गर्न भनि त्यो आयो र हाँक् खुप् दियो।
बालीले पनि दौडि गैकन तहाँ हान्यो मुठीले जसै ।
बाधा पाइ डराइ भागि उ गयो लाग्यो पछाडी तसै॥१४॥
बालीका पछि लागि मै पनि गयाँ राक्षस् गुफामा गयो ।
ढोकामा त मलाइ राखि रिसले फेर् भित्र जाँदो भयो ।

हम रावण को सहज ही मारकर सीताजी को आपके समक्ष प्रस्तुत करेंग
वह दुष्ट कहाँ जायेगा। इतनी विनती करके सुग्रीव राम के चरणों प
गिर पड़े और श्रीहनुमान ने भी उसी समय अग्नि को साक्षी रखा। ११
अग्नि को साक्षी रख के सुग्रीव ने राम के साथ मित्रता की शपथ ली
अपने हाथों को जोड़कर मित्र के निकट जाकर सुग्रीव बैठ गया। सुग्री
ने पुनः प्रभु से विनती की, हे नाथ! बालि के भय से अनेक कष्टों को सह
कर इसी स्थान पर रह रहा हूँ। १२ मातंगजी के शाप के कारण बालि यह
नहीं आ सकता। यदि मुझे यहाँ रहने को न मिलता तो कौन बचा सकत
था; क्योंकि बालि की शक्ति को देखकर सभी भयभीत होते हैं। औ
कैसा भी वीर क्यों न हो, यदि बालि से लड़ाई ठान ली तो यह निश्चित
कि लड़ने वाला मर जायेगा। १३ मय-पुत्र मायावी नामक एक वी
राक्षस बालि से युद्ध करने हेतु आया और बालि को ललकारा। बालि
भी दौड़कर उसे घूँसा मारा। अपने सम्मुख बाधा आयी देख, वह भयभी
होकर भाग निकला और बालि उसके पीछे दौड़ा। १४ मैं भी बालि
पीछे-पीछे गया और वह राक्षस गुफा के अन्दर चला गया। द्वार पर मु
रखकर क्रोधित होकर बालि अन्दर चला गया। एक मास व्यतीत हु

मैह्ला दिन् बिति गैगयो त पनि त्यो फर्कन वाली जसै ।
साह्लै दिक् म थियाँ कसो गरुँभनी आयो रगत् पो तसै ।।१५।।
लौ वाली त मरेछ हेरि रगतै आयो गुफादेखि ता ।
मैलाई पनि फर्कि मार्छ रिसले गूफा थुनी जाँ म ता ।।
यस्तो बुद्धि भयो र पत्थर ठुलो ल्यायाँ र गूफा थुन्याँ ।
फर्की आउन मन् गऱ्या पनि सहज् निस्की नसक्नू हुन्या।।१६।।

यस्ता पाठ् सित खुप् थुन्याँ र म फिऱ्याँ वाली मऱ्या लौ भनी ।
विस्तार् सब् ति सुनाउँदा मकन ता राजा बनाया पनि ।।
राजा भैकन राज्य भोग् पनि गऱ्याँ क्यै दिन् पछि वालि ता ।
राक्षस् मारि फिरेर दाखिल भयो रीसाइ मैमाथि ता ।।१७।।
उस् दिन्देखि डराइ याहिँ म रह्याँ मेरी त पत्नी पनि ।
बल्जफ्ती सित भोग गर्छ गरुँ क्या पुग्दैन जोर् तैपनि ।।
याहाँ आउन सक् भये यहिँ पनी आएर मार्न्या थियो ।
पाप्को क्या डर मान्छ त्यो र बलले जस्ले बुहारी लियो ।।१८।।

साह्लै दुःखि भयेर सुग्रिवजिले बिन्ती गऱ्याको सुनी ।
सुग्रीव्को अब दुःख हर्दछु भनी अन्तस्करण्ले गुनी ।।

पर भी वालि लौटकर नहीं आया। मैं किंकर्तव्य-विमूढ़-सा होकर अत्यन्त चिंतित था कि देखा, द्वार से रक्त की नदी बाहर की ओर बह रही है। १५ मैंने सोचा, कदाचित वालि का बध कर दिया गया है, इसीलिए गुफा से रक्त बह निकल रहा है। कहीं वह क्रोधित होकर मुझे भी न मार दे, इसलिए गुफा को बन्द करके मैंने चले जाने की सोची। यह सोचकर एक बड़ा-सा पत्थर लगाकर गुफा को बन्दकर दिया, जिससे वह लौटकर आने पर भी निकल न सके। १६ इस प्रकार गुफा को बन्द करके वालि को मरा समझकर मैं लौट पड़ा और यह सब वृत्तान्त सुनने के बाद मुझे यहाँ का राजा बना दिया गया। राज-भोग करने के एक ही दिन पश्चात वालि राक्षस को मारकर आ पहुँचा, और मुझ पर अत्यन्त क्रोधित हुआ ।१७ उस दिन से भयभीत होकर मैं यहाँ पर रह रहा हूँ, वालि मेरी पत्नी को भी बलपूर्वक छीन ले गया। क्या करूँ, मुझमें कोई जोर नहीं। यदि वह यहाँ आ सकता तो यहीं आकर मुझे मार डालता। जिसने बलपूर्वक अपनी बहू तक को छीन लिया, उसे पाप का क्या डर है? १८ सुग्रीव की ऐसी दुख-भरी विनती सुनकर अपने अन्तःकरण में सुग्रीव के दुख को हरण करने का विचार करके प्रभुजी ने कहा, सुनो सखे! उस वालि का

खातिर् श्रीप्रभुले गऱ्या सुन सखे! त्यो बालि मारी यहाँ।
तिम्रो राज्य गराउँला अब उपर् जोर् चल्छ तेस्को कहाँ॥१९।
यस्तो सत्य वचन् सुन्या प्रभुजिको शंका पऱ्यो तैपनि।
शक्छन् क्या तब बालि मार्नकन ता ठूलो छ बाली भनी॥
बालीलाइ बहूत वीर् बुझि तहाँ राम्का अगाडी सरी।
बालीको अधिको पराक्रम कह्या बिल्कूल विस्तार् गरी॥२०॥
एक् दिन् दुन्दुभि नाम रासस् ठुलो आयो र हाँक् खुप् दियो।
बालीले सहजै निमोठिकन शिर् छुट्टयाइ हात्मा लियो॥
सोही फ्याँकिदिदा यहाँ गिरिगयो चार् कोश् जगामा जसै।
छीटा पर्न गयो बहुत् रगतका ऋषी रिसाया तसै॥२१॥
बालीलाइ सराप् दिया अब यहाँ आइस् भन्या तैं पनि।
शिर् जुद्दा भइ पृथ्विमा गिरिगयास् जस्तै गिऱ्यो यो भनी॥
यो मालुम् त मलाइ सब् अघि थियो सो जानि याहीं रह्याँ।
उस्लाई पनि यो छ याद् तब म तेस् वीर् देखि बाँच्तो भयाँ॥२२।
सोही शिर् अझतक् छ पर्वत सरी यो फ्याँकन सक्नू भया।
बाली मार्न समर्थ ताहि चिन्हुँला मेरा त सेखी गया॥

बध करके मैं तुम्हें राजा बनाऊँगा, क्योंकि अब यहाँ पर उसकी कोई शक्ति काम नहीं आयेगी। १९ प्रभुजी के ऐसे सत्य वचनों को सुनकर भी सुग्रीव के मन में शंका उत्पन्न हुई कि बालि तो भयंकर है, क्या प्रभुजी उसका बध कर सकेंगे? बालि को अत्यन्त वीर समझकर राम के सम्मुख खड़े होकर बालि के पराक्रमों का सविस्तार वर्णन किया। २० एक दिन दुंदुभि नामक भयंकर राक्षस ने आकर जोरों से ललकारा। बालि ने सहज ही उसे हाथ में लेकर शरीर से सिर अलग करते हुए मरोड़ दिया और फेंक दिया। उसको फेंकने पर चार कोस भूमि उसके शरीर ने घेर ली जिससे भूमि कम हो जाने पर ऋषि आदि क्रोधित हुए। २१ ऋषियों ने क्रोधित होकर बालि को शाप दिया कि यदि तुम यहाँ आओगे, तो तुम्हारा शरीर से तुम्हारा सिर अलग हो जायेगा, और उसी राक्षस की भाँति गिर जाओगे। यह सब बातें मुझे पहले से ही ज्ञात थीं, इसीलिए यहाँ आकर रहने लगा हूँ, और उसे भी यह स्मरण है कि वह यहाँ जीवित नहीं रहेगा, इसीलिए तो मैं उस वीर से बचा हुआ हूँ। २२ वही सिर अभी तक पर्वत के समान यहाँ पड़ा हुआ है, और यदि इसे फेंक सकते हो तो बालि का बध करने की सामर्थ्य को पहचानूँगा। मैं तो हार खा चुका

यी बात् सुग्रिवका सुनी झलक द्यूँ यिन्लाइ भन्न्या भयो ।
फ्याँक्या शिर् तहिँ पाउका अँगुलिले चालीस कोश् तक् गयो।।२३।।

देख्या सुग्रिवले तथापि मनमा शंका त फेरी रह्यो ।
सक्छन् क्या तब वालि मार्नकन ता ठूलो छ भन्न्या भयो ।।
सात् ताल् वृक्ष इ छन् इ एक शरले छेड्छन् त मार्छन् भनी ।
सुग्रीव्का मनमा भयो र इ कुरा सब् थोक् सुनाया पनि।।२४।।

हे नाथ् ! बिन्ति म गर्दछू अरु पनी यस्तो छ वाली भनी ।
येही शिर्कन फ्याँ कि मात्र मनले मानने विश्वास् पनि ।।
वालीले यहि ताल वृक्षकन ता बूटै बराबर् गनी ।
हल्लाएर खसालिदिन्छ जति छन् सम्पूर्ण पत्ता पनि ।।२५।।

ई ताल् वृक्ष पनी यहाँ हजुरले एक् बाण ऐले धरी ।
सब्मा छिद्र गराइबक्सनु हवस् बुझ्न्या छ मन् खुप् गरी ।।
येती बिन्ति तहाँ ति सुग्रिवजिले राम्थ्यैं जसै ता गऱ्या ।
राम्जीले पनि लौ भनेर खुशिले हात्माधनुष्वाण्धऱ्या ।।२६।।

बाण् फ्याँक्या प्रभुले र वेग् सित गयो सात् ताल भेदन् गरी ।
पर्वत् भूमि समेत् बिदारि पर गो साम्ने त सब् साफ् गरी ।।

यह सुन प्रभु ने उसे अपने पराक्रम का परिचय देने की सोची और अपने पाँव की उँगली से उसके सिर को धकेल दिया, जो चालिस कोस दूर जा पहुँचा । २३ सुग्रीव ने यह सब कुछ देखा तथापि उसके मन में पुनः शंका उत्पन्न हुई; क्योंकि बालि महाबली है, उसे मारना फिर भी सम्भव नहीं । सात तालवृक्ष जो यहाँ हैं इन्हें एक सर से गिरा देता है । ऐसे वीर को मारने की बात ने सुग्रीव के मन को चिन्तित किया और उन्होंने सब कुछ राम से कह सुनाया । २४ हे नाथ ! बालि के इसी प्रकार के और भी बहुत से पराक्रम हैं जो मैं आपको सुनाता हूँ । यह सिर फेंक देने मात्र से मेरे मन में विश्वास नहीं हुआ, क्योंकि बालि इन ताल वृक्षों को छोटे पेड़ के समान समझकर हिलाते हैं और सम्पूर्ण पत्ते गिरा देते हैं । २५ अतः इन तालवृक्षों को आप भी एक बाण द्वारा छेदने की कृपा करें, तब मैं अपने को सन्तुष्ट कर लूँगा । सुग्रीव ने जैसे ही राम से यह विनती की राम ने भी तुरन्त प्रसन्न होकर हाथ में धनुष-बाण ले लिया । २६ प्रभु द्वारा छोड़े गये बाण अत्यन्त तीव्र गति से सातों तालवृक्षों को छेदते हुए पर्वत-भूमि सहित काटकर सामने की सब भूमि साफ करने के पश्चात् पुनः तरकश में लौट आये । यह देखकर सुग्रीव को बड़ा आश्चर्य हुआ ।

ठोक्कैमा फिरि आइ वाण् जब पऱ्यो सुग्रीवजी छक् पऱ्या ।
साक्षात् श्रीपति हुन् भनी चिन्हि तहाँ राम् को स्तुती खुप्गऱ्या ॥
हे नाथ्! बल्ल चिन्ह्याँ अहो सकलका आत्मा जगन्नाथ् भनी ।
मायादेखि फरक् भयो अब त मन् लाग्दैन माया पनि ॥
क्या गर्छू अब पुत्र दार धनले सम्पूर्ण ई दूर् हउन् ।
मेरा सब् दश इन्द्रियै हजुरका सेवा टहल्मा रहून् ॥२८॥
यै पाठ्ले जब ता गऱ्या स्तुति तहाँ सुग्रीवको सो सुनी ।
यो ज्ञान् आज नद्यूँ भनी प्रभुजिले अन्तस्करण्ले गुनी ॥
मायाले अनि मोह पारि रघुनाथ् हाँस्या र बोल्या जसै ।
सुग्रीव् मोह भया वचन् सुनि तहाँ ऊ ज्ञान बिर्स्या तसै ॥२९॥
हे सुग्रीव सखे ! मलाइ दुनियाँ भन्नन् मित्यारी गरी ।
कुन् चीज् सुग्रिवलाइ दीकन गया आपत्ति तिन्का हरी ॥
यो लोक्को अपवाद् म मेट्छु अब ता वाली छ ऐले जहाँ ।
ताहाँ गैकन हाँक देउ तिमिले त्यो बालि माछू यहाँ॥३०॥
ऐले राज्य गराउँछू भनि तहां राम्को हुकुम् भो जसै ।
सुग्रिव् खूशि भयेर वालिकन खुप् हांक्या वचन्ले तसै ॥
किष्किन्धा पुरिका नजीक वनमा आयेर हांक् खुप् गरी ।
सुग्रीव्जी जब ता चल्या बुझि खबर् वाली छुट्या तेस् घरी॥३१॥

साक्षात् श्रीपति राम को पहचान कर उनकी नियमपूर्वक स्तुति की । २७
हे नाथ ! सकल संसार की आत्मा श्रीजगन्नाथ ! अब मैंने आपको पहचाना । माया के कारण विचलित मेरा मन भी अब नहीं स्थिर है । माया-मोह लेकर अब मैं क्या करूंगा । पुत्र एवं स्त्री-धन से मुझे दूर ही रक्खें । मेरी दसों इन्द्रियाँ आपकी ही सेवा-टहल में समर्पित रहें । २८
जब इस प्रकार की विनती राम ने सुनी तो इस विचार से कि अभी आज यह ज्ञान न देना ही उत्तम होगा, माया-मोहपूर्वक हंसकर बोले और सुग्रीव उनके मोहपूर्ण वचनों को सुनकर अपना सारा ज्ञान भूल गया । २९
हे सखे सुग्रीव ! संसार कदाचित् यह कहे कि मित्रता करके आपत्तियों का हरण कर सुग्रीव को कौन सी चीज सौंप गए हैं । इस लोक-अपवाद को मैं मिटाता हूँ । अब तो जहाँ बालि है वहाँ जाकर तुम ललकारो, मैं उसका वध-करूँगा । ३० जैसे ही राम ने यह कहा कि तुम्हें राज्य दिलवाऊँगा वैसे ही सुग्रीव ने प्रसन्न होकर बालि के पास जाकर उसे ज़ोरों से ललकारा । किष्किन्धापुरी के निकट बन में आए सुग्रीव की ललकार को सुनकर और सुग्रीव को पहचानकर बालि भी वहाँ आ गया । ३१

वाली सुग्रिवको लडाइँ पनि भो सुग्रीव एक् क्षण् लड्या ।
सक्थ्या सुग्रिवले कहाँ सहजमा वाली क विरलै धऱ्या ॥
बाण् छोडीकन बालिलाइ अब ता मार्नन् प्रभूले भनी ।
एक् क्षण् ता यहि आशले टिकिगया घुस्सा दिँदामा पनि ॥३२॥
बाली सुग्रिवको दुरुस्त अनुहार् एक् देखि रामले जसै ।
वाण् थाम्या टिकिसक्नु मुश्किल भई सुग्रीव भाग्या तसै ॥
पौंच्या श्रीरघुनाथका हजुरमा काम्दै र छाड्दै रगत् ।
बल् तोडीकन् वालिले हरिलियो एक् देह पौंच्यो फगत् ॥३३॥
सुग्रीव्ले तहिँ बिन्ति खुप्सित गऱ्या हे नाथ् ! मलाई यहाँ ।
मार्नैको यदि मन् छ पो पनि भन्या जोर् चल्छ मेरो कहाँ ॥
आफैंले यहिं मारिबक्सनु हवस् स्वामित् ! हजूर्ले पनि ।
शत्रुलाइ लगाइ मार्न त उचित् हो क्या सखा हो भनी॥३४॥
सुग्रीव्का इ वचन् सुनी गहभरी आँसू प्रभूले धऱ्या ।
सुग्रीव्जीकन अङ्कमाल गरि खुप् खातिर् प्रभूले गऱ्या ॥
हे सुग्रीव सखे ! दुरुस्त अनुहार् एक् देखि शंका भयो ।
मर्नन् मित्र भनेर पो डर हुँदा बाँचेर वाली गयो ॥३५॥

बालि तथा सुग्रीव का युद्ध कुछ क्षणों तक हुआ । बालि के सामने सुग्रीव क्या कर सकता था । वीर बालि ने बड़ी सरलता से उसे पकड़ लिया । इस आशा पर कि अभी प्रभु बालि को बाण-प्रहारकर मार डालेंगे, सुग्रीव कुछ क्षणों तक घूँसा मारने पर भी सहन कर टिका रहा । ३२ बालि और सुग्रीव दोनों का ही एक ही रूप देख प्रभु ने अपने बाण को रोक लिया । परन्तु सुग्रीव के लिए अब अधिक टिकना अत्यन्त कठिन हो गया, अतः वह वहाँ से भाग निकला और काँपते हुए वमन करता हुआ श्रीरघुनाथ जी के पास पहुँचा । बालि ने सुग्रीव की शक्ति का हरणकर लिया और केवल उसका शक्तिहीन शरीर ही वहाँ तक पहुँचा । ३३ सुग्रीव ने अत्यन्त व्यग्र होकर प्रभु से विनती की, हे नाथ ! यदि मुझे मार डालना चाहते हैं तो आप स्वयं मार डालें । मेरा अपने पर कोई वश नहीं । स्वामी ! क्या अपने मित्र को इस तरह शत्रु के हाथ से मरवा डालना उचित होगा । अच्छा हो यदि उस शत्रु के हाथ से न मारा जाकर मैं आपके हाथों मारा जाऊँ । ३४ सुग्रीव के इन बचनों को सुनकर प्रभु द्रवीभूत होकर बड़े दुःख से आँसू बहाने लगे । अत्यधिक स्नेह से भरकर उन्होंने सुग्रीव को अपने आलिंगन में भर लिया और बड़े आदर से कहा, हे सखे सुग्रीव ! तुम दोनों का एक-सा रूप देखकर मैं शंका से भर गया,

चिह्नो देह विषे धरेर अहिले जाऊ र हाँक् देउ फेर्
वालीलाइ म मारिदिन्छु सहजै लाग्दैन ऐले त वेर्
यस्ता बात् गरिखुप् शपथपनि गऱ्या सुग्रीवको मन् भरी
आज्ञा लक्ष्मणलाइ बक्सनुभयो फूल् ल्याउ मालाधरी ॥३६
सो माला पहिराइ भाइ तिमिले जल्दी पठाऊ तहाँ
हाँक् दीउन् अब वालिलाइ अहिले मार्छू म छोड्छू कहाँ
लक्ष्मण्ले पनि यो हुकूम् सुनि तहाँ माला लगाईदिया
त्यो माला पहिरेर सुग्रिव गया वाली जहाँ वीर् थिया॥३७
वालीलाइ सुनाइ हाँक् बहुत दी सुग्रीव् बस्याथ्या जसै
वालीले पनि शब्द सुग्रिवजिको सून्या र ऊठ्या तसै
आश्चर्यँ मनमा भयो अघि भन्या ऊठ्यो पछी रिस् अनि
मुक्का खाइ लगारियो तपनि फेर् फर्क्यो भगूवा पनि ॥३८
वालीले पनि फेर् कछाड् कसि तयार् भै जान लाग्या जसै
ताराले त नजाउ यस् बखतमा भन्दै समातिन् तसै
कोही वीर् बलवान् सहाय मिलि पो सुग्रीव आया यहाँ
साहायै नभया त येहि घडिमा सुग्रीव फिर्थ्याकहां ॥३९

और शत्रु की जगह कहीं मित्र का ही बध न हो जाय इसी डर से मैंने प्रह
करना रोक दिया और बालि बच गया । ३५ अपने शरीर पर क
चिह्न धारण करके जाओ और फिर से बालि को ललकारो । मैं बा
को सहज ही में मार डालूंगा । आज इस कार्य में कोई विलम्ब न
होगा । ऐसा कहकर सुग्रीव को आश्वासन दिया और उसके सामने इ
कार्य की शपथ ली । फिर लक्ष्मण से बोले कि एक फूलों की माला ब
लो । ३६ यह माला पहनाकर सुग्रीव को वहाँ भेजो । अब बालि
जाकर वह ललकारे । मैं इस बार उसे नहीं छोड़ूंगा, अभी मार डालूंग
राम की यह आज्ञा सुनकर लक्ष्मण ने सुग्रीव को माला पहना दी अ
सुग्रीव वह माला धारण किये हुए बालि के पास गया । ३७ बालि
ललकार कर जैसे सुग्रीव बैठा ही था कि बालि भी सुग्रीव के शब्दों
सुनकर उठ बैठा । पहले तो बालि आश्चर्य में डूब गया, लेकिन फि
तुरन्त ही क्रोधित होकर बोला कि मुक्का खाकर और इस प्रकार ख
जाने पर भी वह फिर कैसे लौटकर आया है । ३८ बालि भी कमर कसक
लड़ने के लिए तैयार होने लगा । पर तारा ने उसे 'इस समय न जाउ
ऐसा कहकर रोक लिया । निश्चय ही किसी वीर का सहयोग पाकर
सुग्रीव यहाँ आया है । यदि कोई सहारा न होता तो सुग्रीव इसी सम

तारका इ वचन् सुनेर बलवान् वीर् वालि बोल्छन् तहां ।
हे प्यारी ! नडराउ को छ म सरी वीर् आज दोस्रो यहां ॥
सुग्रीव्लाइ सहज् सहाय सहितै मारेर फिर्न्या म छु ।
वीर हूँ हांक दिदा कसो गरि बसूँ शङ्का नमान्या कछु ॥४०॥

बालीका इ वचन् सुनीकन तहां ताराजिले फेर् पनि ।
भन्छिन् नाथ्! कछु सूनि बक्सनुहवस् क्या भन्दछे यो भनी ॥
बिन्ती गर्छु म हित् कुरा हजुरमा साक्षात् अयोध्यापति ।
श्रीराम्चन्द्र सहाय छन् अब तहां चल्दैन जोर् एक् रती॥४१॥

सुग्रीव्सीत मित्यारि लाइ रघुनाथ् ज्यूले पिछामा लिया ।
वाली मारि म राज्य आज दिउँला भन्न्या वचन् यो दिया ॥
भन्न्या वात् अरुमा हुँदा बनमहाँ सूनेर अङ्गद् यहाँ ।
आई सब् इ कुरा मलाइ अघि नै भन्थ्यो न जाऊ तहाँ॥४२॥

सुग्रीव्सीत बिरोध् नराख तिमिले जाऊ र ल्याऊ यहाँ ।
यो राज् सुग्रीव्लाइ देउ अब ता जित् छैन तिम्रो तहाँ ॥
श्रीराम्का दुइ पाउमा पर तिमी गर्नन् प्रभूले दया ।
साँचा हुन् इ कुरा बुझी लिनु हवस् भोग् गर्न इच्छा भया॥४३॥

कैसे लौटता । ३९ तारा के ऐसे वचनों को सुनकर बलवान वीर बालि बोला, हे प्यारी, डरो मत । मेरे समान वीर आज यहाँ और कौन है ? सुग्रीव को उसके सहयोगी-सहित आज मार कर ही मैं आऊँगा । मैं वीर हूँ । शत्रु के ललकारने पर मैं किस प्रकार बैठा रहूँ ? अतः तुम शंका मत करो । ४० बालि के इन बचनों को सुनकर तारा पुनः कहती है— हे नाथ ! यह (दासी) क्या कहती है, कुछ तो सुनने की कृपा करें । मैं (आपके और) अपने हित की बात कहती हूँ— अयोध्यापति साक्षात् श्री रामचन्द्रजी सुग्रीव के सहायक हैं, अतः अब तो कुछ भी बश नहीं चलेगा ! ४१ सुग्रीव के संग मित्रता करके रघुनाथ जी ने बालि का वध कर राज्य दिलाने का वचन दिया है और यह बात वन में औरों के मुँह से सुनकर अंगद ने पहले ही आकर मुझे सूचित किया है, और इसीलिए पहले भी मैंने आपको वहाँ जाने से रोका था । ४२ आप सुग्रीव के साथ शत्रुता न करें । जाइए और उन्हें यहाँ ले आइए आप उनसे जीत नहीं सकते । अब यह राज्य सुग्रीव को सौंप दीजिए । जाकर श्रीराम जी के चरणों में पड़े, वे प्रभु निश्चय ही दया करेंगे । यदि जीवन की इच्छा हो तो इन बातों को सत्य समझने की कृपा करें । ४३ यह बिनती

येती बिन्ति गरेर पाउ दुइमा पक्रेर रोइन् जसै ।
तारालाइ बुझाउनाकन तहाँ फेर् वालि बोल्या तसै ।।
हे प्यारी ! नडराउ कत्ति रघुनाथ् साक्षात् रमाका पति ।
नारायण् भनि चिन्दछू म पनि सो नाथ् हुन् जगत्का गति।।४४।।
ताहाँ छन् रघुनाथ् भन्या चरणमा पर्न्याछु चाँडै वहाँ ।
सुग्रीवै छ फगत् भन्या सहजमा मार्न्याछु छाड्छू कहाँ ।।
सुग्रीव् कुन् बलियो छ पाजि भगुवा त्यो लड्न मन्सुब् लिन्या ।
तेस् पाजीकन डाकि आज कसरी यो राज्य मैले दिन्या।।४५।।
तस्मात् शोक् नगरी बसीरहु तिमी जान्छू म ताहाँ भनी ।
लड्नैलाइ कछाड् कसीकन तयार् भै बालि दौड्या पनि ।।
बाली सुग्रिव दुइ भाइ रिसले फेर् लड्न लाग्या जसै ।
रूख्को आड गरी तहाँ प्रभुजिले एक्बाण छोड्या तसै ।।४६।।
वाण् बज्र्यो जब बालिका हृदयमा सर्वाङ्ग बाधा गरी ।
पृथ्वी कम्प गराइ झट् तहिं गिऱ्या वीर् बालि मूर्छा परी ।।
मूर्छा दुइ घडी पऱ्या पछि अलिक् चैतन्य आयो जसै ।
देख्या श्रीरघुनाथलाइ खुशि भै साम्ने बस्याका तसै।।४७।।
भन्छन् श्रीरघुनाथलाइ रघुनाथ् ! तिम्रो बिराम् क्या गऱ्याँ ।
धर्मै छाडि लुकेर आज तिमिले माऱ्यौ म गैले मऱ्याँ ।।

कर, दोनों पाँव पकड़कर रोती हुई तारा को समझाने के लिए बालि पुनः बोला,— हे प्यारी ! तुम किंचित्मात्र भी भयभीत न हो। साक्षात् रमा के पति जगत्-पति नारायण रघुनाथ को मैं भली प्रकार पहचानता हूँ । ४४ यदि रघुनाथ वहाँ होंगे तो मैं तुरन्त उनके चरणों में पड़ जाऊँगा और यदि केवल सुग्रीव ही अकेला होगा तो उसे नहीं छोड़ूँगा, सहज ही मार डालूँगा। सुग्रीव कौन ऐसा बलवान है, भगोड़ा कहीं का ! मुझसे युद्ध करने की इच्छा करता है ! उस दुष्ट को बुलाकर मैं किस प्रकार यह राज्य सौंपूँ ? ४५ इसलिए शोक न करो ! तुम यहीं बैठी रहो, मैं वहाँ जाता हूँ। यह कहकर लड़ने के लिए लँगोट कसकर तैयार हो बालि दौड़ पड़ा। बालि-सुग्रीव दोनों भाई क्रोधित हो पुनः युद्ध करने लगे । वैसे ही पेड़ की आड़ से प्रभु ने एक बाण छोड़ा । ४६ जैसे ही राम का बाण, बालि के हृदय में, सर्वांग को छेदता हुआ टकराया, पृथ्वी में कम्पन हुआ और बालि मूर्च्छित होकर तुरन्त वहीं गिर पड़ा। दो घड़ी मूर्छित रहने के पश्चात् बालि को जैसे ही थोड़ी चेतना आई, वैसे ही श्रीरघुनाथ को प्रसन्नचित्त सामने बैठा पाया । ४७ बालि ने श्रीरघुनाथ जी से कहा—

यो क्या क्षत्रिय धर्म हो लुकिलुकी वीर् वाँण छोड्छन् कहीं ।
क्षत्री भैकन धर्म छोडि लडन्या एक् आज देख्याँ यहीं॥४८॥
साम्ने भैकन बाण छोडि तिमिले माथ्यौ त खुप् यश थियो ।
सुग्रीव्हो कति साख् म हूँ कति कुसाख् हादैव ! क्या मन् दियो ॥
सीता रावणले हऱ्यो भनि बहुत् सन्ताप मन्ले गरी ।
सुग्रीव्लाइ सहाय ली मकन ता लूकेर चोर् झैं गरी ॥४९॥
माऱ्यौ या अति चुक् भयो गरुँकसो बाँच्थ्याँ त याहीं बसी ।
रावण्लाइ कुलै समेत् सहजमा झिक्थ्याँ म पाता कसी ॥
लङ्का पूरी समेत् पनी म बलले झिक्थ्याँ सहज्मा यहीं ।
पाजी रावणलाइ मार्न तिमिले क्या जानुपर्थ्यो उहीं ॥५०॥
चोरी मारि लिंदा न यश् हुन गयो मासू न खानू भयो ।
धर्मात्मा तिमि पापि झैं हुन गयौ ज्यान् व्यर्थ मेरो गयो ॥
वालीका इ बचन् सुनेर रघुनाथ् भन्छन् ताँ बोल्छस् कति ।
वाली हूँ भनि गर्व गर् त पनि हेर् साँचै ताँ होस् दुर्मति ॥५१॥

हे रघुनाथ ! मैंने आपका क्या बिगाड़ा था । धर्म को त्याग कर आज आपने मुझे छिपकर मारा और मैं अब मरा । क्या वीर के लिए, छिप-छिपकर बाण प्रहार करना कोई क्षत्रिय-धर्म है । क्षत्रिय होते हुए भी धर्म को त्यागकर लड़नेवाले को आज ही मैंने देखा । ४८ सामने आकर बाण छोड़कर यदि तुम मुझे मारते तो यश की बात थी । सुग्रीव कितने सज्जन हैं और मैं कितना बुरा हूँ । हा दैव ! यह कैसा हृदय है । सीता को रावण-द्वारा हरण करने पर अत्यन्त सन्तापग्रस्त होकर सुग्रीव से तो यह सहायता ली और मुझे छिपकर चोरों की भाँति मारा । ४९ भयंकर भूल हो गई । क्या करूँ ! यदि बच जाता तो यहीं रहकर रावण को उसके सम्पूर्ण कुल-सहित, सहज ही में बँधवाकर यहाँ प्रस्तुत करता । मैं अपनी शक्ति से सरलतापूर्वक लंकापुरी सहित उसे यहाँ उठा लाता । दुष्ट रावण को मारने के लिए तुम्हें वहाँ जाने की भी आवश्यकता नहीं पड़ती । ५० मरते समय बालि कहता है कि चोरी से यों मारने से कोई लाभ नहीं हुआ । न तो तुम्हें ही यश प्राप्त हुआ न मेरा मांस ही किसी काम आया । तुमने छिपकर मुझे मारा इसलिए मुझे मारकर भी तुम धर्मात्मा नहीं, पापी के समान हो । बालि के इन वचनों को सुनकर रघुनाथ कहते हैं—"चाहे भले ही तुम बलिष्ठ होने का गर्व करते हो फिर भी तुम दुर्मति से युक्त हो । ५१ तुमने किंचित्‌मात्र भी पाप का भय नहीं

पाप्को डर् रतिभर् नराखि तइँले खुश् भै बुहारी हरिस् ।
सोही पाप् अहिले प्रकट् हुन गयो तेस् पापले पो मरिस् ॥
धर्म स्थापन गर्नलाइ त यहाँ औतार मैले लियाँ ।
धर्म जानि अधर्म ठानि अहिले तँलाइ मारीदियाँ ॥५२॥

श्रीराम्का इ वचन् सुनी प्रभु भनी जानी चरण्मा पऱ्या ।
बानर् हूँ रघुनाथ् ! क्षमा गर भनी हात् जोरि बिन्ती गऱ्या ॥
नामोच्चारणले फगत् सहजमा संसार सागर् तरी ।
स्वामित् ! जान्छ हजूरमा, अब भन्या मैले त दर्शन् गरी ॥५३॥

पायाँ मर्न म भाग्यको कति बखान् मेरो म ऐले गरूँ ।
को पाऊँछ हजूरलाइ भगवान् ! मऱ्या बखत्मा अरू ॥
मेरो ता गति यै थियो मिलिगयो जान्छू परम्धाम् म ता ।
अङ्गद्माथि दया रहोस् हजुरको हाजिर् छ सेवक् उता॥५४॥

मेरा छातिमहाँ छ बाण् हजुरको यो खैंचि छोईदिया ।
शीतल् देह हुने थियो सहजमा प्राण आज जान्या थिया ॥
बालीका इ वचन् सुनी प्रभुजिले बाण् झीकि छूँदा भया ।
ठाकुर्का अगि देह छाडि खुशि भै बाली परम्धाम् गया॥५५॥

किया और प्रसन्नतापूर्वक अपनी बहू का हरण किया । तेरा वही पाप अब प्रगट हुआ है और इस प्रकार मृत्यु को प्राप्त हो रहा है । धर्म स्थापना के लिए ही मैंने यहाँ अवतार लिया है और धर्म-अधर्म दोनों क विचार करके ही मैंने तुम्हारा इस समय वध किया है । ५२ श्रीराम के इन वचनों को सुनकर, उन्हें प्रभु जानकर बालि तुरन्त ही उनके चरणों मे गिर पड़ा और बोला, 'हे रघुनाथ ! मैं बानर हूँ' यह कहते हुए हाथ जोड़कर क्षमा-याचना करने लगा । प्राणी केवल आपके नामोच्चारण से सहज ही में संसार-सागर तर जाता है । फिर मैंने तो अन्त समय में आपके दर्शन कर लिए हैं, अतः हे स्वामी अब मैं बैकुण्ठलोक को जाता हूँ । ५ हे भगवन् ! मैं कहाँ तक आपकी सराहना करूँ । मुझे आपके हाथ मरने का अवसर प्राप्त हुआ । मृत्यु के समय आपको कौन पा सकत है । मेरी तो गति यही थी कि मैं आपको न पाता । लेकिन मैंने त आपको पा लिया । अब मैं परमधाम को जाता हूँ । अंगद के ऊप आपकी कृपा दृष्टि बनी रहे, वह आपके सेवक के रूप में तत्पर है । ५ मेरे वक्ष पर आपके बाण हैं, आपके करकमलों से इन्हें बाहर खींचकर स्प कर देने से मेरी देह शीतल हो जायगी और प्राण सहज में निकल जायेंगे

ालीका सँगमा थिया जति तहाँ बानर् ति भागी गया ।
ाराजी सित गै वहाँ सब हवाल् बिस्तार गर्दा भया ॥
ाम्‌जीले लुकि बाण छोडि सहजै बाली त मारीदिया ।
ुग्रीव् मंत्रि समेत् बहुत् खुशि भई रामक‌ै हजूर्मा थिया॥५६॥
ो राज् अङ्गदलाइ बक्सनुहवस् ढोका शहर्‌को थुनी ।
ब्स्छौं जल्दि हुकूम् हवस् हजुरको क्या हुन्छ धेरै गुनी ॥
ेती बिन्ति गऱ्या र बानरहरू जल्दी तयारी भया ।
ुकूम् माफिक काम गर्न भनि सब् बानर् खडा भै रह्या॥५७॥
बालीको परलोक् भयो भनि खबर् सूनिन् र तारा रुँदै ।
हा नाथ् ! आज कता गयौ भनि बहुत् बिह्वल् निरन्तर् हुँदै ॥
क्या गर्रूं अब पुत्र राज्य धनले भन्दै ति तारा जहाँ ।
बालीको परलोक् भयो उहि जगा सोधेर पौचिन् तहाँ ॥५८॥
बालीको दुइ पाउ पक्रि बहुतै रूँदी बिलाप् खुप् गरी ।
भन्छिन् श्रीरघुनाथलाइ रघुनाथ् फेर् बाण ऐले धरी ॥
मारीदेउ मलाइ जान्छु म पनी मेरा पतीका सँगै ।
खोज्छन् स्वर्गविषे मलाइ पतिले काहाँ म बस्छू नगै ॥५९॥

बालि के इन वचनों को सुनकर प्रभु प्रसन्न होकर बाण निकालकर बालि का शरीर छू देते हैं, जिससे बालि प्रभु के समक्ष प्रसन्नतापूर्वक देह त्याग कर परम-धाम चला गया। ५५ बालि के मरने के बाद वहाँ (बालि के पक्ष के) जितने वानर थे सब भाग गए और तारा के पास जाकर सारा हाल कह सुनाया कि राम ने (किस प्रकार) छिपकर वाण-प्रहार करके बालि को मार डाला। सुग्रीव अपने मंत्री-सहित अत्यन्त हर्षित हो वहीं श्रीराम के पास बैठे हैं। ५६ हम लोग शहर के द्वार को बन्द कर देंगे। आप यह राज्य अंगद को सौंपने की कृपा करें। शीघ्र ही आदेश देने की कृपा करें, अब अधिक विचार करने से क्या होगा। इस प्रकार बिनती करके सब बानर तत्पर हो गए; आदेशानुसार सब बानर कार्य करने को खड़े हो गए। ५७ बालि के देहावसान होने की सूचना सुनकर तारा रोती हुई अत्यन्त विह्वल हो विलाप करती है—"हे नाथ! आज आप कहाँ चले गये? मैं अब पुत्र-धनादि लेकर क्या करूँगी।" यह कहती हुई तारा उसी स्थान पर पहुँची जहाँ बालि का देहावसान हुआ था। ५८ बालि के दोनों चरणों को पकड़ कर रोती और अत्यन्त विलाप करती हुई तारा कहती है—"हे रघुनाथ, मुझे भी वाण-प्रहार कर मार डालें। मैं भी अपने पति के साथ जाऊँगी। मेरे पति मुझे स्वर्ग में ढूंढेंगे, अतः मैं

पत्नी सीत वियोग् हुंदा यति विलाप् हुँदा रह्याछन् भर्ता ।
मालुम् सब् त तहीं छ फेर् म भनुंक्या पर्दैन भन्नू पनि ।।
पत्नीदान् गरि पुण्य हुन्छ जति सो मिल्न्याछ पुण्यै पनि ।
तस्मात् आज अवश्य हान शरले जावस् पतीथ्यैं भनी ।।

येती बात् अघि रामसीत गरि फेर् सुग्रीव् जिलाई पनि ।
भन्छिन् लौ गर राज्य आज खुशिले मित्‌ले दियाको भनी ।।
ताराका इ वचन् सुनीकन बहुत् आयो प्रभूमा दया ।
तारालाइ बुझाउनाकन तहाँ एक तत्त्व भन्दा भया।।६१।।

हे ताराजि विचार् नराखि तिमिले शोकै कती गर्दछ्यौ ।
यो मेरो पति हो भनेर नबुझी व्यर्थै शरीर् हर्दछ्यौ ।।
जीवै हो पति भन्दछ्यौ पनि भन्या मर्दैन जीव् ता कहीं ।
देहै हो पति भन्दछ्यौ त किन शोक् गछ्यौं छ ऊ ता यहीं ।।६२।।

श्रीराम्‌का इ वचन् सुनीकन तहाँ ताराजि चुप् भै रहिन् ।
जुन् सन्देह पर्‍यो वहाँ मनमहाँ सो मात्र सोध्दी भइन् ।।
हेनाथ् ! मजि भयो सुन्याँ सब कुरा बुझ्दैन मन् तैपनि ।
सन्देहै मनमा रह्यो मकन ता कोगर्छ यो भोग् भनी ।।६३।।

कैसे यहाँ रह सकती हूँ ? ५९ पत्नी-वियोग में कितनी पीड़ा होती है, यह सब आपको ज्ञात है। अतः इस विषय में और मैं आपको क्या कहूँ। पत्नीदान करने पर जो कुछ पुण्य प्राप्त होता है वही सब पुण्य आपको प्राप्त होगा। इसीलिए आप अब अवश्य ही बाण-प्रहार करें, जिससे मैं पति के पास शीघ्र पहुँच जाऊँ।" ६० राम से इतनी बात कहने के बाद तारा पुनः सुग्रीव से बोली—"आज प्रसन्न होकर अपने मित्र के दिए हुए राज्य का भोग कर लो।" तारा के इन वचनों को सुनकर प्रभु को अत्यन्त दया आयी अतः तारा को समझाने के लिए एक तत्त्व कह सुनाया। ६१ "तारा ! तुम बिना विचारे ही शोक करती हो। इसे अपना पति कहकर व्यर्थ ही अपने शरीर को कष्ट देती हो। यदि आत्मा को ही पति कहती हो तो आत्मा कभी नहीं मरती और यदि शरीर ही को पति कहती हो तो व्यर्थ शोक क्यों करती हो, वह तो यहीं पड़ा है।" ६२ श्रीरामजी के इन वचनों को सुनकर तारा चुप हो गई। जिस बात का संदेह हुआ केवल वही बात पूछी—"हे नाथ! आपने सब कुछ सुनाया फिर भी मन नहीं मानता है। यदि मेरे मन में संदेह बना रहा तो यह भोग कौन करेगा। ६३ यदि मैं यह कहूँ कि शरीर ही

देहै गर्दछ भोग् भनूँ पनि भन्या जड् पो छयो देह ता ।
ईश्वर् हो उहि गर्छ भोग् भनुँ भन्या सक्तीनँ भन्नै म ता ॥
साह्रै मोह भयाँ म ता हजुरको एकै वचन्ले गरी ।
माया राखि बुझाइ बक्सनु हवस् अज्ञान मेरो हरी ॥६४॥
ताराका इ वचन् सुनीकन बहुत माया मनैमा धरी ।
तत्वज्ञान् सब ताहि बक्सनुभयो खोलेर विस्तार् गरी ॥
हे तारजि ! नरोउ आज मनले संसार् छ झूटो भनी ।
झूटो कुन् रितले छ यो भनि भन्या भन्छू म विस्तार् पनि॥६५॥
म ता नित्यै पो हूँ यहि शरिरमा लागि म गयाँ ।
शरीर् मर्दा आफै मइँ मरिगयाँ झैं पनि भयाँ ॥
अहो ! अज्ञान् मेरो भनिकन जहाँतक् मनमहाँ ।
लिंदैनन् ताहींतक् फजिति पनि छन् यै जनमहां ॥६६॥
स्फटिक् जस्तो जीव् हो शरिरहरु लाहा बुझिलिनू ।
स्फटिक् लाहाका सङ्ग धरिकन त दृष्टान्त छ दिनू ॥
लाहाका सङ्ग् बस्ता स्फटिक म छु लाल् भन्छ जसरी ।
शरीर् मर्दा मर्छू म पनि भनि जीव् भन्छ तसरी ॥६७॥
स्फटिक्ले रातो छू भनिकन सुहावस् त उ पनि ।
सुहावस् यस् जीव्ले शरिर सँगमा मर्छु म भनी ॥

भोग करता है तो शरीर तो जड़ (निश्चल) है। मैं यह भी नहीं कह सकती कि जो आत्मा है वही भोग करता है। मैं अत्यधिक मोह में डूबी हूँ, अब आप कृपा करके अपने वचनों द्वारा मुझे समझाकर मेरी अज्ञानता को हरण करने का कष्ट करें।" ६४ तारा के इन वचनों को सुनकर राम के मन में करुणा भर आई और उन्होंने सारा तत्त्व-ज्ञान विस्तार-पूर्वक बताने की कृपा की। उन्होंने कहा कि तारा ! अपने मन से इस संसार को झूठा समझो और रोओ मत। किस प्रकार यह झूठा है वह मैं तुम्हें विस्तार-पूर्वक बताता हूँ। ६५ मैं तो वर्तमान हूँ। यदि किसी के शरीर में प्रवेश करता हूँ तो शरीर मृत होने पर मैं भी मरा सा लगता हूँ और जब तक 'मैं शरीर नहीं, आत्मा हूँ' मन में ऐसा अनुभव नहीं होता, तब तक इस संसार में कष्ट विद्यमान रहता है। ६६ यह समझ लेना कि जीव स्फटिक के समान है और शरीर लाख के समान है। स्फटिक को लाख के संग रखकर दृष्टांत दिया जाता है। जिस प्रकार लाख के संग स्फटिक अपने को लाल होने का दावा करता है उसी भाँति शरीर के मरने पर जीव भी मृत कहा जाता है। ६७ स्फटिक के कहने से ही वह लाल नहीं होता,

न ता जीव् मर्न्या हो शरिरसँग लागेर जनको ।
न रातो हुन्या हो स्फटिक सब खेल् जान मनको ।।६८।।
मनैका खेलले जीव् शरिर मइँ हूँ भन्दछ भनी ।
जहाँतक् जान्दैनन् फजिति तहिँतक मिल्दछ पनि ।।
मनैको खेल् यो हो भनिकन त जान्या तहरिया ।
नजान्या जीव् जो हुन् उति त सब फन्दा परिगया ।।६९।।
शरीर् मैं हूँ मेरै धनजनहरू हुन् भनि जसै ।
पऱ्यो मन्का खेलमा तब फजिति मिल्छन् बुझ यसै ।।
बिना सत्का सङ्ले विनु गुरु कृपाले इ फजिती ।
अवश्यै छुट्तैनन् सकल मनका खेल नजिती ।।७०।।
म नित्यै आत्मा हूँ शरिरहरु हुन् चार घरिका ।
विचार्मा टिक्तैनन् विषय पनि छन् स्वप्न सरिका ।।
भनी जान्या जन्ले दृढ़ गरि लिया भक्तिरसले ।
नबिर्स्या ई मैले यति कहिदियाँ प्रीति-वशले ।।७१।।
उस् जन्मा अधिक भक्ति गऱ्यौ र ऐले ।
दर्शन् दियाँ नतर झट्ट म मिल्छु कैले ।।
मेरो स्वरूप् र इ वचन् अब सम्झि लीया ।
छुट्नन् ति दुःख तिमिलाइ जती त थीया ।।७२।।

और न जीव ही इस शरीर के साथ मरता है। न तो जीव शरीर के संग मरता है और न ही स्फटिक लाल होता है। यह सब मन का ही भ्रम है। ६८ मन के खेल के कारण ही जीव-शरीर परस्पर कहते हैं, हम एक ही हैं। जब तक ज्ञान नहीं होता, कष्ट मिलेगा ही। जिसने इसे मन का खेल समझ लिया वह तर गया; और अज्ञानता के वशीभूत सभी जीव माया के फन्दे में पड़े हुए हैं। ६९ जब यह भावना उत्पन्न हो जाती है कि मैं ही शरीर हूँ, यह धन तथा जन सब मेरा है—तो समझ लो कि कष्ट-प्राय होगा। सज्जनों की संगति और गुरुकृपा से जब तक मन के खेल को न जीत लें, तब तक इन संकटों को निश्चय ही समूल नष्ट नहीं किया जा सकता। ७० जो जन यह जानते हैं कि मैं नित्य आत्मा हूँ और शरीर केवल चार घड़ी का है उनके ध्यान में कोई विषय टिकता नहीं और वे संसार को स्वप्न के समान समझते हैं। इसे दृढ़तापूर्वक भक्ति से सुनो, भूलना नहीं। प्रीतिवश मैंने तुमसे यह सब कहा है। ७१ उस जन्म में तुमने अगाध भक्ति की थी इसीलिए मैंने आज तुम्हें दर्शन दिया, नहीं तो मैं अकस्मात् कहाँ मिलता हूँ! मेरे स्वरूप तथा मेरे वचनों को

लेखै हवैन अब कर्म पनी गरीन्या ।
रस्ता कह्याँ भवसमुद्र सहज् तरीन्या ॥
मेरो स्वरूप् र इ वचन् जति सम्झि लिन्छन् ।
सब् कर्मपाश् ति सहजैसित काटिदिन्छन् ॥७३॥
यस्ता वचन् प्रभुजिको सुनि खुशि मन्ले ।
छोडिन् जति छ अभिमान् पनि ताहिं तिन्ले ॥
सुग्रीवको पनि गयो अभिमान ताहाँ ।
रामको कृपा हुन गयापछि टिक्छ काहाँ ॥७४॥
हूकूम् भयो प्रभुजिको तहिं मित्रलाई ।
हे मित्र सुग्रिव ! जलाउ इ वालिलाई ॥
क्रीया गरीकन शरीर् गर शुद्ध ऐले ।
सब् काम छोडिकन यै गर आज पैले ॥७५॥
हूकूम् भयो र तब बालि लगी जलाया ।
क्रीया गरीसकि ति सुग्रिव ताहिं आया ॥
अर्पण् गरी सकल राज् प्रभुका चरण्मा ।
सेवक् बनीकन म बस्छु भन्या शरण्मा ॥७६॥
सुग्रीव्लाइ हुकूम् भयो प्रभुजिको जो हौ तिमि सो म हुँ ।
जाऊ आज र गादिमा बस म ता याहीं बनैमा रहुँ ॥

समझोगी तो जो कष्ट तुम्हें अब तक हुआ है वह नष्ट हो जायेगा। ७२ (पिछले कर्मों की) रेखा भी कदाचित् अब मिट जाय और कर्मादि भी नहीं किया जायेगा। सहज ही भव-सागर तरने का मार्ग ही कहाँ है? मेरे स्वरूप तथा वचनों को जितना ही समझ लोगी उतने ही सहज भाव से कर्मपाश कट जायेगा। ७३ प्रभु जी के ऐसे वचनों को सुनकर तारा ने प्रसन्न मन से जो भी अभिमान था सब वहीं त्याग दिया। सुग्रीव का भी अभिमान समाप्त हो गया। राम की कृपा होने पर अभिमान कहाँ टिकता है? ७४ वहीं पर मित्र के लिए प्रभु की आज्ञा हुई--हे मित्र सुग्रीव! बालि का दाह और क्रिया-कर्म आदि कर शरीर को अभी शुद्ध करो। सब काम छोड़कर आज सर्वप्रथम यही कार्य करो। ७५ ऐसी आज्ञा होते ही सुग्रीव ने बालि को ले जाकर दाह दिया और क्रिया आदि करने के बाद सुग्रीव ने लौटकर सकल राज्य, प्रभु के चरणों में अर्पित करके सेवक बनकर रहने की इच्छा प्रकट की। ७६ सुग्रीव को प्रभु की आज्ञा हुई कि जो तुम हो वही मैं हूँ। तुम आज जाकर गद्दी पर बैठो,

गाऊँमा घरमा बसोइनँ भनी मेरो प्रतिज्ञा छ यो।
जानन् लक्ष्मण ता सँगै घर पनी भाई गया भैगयो ॥७७॥
वर्षा काल् बितिसक्छ यो जब तसै सीताजिको खोज् गऱ्या।
येती मर्जि दिया र सुग्रिव बहुत् आनन्द-सागर् पऱ्या॥
लक्ष्मणजी पनि रामका हुकुमले सुग्रीवका साथ् गया।
सुग्रिव् गादिविषे बस्या पछि फिरी दाखिल् प्रभूथ्यैं भया॥७८॥
राम्ले ताहिं थियो प्रवर्षणगिरी तेस्का शिखर्मा चढी।
देख्या सुन्दर एक् गुफा स्फटिकको ताहीं गराया मढी॥
फल् फूल् ताहिं खचित् थियो नजिकमै थीयो तलाऊ पनि।
देख्या मन् खुशि भो तहाँ प्रभुजिको बस्न्यै जगा हो भनी॥७९॥
वर्षा काल तलक् रह्या प्रभु तहाँ पर्थ्यो बखत्मा झरी।
जन्तू पुष्ट थिया सबै ति वनका खायेर घाँस् पेट् भरी॥
बस्थ्या श्रीरघुनाथका वरिपरी खुप् ध्यान् प्रभूमा धरी।
ध्यान् जन्तूहरुको विचार् गरि तहाँ खूशी रहन्थ्या हरि॥८०॥
लक्ष्मण्ले तहिं बिन्ति एक् दिनगऱ्या हेनाथ्! पुजाको विधान्।
पाऊँ सुन्न हुकुम् हवस् खुशि भई कुन् हो करूणा-निधान्॥
ब्रह्मा व्यास् अरु नारदादिहरु सब् भन्छन् पुजाले सरी।
आर्को तर्न उपाय छैन जनको खुश् छन् पुजैमा हरि॥८१॥

मैं यहीं वन में रहूँगा। गाँव में, घर में न रहने की मेरी प्रतिज्ञा है, अतः लक्ष्मण के संग में तुम्हें घर जाना उचित होगा। ७७ जब वर्षाकाल व्यतीत हो जायगा तब सीता की खोज की जायेगी। ऐसी आज्ञा सुनकर सुग्रीव आनन्दसागर में डूब गया। लक्ष्मण जी भी श्रीराम की आज्ञा पाकर सुग्रीव के साथ (नगर में) गए और सुग्रीव का राज्याभिषेक करने के बाद पुनः प्रभु के पास उपस्थित हुए। ७८ राम ने प्रवर्षण गिरि के शिखर पर चढ़कर एक स्फटिक की बनी हुई सुन्दर गुफा देखी जो चारों ओर से फल-फूलों से घिरी हुई थी। उसके निकट ही एक तालाब भी था। ठहरने योग्य ऐसा देखकर प्रभु जी के मन में प्रसन्नता हुई। ७९ प्रभु वहाँ वर्षाकाल तक रहे। समय-समय पर वर्षा होती थी। पेट भर घास खाकर उस वन के सभी जन्तु हृष्ट-पुष्ट थे और श्रीरघुनाथ के ध्यान में उन्हीं के चारों ओर वे घूमा करते थे। जन्तुओं की इस ध्यान-मग्न दशा पर प्रभु जी मुग्ध रहते थे। ८० एक दिन लक्ष्मण ने विनती की— हे नाथ! हे करुणानिधान, पूजा के विधान क्या है, मैं सुनना चाहता हूँ, प्रसन्न होकर बतलाने की कृपा करें। ब्रह्मा, व्यास और नारद आदि

यस्तो सूनि गर्‍याँ र मन् चरणमा सोध्याँ पुजाको विधान् ।
साँचो तत्त्व बताउन्या हजुर झैं को छन् दयाका निधान् ॥
यस्ता लक्ष्मणका वचन् सुनि तहाँ पूजा विधी हो जति ।
सब् संक्षेप् रितले कह्या प्रभुजिले लक्ष्मण् भया खुश् अति ॥
वर्षाकाल् यहि रीतले तहिं बित्यो वार्ता कथाको गरी ।
सम्झ्याझट्ट सिताजिलाइ र विलाप् फेर् गर्न लाग्या हरि ॥
किष्किन्धा पुरिमा यसै-बिचमहाँ मन्त्री हनूमानले ।
सुग्रीव् सीत सिताजि खोज् गर भनी बिन्ती गर्‍या ज्ञानले ॥
हे राजन् रघुनाथले त उपकार् ठूलो हजूर्को गरी ।
यो राज् बक्सनुभो हजूर्कन ठुलो वीर् बालिलाई हरी ॥
सो बिर्स्या झइँ मान्दछू हजुरले सीताजिको खोज् खबर् ।
गर्न्या हो अब ता बखत् पनि भयो सब् काम छोडी अवर् ॥८४॥

यादै छैन हजूरलाइ त सिता खोज् गर्नुपर्ला भनी ।
वालीको गति जुन् भयो उहि गती होला हजुर्को पनि ॥
यो बिन्ती हनुमानको सुनि तहाँ साँचो भन्या यो भनी ।
सुग्रिव्ले तहिं झट् हुकूम् पनि दिया लश्कर् पठाऊ भनी ॥८५॥

सबका यही कथन है कि पूजा के समान तरने का अन्य कोई उपाय नहीं है। (भगवान्)पूजा(भक्ति)से ही प्रसन्न होते है। ८१ लक्ष्मण का मन पूजा का विधान जानने के लिए राम के चरणों में केन्द्रित हो गया। वे बोले, हे दयानिधान ! सत्य-तत्वों को जानने और बतानेवाला आपके समान और कौन है ? लक्ष्मण के ऐसे वचनों को सुनकर जितनी भी पूजा की विधियाँ हैं, प्रभु जी ने प्रसन्न होकर लक्ष्मण को संक्षेप में बतायीं। ८२ इसी प्रकार कथा-वार्ता करते हुए वर्षा-काल व्यतीत किया। एक दिन अकस्मात् सीता जी का स्मरण हो आया और श्रीराम पुनः विलाप करने लगे। इसी बीच मंत्री हनुमान ने किष्किन्धापुरी में सुग्रीव से सीता जी की खोज करने के लिए विनती की। ८३ हे राजन् ! रघुनाथ ने वीर बालि को मारकर यह राज्य आपको देकर महान् कृपा की है। परन्तु मुझे लगता है कि वह सब आप भूल गए हैं; अब तो सब काम छोड़कर सीता जी की खोज कराइए। ८४ लगता है, आपको याद ही नहीं हैं कि सीता जी की खोज करना है। बालि की जो गति हुई है आपकी भी वही गति होगी। हनुमान की यह विनती सुनकर 'यह सत्य ही कह रहा है', ऐसा जानकर सुग्रीव ने तुरन्त सीता जी को खोजने के लिए वानरों की सेना भेजने की आज्ञा दी। ८५ दस हजार वानर जाकर, ईशान दिशा में

दस् हज्जार् विर जाइ सात द्विपमा बानर् जती छन् सबै ।
खोजी आज खबर् दिउन् र सब वीर् जम्मा हउन् झट् अबै ।।
जो आवैन हुकूम् बदर् गरि यहाँ ई पन्ध्र दिन् भित्रमा ।
तेस्को प्राण् म लिन्याछु निश्चय बुझून् मानून् सबै चित्तमा।।८६।।
यस्तो सुग्रीवको हुकूम हुन गयो सोही बमोजिम् गरी ।
दश् हज्जार् विरको खटन् पनि गर्‍या लागेन बेर् एक् घरी ।।
दश् हज्जार् विर दश् दिशातिर छिटी खुश् भै हनूमान् रह्या ।
ती वीर् दश् तिर गै खबर् दिइ अनेक् सेना बटुल्दा भया ।।८७।।
लाग्या गर्न विलाप् अनेक् तरहले लीला गरी राम् उसै ।
भन्छन् छन् ति सिता कहाँ अझ पनी लागेन पत्ता कसै ।।
याहाँ छन् ति सिता भनीकन खबर् पाऊँ त जाऊँ तहाँ ।
ल्याऊँ अमृत झैं सिताकन यहाँ पाऊँखबर्पो कहाँ ।।८८।।
हे भाई ! सुन जो छ आज इ सिता हर्न्या म तेस्को सबै ।
कूलै भस्म गराउन्याछु करुणा राख्वैन उसमा कबै ।।
येती बात् तहिं भाइ सीत गरि फेर् सीताजिको शोक् गरी ।
लाग्या गर्न विलाप् अनेक् तरहले त्रैलोक्यका नाथ् हरि।।८९।।
हे सीते ! कसरी म देखि पर भै बस्छचौ तिमी छौ कहाँ ।
प्राणै थाम्न कठिन् भयो म विनु ता आपत् भया हुन् तहाँ ।।

जो भी वानर हैं उन्हें खोजकर यह सूचना दे दें कि सब वीर तुरन्त एकत्रित हो जाएँ । जो भी इस आज्ञा का पालन कर पन्द्रह दिन के अन्दर नहीं आता है उसके प्राण मैं ले लूँगा, इसे निश्चय जान लें और स्मरण रक्खें ।८६ सुग्रीव की ऐसी आज्ञा के अनुसार दस हजार वीरों को एकत्र कर नियुक्त करने में कुछ भी देर नहीं हुई । दस हजार वीरों को दसों दिशाओं में भेजकर हनुमान प्रसन्नतापूर्वक रहे । उन वीरों ने दसों दिशाओं में जाकर सूचना देते हुए विपुल सेनाएँ एकत्रित कीं । ८७ श्रीराम अनेक प्रकार की लीलाएँ कर, विलाप करने लगे । "सीता कहाँ हैं ? क्या अब तक भी कहीं पता नहीं लगा ? सीता के अमुक स्थान पर होने की सूचना मुझे दो ताकि मैं वहाँ जा सकूँ । अमृत-तुल्य सीता को यहाँ ले आओ । कहाँ हैं, इसकी सूचना कहाँ मिलेगी ! ८८ हे भाई ! सुनो, आज सीता का हरण करनेवाला जो भी हो, मैं उसके कुल को भस्म कर दूँगा । उस पर कभी दया नहीं करूँगा ।" इतनी बात भाई से कहकर पुनः सीता के शोक में त्रैलोक्य के नाथ हरि अनेक प्रकार से विलाप करने लगे । ८९ "हे सीते ! मुझसे अलग किस प्रकार रहती हो । कहां हो ! तुम्हारे

तिम्रो भेट नपाउँदा सकन्‍ ता ई चन्द्र सूर्य बन्या।
तिम्रोतागरुँ क्याबखान्‌तिमित झन्‌ छयौदुष्टकापास्‌भन्या॥९०॥
सुग्रीव्‌ आज कृतघ्न झैं हुन गया आयो शरद्काल्‌ पनि।
सुतैं छैन सिताजिलाइ अझतक्‌ खोज्‌ गर्नु पर्‍या भनी॥
मार्छु सुग्रिव दुष्टलाइ पनि फेर्‌ बाली सरीको गरी।
लक्ष्मण्‌ले प्रभुका वचन्‌ सुनि गर्‍या बिन्ती अगाड़ी सरी॥९१॥
हे नाथ्‌! आज मलाइ बक्सनु हवस्‌ हूकूम्‌ म मार्छू गई।
लक्ष्मण्‌का इ वचन्‌ सुनेर रघुनाथ्‌ अत्यन्त खूशी भई॥
भन्छन्‌ भाइ! नमार आज बहुतै हप्काउ जाऊ तहाँ।
मारी हाल्न त योग्य छैन तर खुप्‌ चेताइ आऊ यहाँ॥९२॥
हुकूम्‌ यो प्रभुको सुनीकन तहाँ लक्ष्मण्‌जि जल्दी गया।
सीतानाथ्‌ नर्‌को लिला गरि विलाप्‌ खुप्‌ गर्न लाग्दा भया॥
किष्किन्धापुरि पौंचि लक्ष्मणजिले टङ्कार्‌ धनूको गर्‍या।
पत्थर्‌ वृक्ष उठाइ वानरहरू कोही अगाडी सर्‍या॥
सब्‌ वानर्‌कन नष्ट गर्दछु भनी लक्ष्मण्‌जिले वाण्‌ धर्‍या।
अङ्गद्‌ आइ हटाइ वानरहरू जल्दी चरण्‌मा पर्‍या॥

बिना प्राण बचाना भी कठिन हो गया है। तुम्हारे वियोग में तुम्हारे गुरु-स्वरूप चन्द्र और सूर्य मुझसे कहते हैं कि तुम दुष्ट के और निकट हो। ९० आज सुग्रीव अकृतज्ञ सा हुआ है। शरदकाल भी आ गया। किन्तु उसे कोई चिन्ता नहीं है कि अभी सीता की खोज करनी है। बालि की तरह दुष्ट सुग्रीव को भी मैं मार डालूँगा।" प्रभु के इन वचनों को सुनकर लक्ष्मण आगे बढ़कर विनती करने लगे— ९१ "हे नाथ। मुझे आज्ञा करें, मैं अभी जाकर सुग्रीव को मार डालूँगा।" लक्ष्मण की ऐसी विनती सुनकर श्रीरघुनाथ अत्यन्त प्रसन्न हुए और बोले हे भ्राता! आज उसे न मारो। किन्तु जाकर उसे डाँटो-फटकारो। अनावश्यक लड़ना और मारना उचित नहीं है; अतः उठो, केवल चेतावनी देकर आओ। ९२ प्रभु के इस आदेश को सुनकर लक्ष्मण शीघ्रता से चले गये। सीतानाथ मानव-लीला कर अत्यन्त दुःख से विलाप करने लगे। किष्किन्धापुर पहुँचकर लक्ष्मण ने अपने धनुष को टंकारा। टंकार सुनकर पत्थर तथा वृक्षों को उठाकर कुछ वानर आगे बढ़ आए। ९३ सब वानरों का नाश करता हूँ, कहकर लक्ष्मण ने बाण चढ़ाया। अंगद ने शीघ्रता से आकर वानरों को हटाया और लक्ष्मण के चरणों में गिर पड़े। लक्ष्मण ने प्रसन्न होकर

अङ्गद् रीत बहुत् प्रसन्न भइ झट् ताहाँ अह्राया पनि।
जाऊ देउ खबर् अगाडि तिमिले लक्ष्मण्जि आया भनि॥९४॥
अङ्गद् गैकन त्यो खबर् जब दिया सुग्रीवलाई तहाँ।
जल्दी सुग्रिवले हुकूम् पनि दिया लौ जाउ ल्याऊ यहाँ॥
अङ्गद्लाइ सँगै लियेर हनुमान् चाँडै चरण्मा परी।
लक्ष्मण्लाइ बुझाइ ल्याउ तिमिले सब् रीस शान्ती गरी॥९५॥
यस्तो सुग्रिवको बचन् सुनि तहाँ सोही बमोजिम् गरी।
पाऊमा परि बाहुमा धरिलिया ल्याया बहुत् खुश् गरी॥
हुकूम सुग्रिवको सुनीकन तहाँ ताराजि चाँडै गइन्।
लक्ष्मण् लाइ बुझाइ खुश् गरुँ भनी खुप् बिन्ति गर्दी भइन्॥९६॥
लक्ष्मण सुग्रिवको भयो जब त भेट् सुग्रीव् चरणमा पऱ्या।
लक्ष्मणले पनि ताहि सुग्रिवजिको सातो कुराले हऱ्या॥
बाली झैं हुन मन् छ की भनि जसै लक्ष्मण्जिले बात् गऱ्या।
लक्ष्मण्लाइ बुझाउनाकन तहाँ जल्दी हनूमान् सऱ्या॥९७॥
लक्ष्मण्जी पनि कामले बुझि गया बात्चित् खुशीका गरी।
फिर्नाको मतलब् गऱ्या प्रभु थिया जाहाँ जगन्नाथ् हरि॥
लक्ष्मण्का सँग लागि सैन्य पनि लौ सुग्रीव खुश् भै गया।
जाहाँ श्रीरघुनाथ् थिया तहिं सबै दाखिल् क्षणमा भया॥९८॥

अंगद को आज्ञा दी कि जाओ और सुग्रीव को मेरे आने की सूचना दे दो। ९४ अंगद ने जाकर जब सुग्रीव को यह सूचना दी तो सुग्रीव ने भी तुरन्त जाकर उन्हें लिवा लाने की आज्ञा दी। सुग्रीव ने अंगद से कहा कि हनुमान को संग लेकर जाओ और लक्ष्मण के चरणों में पड़कर समझा-बुझाकर तथा उनके क्रोध को शान्त करके उन्हें ले आओ। ९५ सुग्रीव के आदेशानुसार अंगद जाकर लक्ष्मण के चरणों में गिरा और उन्हें अपनी बाहों में समेटकर प्रसन्न करके ले आया। सुग्रीव का आदेश सुनकर तारा भी वहाँ आ गई। लक्ष्मण जी को समझाकर प्रसन्न करने के उद्देश्य से वह विनती करने लगी। ९६ जब लक्ष्मण और सुग्रीव की भेंट हुई तब सुग्रीव तुरन्त उनके चरणों में गिर पड़े। लक्ष्मण ने भी अपनी बातों से सुग्रीव के होश ठिकाने कर दिये। जैसे ही लक्ष्मण ने कहा कि कदाचित् तुम्हें भी बालि की तरह मरने की इच्छा है तो उन्हें मनाने के लिए हनुमान आगे बढ़े। ९७ लक्ष्मण जी भी इन सब कार्यों से सन्तुष्ट हो गए और प्रसन्नतापूर्वक बातचीतकर प्रभु के पास लौटने की उन्होंने इच्छा की। साथ ही सुग्रीव भी अपनी सेना सहित अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक,

देख्या श्री रघुनाथलाइ र परै रथ् देखि उत्रेर फेर् ।
लक्ष्मण् सुग्रिव पाउमा परि गया लागेन एक् छीन बेर् ॥
राम्ले सुग्रिवलाइ मित्र ! भनि खुप् आलिङ्गनादी गरी ।
सोधपुछ् गर्नुभयो बहुत् खुशि हुँदै आफैं अगाडी सरी ॥९९॥
लाग्या सुग्रिव बिन्ति गर्न रघुनाथ् ! मैले त सेना पनि ।
ल्यायाँ वीर्हरू छन् अनेक् तरहका छन् इन्द्र तुल्यै पनि ॥
ई सब् स्वामितका निमित्त खुशि भै प्राणै दिन्याछन् जसो ।
हूकूम् हुन्छ हवस् यहाँ हजुरको गर्छन् ति ऐले तसो॥१००॥
खूशी भै रघुनाथको हुकुम भो हर्षाश्रुधारा गरी ।
हे सुग्रीव सखे ! इ वानरहरू जाऊन् दिशा दश् भरी ॥
जाहाँ छन् ति सिता तहीं पुगि खबर् ल्याऊन् भनी रामको ।
हूकूम् पाइ पठाइ वानरहरू उर्दी दिया कामको॥१०१॥
जाऊ वीर्हरु सब् दिशा दशविषे सीताजि मिल्छिन् जहाँ ।
पत्ता लाइ सिताजिको खबर ली सब् वीर आऊ यहाँ ॥
मैन्हा दीन बिताइ एक् रति खबर् केही नपाई त जो ।
ढील् गर्न्या तसलाइ ता म सहजै मान्र्याछु मर्न्याछ त्यो ॥०२॥

जहाँ श्रीरघुनाथ थे, वहाँ तत्क्षण पहुँच गए । ९८ श्रीरघुनाथ को देखते ही, दूर ही से रथ पर से उतरकर लक्ष्मण और सुग्रीव को राम के चरणों में पहुँचने में किंचित्मात्र भी विलम्ब नहीं हुआ। राम ने सुग्रीव को मित्रकहकर आलिंगन किया और अत्यन्त प्रसन्न होकर स्वयं आगे बढ़कर वे पूछ-ताछ करने लगे । ९९ सुग्रीव विनती करने लगे, हे रघुनाथ ! मैं तो अपनी सेना भी साथ लेकर आया हूँ जिसमें इन्द्र के समान अनेक वीर हैं। ये सभी अपने स्वामी के निमित्त अपने प्राण न्यौछावर करने को तत्पर हैं। जैसी आपकी आज्ञा होगी वैसा ही किया जायगा। १०० प्रसन्नता से हर्षाश्रु की धारा प्रवाहित करते हुए श्रीरघुनाथ ने आज्ञा दी, हे सुग्रीव सखे ! ये बानर चारों दिशाओं की ओर चले जायें और जहाँ सीता हों वहाँ पहुँचकर उनका समाचार ले आवें। राम का यह आदेश पाकर (सुग्रीव ने) सब बानरों को कार्य-विवरण समझाकर उन्हें चारों दिशाओं की ओर भेज दिया। १०१ जाते समय सुग्रीव ने सब बानरों को आज्ञा दी कि हे वीरो ! सब दिशाओं की ओर जाओ— जहाँ भी सीता जी हों, पता लगा कर उनकी खबर लेकर पुनः लौट आओ। महीना भर के अन्दर पता लगाने में जो ढिलाई करेगा उसे मैं तुरन्त मार डालूँगा वह बच नहीं पायेगा। १०२ इस प्रकार शीघ्रता से आदेश देकर अन्य

गर्‍यो जल्दि हुकूम् गरी अरु दिशा बानर् पठाया अवर् ।
दक्षिण् तीर त खुप् बड़ा बिरहरू छानी पठाया जबर् ॥
अङ्गद्लाइ र जाम्बवान् र हनुमान् वीर् नल् सुषेण् फेर् शरभ् ।
मैंद द्वीविद आठ् पठाइ प्रभुका पास्मारह्याएक्फगत्॥१०३॥
हुकूम् पाइ इ आठ वीर्हरु पनी झट् जान लाग्या जसै ।
हात्मा औंठि लियेर एक् हुकुम भो रामचन्द्रजी को तसै ॥
जाऊ काम् पनि साधि आउ हनुमान् ली जाउ औंठी पनि ।
मेरो नाम् यहि औंठिमा छर दियाँ सीताजि चिन्लिन् भनी॥४॥
यो काम् सिद्ध गराउन्या त तिमिछौ तिम्रो छ यो बल् भनी ।
चीन्याको छु तबै त भन्छु म शुभै हून्याछ रस्ता पनि ॥
येती श्रीरघुनाथको पनि हुकूम् पाया र औंठी लिया ।
खूशी भै हनुमानले प्रभुजिमा सम्पूर्ण तन्मन् दिया॥१०५॥
अंगद् वीर् हनुमान्हरू हुकुमले दक्षिण् दिशामा गया ।
सर्वत्रै पृथिवी ढुँडी ढुंडि सबै घुम्दै ति जाँदा भया ॥
एक् दिन् विन्ध्य गिरीविषे वनमहाँ देख्या र राक्षस् जसै ।
रावण् हो कि भनी मुठी कसि कसी मान्या कसैंले तसै॥१०६॥

दिशाओं की ओर वानरों को भेज दिया, किन्तु दक्षिण दिशा की ओर महाबली और चुने हुए अत्यन्त पराक्रमी वानरों को भेजा। अंगद, जाम्बवन्त, हनुमान, नल, सुषेण, शरभ, मैन्द और द्विविद नामक आठों वानरों को भेजकर केवल सुग्रीव अकेला ही प्रभु के पास रहा। १०३ सुग्रीव की आज्ञा लेकर जैसे ही ये आठों वीर जाने लगे, श्रीरामचन्द्रजी हाथ में एक अँगूठी लेकर कहने लगे— जाओ, काम में सफल होकर आओ। हनुमान ! यह अँगूठी लो। इसमें मेरा नाम अंकित है, इसे सीताजी सहज ही पहचान लेंगी इसीलिए दे रहा हूँ। १०४ यह मैं भली प्रकार जानता हूँ कि इस कार्य में सफलता प्राप्त करनेवाले तुम ही हो, क्योंकि तुममें वह शक्ति निहित है। इसीलिए मैं कहता हूँ कि मार्ग में भी सब प्रकार से शुभ ही होगा। श्रीरघुनाथ की यह आज्ञा पाकर हनुमान ने प्रसन्न होकर प्रभु से वह अँगूठी ले ली और सम्पूर्ण तन-मन से स्वयं को प्रभु की सेवा में अर्पित कर दिया। १०५ अंगद और वीर हनुमान प्रभु की आज्ञानुसार दक्षिण दिशा की ओर चले गए। पृथ्वी पर चारों ओर ढूंढ़ते हुए जा रहे थे, तभी एक दिन विन्ध्यपर्वत के बीचोबीच वन में एक राक्षस को देखा और उसे रावण समझकर सब ने उस पर मुष्टिका (घूँसे) से प्रहार किया। १०६ परन्तु वह रावण नहीं था यह जानकर

रावण् होइन यो त जाउँ भनी फेर् अर्का वनैमा गई ।
हुँढ्थ्या प्यास बढ्यो र जल् पनिढुँडी हिड्थ्या ति आकुल् भई ॥
गूफा देखि त प्वाँख् चिसा गरिगरी हाँस् निस्किँदादेखि तेस् ।
गूफा भित्र पस्या सबै विरहरू देख्या बहुत् बस्ति बेस्॥७॥

ठण्डा जल् सितका तलाउ पनि धेर् सब् बृक्ष फल्फूल् भरी ।
धेर् छन् घर् घरमा छ चीज् पनि अनेक हीरा जवाहर् धरी ॥
गुल्जार् देख्नु भन्या मनुष्यहरु ता एक् देख्नु नाहीं कहीं ।
एक् योगीनि स्वयंप्रभाकन जहाँ ध्यान् गर्दि देख्यातहीं॥८॥

सोधिन् योगिनिले प्रणाम् तब गर्‍या कुन् काम आयौ यहाँ ।
क्या मन्सुब् छ बताउ फेर् अब उपर् जानू छ इच्छा जहाँ ॥
यस्ता योगिनिका वचन् सुनि तहाँ बोल्या हनूमानले ।
आयौं आज यहाँ सबै यति जना केवल् जलै खानले ॥९॥

काम् यै हो यहि काम गर्नुछ भनी विस्तार् सुनाया जसै ।
साह्रै खुश् हनुमानका वचनले हूँदी भइन् ती तसै ॥
बोलिन् फल्फुल खाउ जल् पनि पिई फर्केर आऊ यहाँ ।
मेरो नाम बताइ आज त म ता जान्छू प्रभू छन् जहाँ॥१०॥

अन्य वन में जाकर खोज करने लगे। खोज करते-करते जब वे प्यासे हुए तो अत्यन्त आकुल होकर जल की खोज करने लगे। इतने में अचानक एक गुफा से हंसों को अपने पर भिगो-भिगोकर बाहर निकलते देखा। अतः उसी गुफा में समस्त वीरों सहित प्रवेश किया तो वहाँ एक अत्यन्त उत्तम बस्ती देखी। १०७ उन्होंने देखा कि वहाँ पर शीतल जल वाले तालाब के चारों ओर वृक्ष हैं, जो फल-फूलों से लदे हुए हैं। अनेकों घर भी हैं जिनमें तमाम वस्तुएँ और हीरे-जवाहरात भरे पड़े हैं। परन्तु वहाँ न तो कोई चहल-पहल थी न कोई मनुष्य था; केवल एक योगिनी, जिसका नाम स्वयंप्रभा था, ध्यानमग्न बैठी थी। १०८ योगिनी ने जब उन वानरों से यह प्रश्न किया कि आप लोग किस काम से आए हैं, क्या इच्छा है और अब आगे कहाँ जाना है तब सब वानरों ने योगिनी को प्रणाम किया और योगिनी के ऐसे वचनों को सुनकर हनुमान ने कहा कि इस समय हम सब लोग केवल जल पीने के लिए आए हैं। १०९ जब हनुमान ने अपने आने का कारण तथा कार्य के विषय में सविस्तार कह सुनाया तो योगिनी अत्यन्त हर्षित हुई और उन्हें फलादि खाने को देकर बोली कि खा-पीकर जाओ और मेरा नाम बताकर लौट आओ। मैं भी जहाँ प्रभु हैं वहाँ जाऊँगी। ११० योगिनी के आदेशानुसार वे जलपान करके गए

गरना योगिनिका वचन् सुनि गगा जलपान् गरी फेर् पनि ।
आया योगिनिले गरिन् सब कुरा राम्का इ दूत् हुन् भनी ॥
हेमाकी सखि हूँ सखी गइगइन् उन्का वचन्ले यहाँ ।
धेरै वर्ष बसी प्रभू भजि लिंदा ऐले कृतार्थ-भयाँ ॥१११॥
भनिथन् राम् अवतार् हुन्याछ हरिको हन्याछि रावण् सिता ।
खोज्न्या वानर आउनन् तहिं तलक् याहीं रहू तीमि ता ॥
वानर्को रघुनाथको गरि पुजा यैं ब्रह्मलोक् पाउली ।
जान्छु आज म ता तिमी बसिरहू क्यैकाल् पछी आउली॥११२॥
यस्तो अर्ति दिई गइन् सङिनिज्यू जुन् ब्रह्मलोक् हो वहाँ ।
नाच्नीमा शिव खुशहुँदा अघि दिया यो स्थान बस्ती यहाँ ॥
पुत्री हुन् उ त बिश्वकर्मकि म हूँ गन्धर्व कन्या सबै ।
विस्तार् आज कह्याँ म जान्छु खुशि भै जाहाँ प्रभू छन् अबै॥११३॥
आँखा चिम्ल पुन्याइदिन्छु सहजै रस्ता विषे क्षण्महाँ ।
जाऊ तीमिहरू पनी भनि सहज् पौंचाइ रास्तामहाँ ॥
श्रीरामचन्द्रजिथ्यैं ति योगिनि गइन् वानर् पुग्या रस्तिमा ।
पौंचिन् योगिनि रामको कुटि जहाँ थीयो उसै बस्तिमा ॥११४॥

और लौटकर आ गए। उन्हें राम के दूत जानकर योगिनी ने भी उनसे अच्छी तरह बात-चीत की और बताया कि मैं हेमा की सहेली स्वयंप्रभा हूँ। सहेली तो चली गई पर मैं उसी के वचन के प्रभाव से यहीं बैठी हूँ। यहीं रहकर कितने ही वर्षों से मैं प्रभु को भजते-भजते आज कृतार्थ हुई हूँ। १११ उसका कथन था कि श्रीराम का अवतार होगा, तब उनकी पत्नी सीता का रावण द्वारा हरण होगा, उस समय उन्हें ढूँढ़ता हुआ वानर यहाँ आएगा; तब तक तुम यहीं रहो। उस समय वानर तथा रघुनाथ की पूजा करके ब्रह्मलोक आओगी मैं जाती हूँ। तुम बैठी रहो कुछ समय के बाद आओगी। ११२ ऐसे उपदेश देकर मेरी सहेली उसी समय ब्रह्म-लोक को चली गई। वहाँ उसके नृत्य से प्रसन्न होकर शिवजी ने उसे यह बस्ती दी थी। वह विश्वकर्मा की पुत्री है और मैं गन्धर्व-कन्या हूँ। इस प्रकार विस्तृत वर्णन कर स्वयंप्रभा ने प्रसन्नचित्त होकर जहाँ प्रभु है वहीं जाने की इच्छा प्रकट की। ११३ (फिर उसने कहा कि) आँखें बन्द करो; मैं सहज ही में तुम्हें रास्ते तक पहुँचा दूँगी, यह कहकर उसने उन लोगों को रास्ते पर पहुँचा दिया। वह योगिनी श्रीरामचन्द्र के पास गई। वानर भी रास्ते पर पहुँच गए। राम की कुटी जिस बस्ती में थी योगिनी वहाँ पहुँच गई। ११४ उसने राम की स्तुति की और राम

रामको स्तुति गरिन् र वर् दिनुभयो जाऊ र बद्रीमहाँ।
मेरो ध्यान् गरि यो बिताउ र शरीर् पाउली परम्धाम् तहाँ ॥
जो तिम्रा मनमा छ त्यो सब पुगोस् यस्तो त वर् ली गइन् ।
बद्रीमा गइ रामका वचनले संसार तर्दी भइन् ॥११५॥

सीता खोज्न भनेर वानरहरू फिर्थ्या सबै वन्महाँ ।
सीतालाइ नपाउँदै बितिगयो धेर्काल एकदिन् तहाँ ॥
अंगद्ले अति शोक् गऱ्या अब सहज् मार्छन्, सबैको गयो—
प्यारो प्राण गरौं कसो अब मऱ्यौं बाँच्नू यहीं तक् भयो॥१६॥

सुग्रीव्ले त मलाइ मार्नु छ सहज् पाया निहूँ यो पनि ।
मार्छन् निश्चय शत्रु जानि अहिले यो शत्रुको बीज् भनी ॥
केवल् राम-कृपा हुँदा अघि बच्याँ ऐले त राम्ले पनि ।
दिन्छन् निश्चय मार्नलाइ मतलब् खोजेन सीता भनी ॥१७॥

अंगद्का इ वचन् सुनीकन तहाँ क्वै बिन्ति यो पार्दछन् ।
हे साहेब ! यहीं बसौं यहिं बस्या कुन् पाठले मार्दछन् ॥
अंगद्का अरु वानरादिहरुका सून्या र कूरा तहाँ ।
बोल्या श्रीहनुमानले किन बहुत् छोटो गऱ्यौ बात् यहाँ॥१८॥

ने (प्रसन्न होकर) उसे वर दिया। उसे आज्ञा मिली कि बदरीनारायण धाम में जाकर मेरा ध्यान करो, तभी तुम्हें परमधाम प्राप्त होगा। "जो तुम्हारे मन में है वह सब तुम्हें प्राप्त हो", ऐसा वर प्राप्त कर बदरी-नारायण धाम में जाकर श्रीराम के ध्यान में मग्न हो स्वयंप्रभा संसार से तर गई। ११५ सीता की खोज करते हुए वन में घूमते-घूमते बानरों को बहुत समय बीता, पर सीता नहीं मिली तो एक दिन वहाँ अंगद ने अत्यन्त खेद प्रकट किया। अब तो हम सभी मारे जायेंगे, सबके प्रिय प्राणोंकी रक्षा किस प्रकार की जाये। अब तो लगता है कि बचने का समय यहीं तक है। ११६ सुग्रीव तो बहाना पाकर मुझे मार ही डालेगा, मुझे शत्रु का बीज समझकर सहज ही में समाप्त कर देगा, यह निश्चय जानो। पहले तो राम की कृपा से बचा था। अब तो राम भी सीता की खोज न करने का कारण बताकर निश्चय ही मुझे मार डालने का प्रोत्साहन देंगे। ११७ अंगद के इन वचनों को सुनकर वहाँ कुछ लोग यह विनय करते हैं, "हे श्रीमन् ! यहीं रह जायँ। यहाँ रहने पर किस प्रकार मारेंगे। अंगद एवं अन्य वानरों की ऐसी बातें सुनकर हनुमान कहते हैं कि तुम लोग ऐसी तुच्छ कल्पना क्यों कर रहे हो ? ११८ सुग्रीव के

सुग्रीव्का प्रिय छौ अवश्य भगवान् रामचन्द्रजीका पनि ।
साँचो भन्छु म बेस् कुरा हजुरमा यस्तो छ कारण् भनी ॥
भूभार् हर्न भनेर राम-अवतार् आदी पुरुष्को भयो ।
कस्को सक् छ सिताजि हर्न नहिंता इच्छा प्रभूकैछयो ॥११९॥

मानिस् को अवतार् भयो प्रभुजिको सेवक् त बानर् भई ।
गर्छौं सेवन भक्तिले प्रभुजिको केवल् हुकूम्मा रही ॥
जान्याछौ पछि धाममा पनि सँगै यो जान मन्ले यहाँ ।
क्या गर्छौं मन्मा कुतर्क हरिको रिस्छैन कस्सै महाँ॥१२०॥

यस्ता बात् हनुमानका सुनि बुझ्या अंगद् र खुशी भई ।
बिन्ध्याचल् गिरिका कुनाकुनिसमेत् सम्पूर्ण खोज्दै गई ॥
पौंच्या क्षीरसमुद्रका तिरमहाँ पर्वत् थियो एक् तहाँ ।
तेस्को नाम महेन्द्र हो नजिकमा देखिन्छ सागर् जहाँ॥१२१॥

पृथ्वीमा न मिलिन् सितान जलमा जान्याछ बाटो कतै ।
खोजौं जाउँ भन्या सक्यौं पृथिवि सब् पायौंन सीता कसै ॥
फर्की जाउँ भन्या पनी अब सहज् मार्छन् त चाहीं यहीं ।
मर्नू आज निको भनेर तिरमा बंदर् बस्या सब् तहीं॥१२२॥

तो तुम प्रिय हो ही, श्रीराम के भी अवश्य प्रिय हो। सत्य कहता हूँ, यह बड़ी उत्तम बात है। श्रीराम ने भूभार-हरण करने के लिए पुरुष के रूप में अवतार लिया है। किसकी शक्ति है जो सीता का हरण करे? यह स्वयं प्रभु की ही इच्छा है। ११९ प्रभुजी ने मनुष्य के रूप में अवतार लिया है और वानर उनके सेवक बने हैं। उनकी आज्ञा का पालन करते हुए हम लोग प्रभु जी की सेवा भक्तिपूर्वक करेंगे। जिससे अन्त में परम-धाम को प्राप्त होंगे, यह भी मन में जान लो। मन में कुतर्क उत्पन्न करके क्या करोगे? हरि का किसी के ऊपर क्रोध नहीं है। १२० हनुमान जी की बातों को सुन और समझकर अंगद प्रसन्न हुए और विन्ध्याचल पर्वत के कोने-कोने में सीताजी की खोज करने लगे। वे क्षीर-सागर के किनारे पहुँचे। वहाँ एक पर्वत था जिसका नाम महेन्द्र था। वहाँ से समुद्र अत्यन्त निकट दिखाई देता था। १२१ पृथ्वी पर सीता जी कहीं भी नहीं मिलीं तो सोचने लगे कि जल में ही जाने का मार्ग ढूँढा जाये, क्योंकि सम्पूर्ण पृथ्वी पर न मिलने से लौट भी जायेंगे तो मारे ही जायेंगे। अतः मरना ही उत्तम है यह समझकर सब वानर किनारे पर बैठ गए। १२२ उस वन का निवासी एक वृद्ध गिद्ध जैसे ही बाहर निकला

सम्पाती अति युद्ध गृद्ध वनमा थीया ति निस्क्या जसै ।
हेर्‍या दृष्टि फिराइ तेस् तिरमहाँ देख्या ति वानर् तसै ।।
बोल्या वाक्य पनी म भर्छु अब पेट् पायाँ अहारा भनी ।
अंगद् वीर्हरुले सुन्या र इ वचन् साह्रै डराया पनि।।१२३।।
लाग्या भन्न सबै ति वानरहरू आयेछ हाम्रो त काल् ।
मर्छौं आज अवश्य मार्छ यसले यो गृद्धको हेर चाल् ।।
क्याबात् भाग्य जटायुको प्रभुजिको प्यारो हुन्या काम् गरी ।
ठाकुर्लाई रिझाइ पार् पनि गया संसार सागर तरी।।१२४।।
व्यर्थै हामि त गृद्धका मुखविषे सब् पर्न आयौं यहाँ ।
येती वानरका वचन् सुनि तसै सम्पाति बोल्या तहाँ ।।
हे वीर् हो नडराउ आज तिमिले प्यारो सुनायौ कुरा ।
मेरै भाइ जटायु हो कहु खबर् तेस्का त सप्पै कुरा।।२५।।
अङ्गद् वीर्हरुलाइ निर्भय दिई येती भन्याथ्या जसै ।
सब् वृत्तान्त बताइ अङ्गदजिले विस्तार् सुनाया तसै ।।
सम्पाती तहिं भन्दछन् मकन लौ लैजाउ सागर् महाँ ।
दिन्छू आज जटायुलाइ जलदान् चाँडो म ऐले तहाँ ।।१२६।।
सीताको म बताउँला सब खबर् स्नान् अञ्जलीदान् गरी ।
ई बात् सूनि उचालि झट् लगिदिया सम्पातिले स्नान् गरी ।।

और उसने तट की ओर दृष्टि डाली तो उसे वानर दृष्टि में आए। उन्हें देखते ही वह बोला, मुझे आहार मिला है; अब पेट भर लूँगा। अंगद आदि वीर उसके इन वचनों को सुनकर अत्यन्त भयभीत हुए। १२३ वे सब बोले कि अब तो काल निकट ही आ पहुँचा है। आज तो अवश्य ही मरेंगे। इस गिद्ध की चाल देखो ! यह आज अवश्य ही हम लोगों को खा डालेगा। जटायु भी कैसा भाग्यशाली था जो प्रभु का प्रिय कर्म करके उन्हें संतुष्ट करके संसार-सागर को पार कर गया। १२४ वानर परस्पर कहने लगे कि हम व्यर्थ ही गिद्ध के मुँह के समक्ष आए हैं। वानरों के इन वचनों को सुनकर सम्पाति ने कहा— हे वीरो ! तुम वीर हो, भय न करो। आज तुम लोगों ने बड़ी अच्छी बात सुनाई है, जटायु मेरा ही भाई है। उसके बारे में सविस्तार सब समाचार बताओ। १२५ तब अंगद ने उसे सब वृत्तांत सविस्तार कह सुनाया। उसी समय सम्पाति बोला, मुझे शीघ्र सागर में ले चलो, आज मैं अपने भाई जटायु को जलदान दूँगा। १२६ स्नान एवं अंजलि-दान कर मैं सीताजी के बारे में सब समाचार बताऊँगा। इस बात को सुनकर वानर तुरन्त

दीया अञ्जलिदान् जसै फिरि उहीं ल्यायेर राखीदिया।
सम्पाती खुशि भै सबै कहिदिया आपत्तिदेख्तै थिया ॥१२७॥
हे वीर् हो ! म त गृद्ध हूँ र म सिता देख्छू नजर्ले पनि।
याहीं छन् यहि भेष् छ येति सँग छन् यस्तो छ चाला भनी ॥
भन्छू सब् तिमिलाइ चार सय कोश् जो कुद्न सक्छौ यहाँ।
सो लङ्का पनि पुग्दछौ उति कुद्या पौंचिन्छ लङ्कामहाँ॥१२८॥
लङ्कामा ति सिताजि छन् तहिं गया मिल्छिन् सिताजी वहाँ।
गाह्लो चार् सय कोश कद्न छ तहीं जाऊ न जाऊ तहाँ ॥
रावण्ले लगि भित्र गुप्ति वनमा राख्याकि छन् बेश् गरी।
पौंची भेट् गर जान सक्छ तिमिमा को यो समुद्रै तरी॥१२९॥
अश्शोक्को वनभित्र वृक्ष छ असल एक् शिंशपाको तहीं।
सीता छन् तहिं भेट् हुन्याछतहिलौ जायो गऊ काल् यहीं ॥
क्यारूँ रावणलाइ मार्न म सहज् मार्न्या थियाँ हो र को।
साक्षात् सूर्यजिका कठोर् किरणले प्वांखै डढ्यासब् र पो॥१३०॥
जाऊ चार् सय कोश कुद्न सकन्या कुन् वीर् छ सागर् महाँ।
सीताको समचार् खबर् बुझि सहज् फर्कर आऊ यहाँ ॥

सम्पाति को उठाकर ले गये और जैसे ही वह अंजलि-दान कर चुका, वैसे ही उसको पुनः वहीं लाकर रख दिया। सम्पाति ने प्रसन्न होकर सब कुछ कह सुनाया। १२७ हे वीरो ! मैं तो गिद्ध हूँ अतः मैं अपनी आंखों से यहीं से सीताजी को देख रहा हूँ कि वह किस स्थान पर हैं, किस रूप में हैं किनके संग में हैं और कैसी युक्ति में (फसी) हैं। मैं तुम्हें सब बतलाता हूँ। यहाँ से जो चार सौ कोस छलांग भर सकेगा, वह लंका पहुँच जायेगा। १२८ सीता जी लंका में ही हैं। वहीं जाने पर मिल जायेंगी। चार सौ कोस कूदना कठिन है। तब भी किसी प्रकार वहाँ अवश्य जाओ। सीताजी को रावण ने ले जाकर लंका के अन्दर एक गुप्त वन में रखा है। समुद्र पार कर तुममें से जो वहाँ जा सकता हो जाये, और भेंट करे। १२९ अशोक वन के अन्दर एक अत्यन्त उत्तम शिंशपा का वृक्ष है। सीता जी वहीं हैं, वहीं भेंट होगी अतः चले जाओ। क्या बतायें समय निकल गया। मैं रावण को सहज ही मार सकता था, परन्तु साक्षात् सूर्य की तीव्र किरणों से (मेरे पंख) जल गये हैं और इस कारण लाचार होना पड़ा। १३० चार सौ कोस कूद सकनेवाला वीर कौन है ? वह चला जाये और सीता का समाचार आदि पता लगाकर लौट आये। यह समाचार बताकर, पुनः

यो सम्चार बताइ फेर् खुशि भई आफ्नू हवाल् सब् कह्या ।
जुन् रीत्ले अघिप्वाँख्डढ्यार बिपती पाई अनेक्ताप् सह्या॥३१॥
सम्पाती र जटायु भाइ दुइ हूँ हाम्रो कती बल् भनी ।
बल् जान्नाकन दूइ भाइ उडि गैं श्रीसूर्यबिम्बै मनि ॥
पुग्दामा ति जटायुले त अति ताप् मान्या र छोप्याँ जसै ।
बाँच्या भाइ जटायु क्यारुँ म गिर्याँ मेरा डढ्या प्वाँख् तसै॥३२॥
उच्चादेखि गिर्याँ म विन्ध्यगिरिमा तीन् दिन् त मूर्छा भयाँ ।
ब्यूत्याँथ्याँ जब चन्द्रमा मुनि मिल्या तिन्का नजीक्मा गयाँ ॥
सोध्या ती ऋषिले र सब् जब भन्याँ आफ्ना विपत्का गति ।
मेरो चित्त बुझाउनाकन भन्या सब् दुःख हुन्छन् जति॥३३॥
यस्तो हुन्छ विपत्ति गर्भ रहँदा यो हुन्छ यौवन्महाँ ।
यस्तो हुन्छ बुढो हुँदा त भनुँ क्या थाहै छ सब् मन्महाँ ॥
जाहाँ देह बन्यो र दुःख छ भनी पर्दैन भन्नू पनि ।
जाहाँ देह छ ताहिं दुःख छ चिन्ह्या साँचो कुरा हो भनी ॥३४॥
तस्मात् दुःख नमान देह छ त रोग् दुःखादि सारा सही ।
श्रीराम्को अवतार् हुन्या बखततक् यस्सै जगामा रही ॥

प्रसन्न होते हुए अपना भी सब हाल बताया कि किस प्रकार उसके पंख जल गये और उसने विपत्ति में पड़कर अनेकों कष्ट सहे। १३१ सम्पाति और जटायु हम दो भाई हैं। हममें कितना बल है यह जानने के लिए हम दोनों भाई सूर्यमण्डल के समीप पहुँचे थे। वहाँ पहुँचने पर जटायु को जैसे ही अत्यन्त ताप का अनुभव हुआ उसने उड़ना छोड़ दिया। जटायु तो बच गया परन्तु मैं (उड़ता ही गया।) क्या करूँ मेरे पंख जल गये और मैं गिर गया। १३२ मैं इतने ऊँचे से बिन्ध्यगिरि में गिरा कि तीन दिन तक मूर्छित पड़ा रहा। जैसे ही मुझे चेतना आयी मुझे चन्द्रमा मुनि मिले और मैं उनके निकट गया। उन ऋषि के पूछने पर मैंने अपनी सारी विपत्ति कह सुनाई। मेरे चित्त को सान्त्वना देने के लिए उन्होंने सभी दुखों के विषय में बताया। १३३ (उन्होंने कहा) गर्व करने से ऐसी ही विपत्ति प्राप्त होती है और यौवन के बाद वृद्ध होने पर तो कैसा दुख होता है क्या कहूँ; सब मन में ज्ञात ही है। जहाँ देह का सृजन हुआ वहाँ दुःख की प्राप्ति होती ही है; जहाँ देह है वहीं दुःख है, इसे ही सत्य जानो। १३४ इसीलिए दुःख न मानो, देह है तो रोग है और दुःख भी है। श्रीराम के अवतार होने के समय तक तुम इसी स्थान पर रहो और कुछ काल व्यतीत करो। राम का अवतार होगा

केही काल बिताउ राम अवतार् होला र सीता पनि।
हर्ला रावणले र तेस् वखतमा सीताजि खोज्नै भनी ॥३५॥
वीर् बानर्हरु आउनन् ति सँग भेट् होला उ वेला महाँ।
सीताको समचार् जसै त कहुला प्वाँख् उम्रनन् फेर् तहाँ॥
भन्थ्या सोहि कुरा सबै पुगि गयो हेर् प्वाँख उम्न्या भनी।
प्वाँख् देखाइ बिदा भई उडिगया जाऊ तिमी लौ भनी॥१३६॥
अङ्गद् वीर्हरु खुश् भया अब मिलिन् सीता भनी सब् जसै।
लाग्या गन्न समुद्रलाइ र गमन् गर्नै नसक्नू कसै॥
फेरी ताप् मनमा पऱ्यो र अति शोक् अङ्गद्जि गर्दा भया।
अंगद्लाइ बुझाउनाकन अघी श्रीजाम्बवान्जी गया॥३७॥
साहेब् ! शोक् रतिभर् कदापि नहवस् जाउन् हनूमान् भनी।
अङ्गद्लाइ बुझाइ झट्ट हनुमान्- जीका नजीक्मा पनि॥
पौंची बेस् स्तुति गर्दछन् किन यहाँ चूप्चाप् भई दूर् रह्यौ।
राम्का काम निमित्त मात्र हनुमान्! योजन्म लींदा भयौ॥३८॥
क्या वर्णन् बलको गरूँ जब तिमी जन्म्यौ उसै फल् भनी।
पाक्याको फल ठानि सूर्यकन ता हात्ले म टिप्छू भनी॥

और सीता का भी रावण द्वारा हरण होगा। उसी समय सीता जी को खोजते हुए वीर वानर आदि आयेंगे। १३५ उन लोगों से तुम्हारी भेंट होगी और उसी समय जब तुम सीता जी के समाचार सुनाओगे, तुम्हारे पंख फिर से उग आयेंगे। उनकी कही गयी वही सब बातें अब पूर्ण हो रही हैं। अपने उगे हुए पंखों को दिखाकर संपाति ने विदाई ली और सबसे जाने की इच्छा प्रकट करके उड़ गया। १३६ अंगद आदि वीरों को जैसे ही यह मालूम हुआ कि अब सीता मिल गयीं, उन्हें हार्दिक प्रसन्नता हुई। वे समुद्रों को गिनने लगे और पार जा सकने का कोई मार्ग सोचने लगे; किन्तु उन्हें कोई मार्ग नहीं सूझा और वे मन में चिन्तित होने लगे। अंगद गहरे शोक में डूब गये। अंगद को सान्त्वना देने के लिए श्रीजाम्बवन्त आगे बढ़े। १३७ श्रीमान्! आप किंचित्मात्र भी शोक न करें, हनुमान चला जायेगा। अंगद को समझाकर हनुमान के निकट पहुँचे और उनकी उत्तम प्रशंसा करने लगे। तुमने ये जन्म राम के लिए ही लिया है और तुम ही यहाँ चुपचाप दूर बैठे हो। १३८ तुम्हारे बल के बारे में मैं क्या वर्णन करूँ। जब तुम जन्मे थे, सूर्य को पका हुआ फल समझकर उसे हाथ से पकड़ने के लिए तुमने आकाश की ओर छलाँग

आकाश्मा जब ता कुद्यौ दुइ हजार् कोश्तक् पुगी फेर् झर्‍यौ ।
यस्ता बालकमै थियौ किन यहाँ कोश्चार् सयैमा डर्‍यौ।।३९।।
सून्या सब् हनुमानले स्तुति तहाँ जो जाम्बवान्ले गर्‍या ।
साह्रै खुश् हनुमान् भया र खुशिले खुप् गर्जना पो गर्‍या ।।
पर्वत् तुल्य बडो स्वरूप् धरि वचन् बोल्या म सागर् तरी ।
लङ्का भस्म गराइ रावण समेत् सब् सैन्य चूर्णं गरी ।।४०।।
सीता लीकन आउँछू कि रिसले झुन्ड्याइ रावण् पनि ।
ज्यूँदै दाखिल गर्छु राम्‌चरणमा खूनी हजूर्‌को भनी ।।
की ता छन् ति सिता यहाँ भनि खबर् मात्रै सिताको लिई ।
फिर्छू श्रीरघुनाथका चरणमा तन् मन् वचन् सब्‌दिई।।४१।।
श्रीराम्‌का चरणारविन्द मनमा धर्दा र उठ्ता जसै ।
बोल्या श्रीहनुमानले यति कुरा श्री जाम्बवान्ले तसै ।।
भन्छन् श्रीहनुमानलाइ तिमिले भेट् मात्र ऐले गरी ।
फर्की आउ सिताजिको खबर ली एक्लै नलड्न्या गरी।।४२।।
स्वामित्‌का सँग लागि गैकन पछी सवभर् लडौंला भनी ।
भन्दा खूशि भई बिदा भइलिया झट् कुद्‌न मन् सुब् पनि ।।

मारी थी । उस समय तुम दो हजार कोस पहुँचकर पुनः लौटे थे । जब तुम बाल्यावस्था में ही ऐसे थे तो यहाँ केवल चार सौ कोस के लिए क्यों डर कर बैठे हो । १३९ जाम्बवन्त की इन सब बातों को हनुमान ने सुना और अत्यन्त प्रसन्न हुए। प्रसन्नता के मारे वे जोर-शोर से गर्जन करने लगे । इसके बाद वे पर्वत तुल्य विराट रूप धारण करके बोले कि मैं सागर पार कर लंका को भस्म करने के बाद रावण सहित उनकी सेनाओं को समाप्त कर दूँगा । १४० सीताजी को ले आऊँगा और रावण को लटकाकर जीवित हत्यारे के रूप में श्रीराम के चरणों में उपस्थित करूँगा ! नहीं तो सीताजी के बारे में सूचना मिलते ही श्रीरघुनाथ के चरणों में लौट आऊँगा और अपना तन-मन-बचन सब (उनके लिए) अर्पण करूँगा । १४१ श्रीराम के चरणारविन्दु मन में धारण कर हनुमान ने जैसे ही यह इच्छा प्रगट की वैसे ही जाम्बवन्त ने श्रीहनुमान से कहा कि हनुमान, अभी केवल भेंट करके सीताजी की सूचना लेकर लौट आओ; अकेले लड़ने का झंझट मत मोल लो । १४२ स्वामी के संग जाकर बाद में हम लोग यथासाध्य लड़ेंगे । ऐसी बात सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हो हनुमान ने विदाई ली और तुरन्त कूदने की मन में ठानी । लाल मुख पीला शरीर धारण किये हुए

लाल्मुख् पीत शरीर् गरी गिरि उपर् जल्दी हनूमान् गया ।
सब् प्राणीहरुले तहाँ ति हनुमान्- जीलाइ हेर्दा भया ।।१४३।।
।। किष्किन्धाकाण्ड समाप्त ।।

हनुमान शीघ्र ही पर्वत के ऊपर चले गये और सब प्राणी हनुमान को देखने लगे । १४३

किष्किन्धाकाण्ड समाप्त

सुन्दर काण्ड

तर्छू क्षार समुद्र आज सहजै भन्न्या इरादा धरी ।
श्रीराम्का चरणारविन्द मनले अत्यन्त चिन्तन् गरी ।।
भन्छन् वीर्हरुलाइ ताहिं हनुमान् हे वीर हो ! पार् तरी ।
सीताजीकन भेट्तछू म अहिले जान्छू बडो वेग् धरी ।।१।।
पापी जन् पनि रामका स्मरणले संसार पार् तर्छन् ता ।
राम्कै काम निमित्त औंठि सँग ली जान्छू दुतै हूँ म ता ।।
क्या डर् क्षार समुद्र तर्न सहजै पौंचन्छु लंका भनी ।
चारै पाउ जमिन् विषे धसि कुद्या हेर्दै तमसा पनि ।।२।।
दक्षिण् तरफ् मुख गरीकन कुद्न बस्ता ।
ऊपर् नजर् दि अघिका दुइ पाउ धस्ता ।।
सोझो गराइकन घाँटि कुद्या जसै ता ।
वायू सरी हुन गया हनुमान् तसै ता ।।३।।

उसी दिन क्षीरसागर पार कर लेने की कामना से उन्होंने मन ही मन श्रीराम के चरणारविन्दों का ध्यान कर अपने वीरों से कहा—हे वीरो ! मैं सागर के पार पहुँच कर बड़ी तेज़ी से जाकर सीताजी से भेट करूँगा । १ पापी जन भी केवल राम का स्मरण करके ही संसार-सागर पार कर लेते हैं । राम के ही कार्य से यह अँगूठी लेकर जाऊँगा । मैं तो उनका ही दूत हूँ, डर किस बात का है ? क्षीरसागर पार कर शीघ्र ही लंका पहुँचूंगा । ऐसा कह कर चारों पाँव-हाथ धरती पर जमा कर कौतुक के साथ कूदे । २ हनुमान ने दक्षिण की ओर मुँह करके कूदने के लिए ऊपर दृष्टि उठायी और आगे के दोनों हाथों को जमा कर जैसे ही गर्दन उठायी

आकाश् मार्ग गरी कुद्या र हनुमान् उड्थ्या ति आकाशमा ।
सीताजीकन भेटि फर्किकन फेर् रामचन्द्रका पासमा ।।
पुग्न्या अक्कल बल् छ छैन इनको बूझौं सबै बल् भनी ।
इन्द्रादीहरुले खटाइ सुरसा जल्दी पठाया पनि ।।४।।

जल्दी गै सुरसा अघिल्तिर बसिन् साम्ने हनूमानका ।
क्या भन्छन् हनुमान् भनेर खुशि भै कूरा गरिन् खानका ।।
भोकी धेर् दिनकी म खोजिहिँडथ्याँ क्या खाँ अहारा भनी ।
पायाँ बल्ल यहाँ मिल्यौ तिमि त एक् साह्रै भयाँ खुश् पनि ।।५।।

आऊ लौ पस मूखमा जब भनिन् बोल्या हनूमान् तसै ।
भन्छन् आज सिता नभेटिकन ता पस्तीनँ मुखमा कसै ।।
सीता भेटि स फर्कुँला र रघुनाथ् ज्यूका हजुर्ता गई ।
विस्तार् बिन्ति गरेर आइ पसुँला तिम्रो अहारा भई ।।६।।

यस्ता बात् सुनि भन्दछिन् ति सुरसा मेरा मुखैमा पसी ।
निस्की जाउ नहीं भन्या म बलले पक्रेर दाह्रा धसी ।।
मार्छू येति भनिन् र लौ तब यहाँ मुख् बाउ चाँडो भनी ।
चार् कोश्को त शरीर् गरीकन बस्या आफू हनूमान् पनि ।।७।।

और छलांग मारी, वैसे ही वायु के समान उड़ चले । ३ जब हनुमान आकाश की ओर कूदकर वायु-मण्डल में उड़े तो इन्द्रादि ने यह जानना चाहा कि हनुमान में सीता से भेंट करके लौट कर श्रीरामचन्द्रजी के पास पुनः पहुँचने का बुद्धि-बल है अथवा नहीं; और यही जानने के उद्देश्य से उन्होंने सुरसा को तुरन्त वहाँ भेजा । ४ सुरसा शीघ्रता से जाकर हनुमान के समक्ष बैठ गयी और यह जानने के लिए कि हनुमान क्या कहता है, इस प्रकार बोली कि मैं तुम्हें खाने आयी हूँ । कई दिनों की भूखी हूँ । क्या आहार करूँ, इसी खोज में भटक रही थी । आज तुम्हें पाकर मैं अत्यधिक प्रसन्न हूँ । ५ सुरसा ने कहा, "तुम आओ और मेरे मुँह में प्रवेश करो" । उसके इन वचनों को सुनकर हनुमान ने कहा कि आज मैं सीताजी की खोज में हूँ, उनसे भेंट किये बिना मैं कदापि तुम्हारे मुँह में प्रवेश नहीं करूँगा । सीताजी से मिलकर मैं लौटूँगा और श्रीरामजी से सविस्तार विनती करके पुनः लौटकर तुम्हारा आहार बनकर प्रवेश करूँगा । ६ हनुमान की बात सुनकर सुरसा कहती है कि मेरे मुँह में प्रवेश करके निकल जाओ, नहीं तो मैं बलपूर्वक पकड़कर दाढ़ में फाँसकर मार डालूँगी । इतना कहने पर हनुमान ने उसे मुँह खोलने को कहा और तुरन्त अपना शरीर चार कोस का बनाकर

चार् कोशका हनुमान देखि सुरसा बिस् कोशको मुख् गरिन् ।
चालीस्कोश्हनुमान्भयारअसिकोश मुख् फेरि जल्दी धरिन् ।।
जल्दी फेर् हनुमानले छ बिस कोश- को रूप गराई बस्या ।
फेर् दूई सय कोश मुख् जब गरिन् अंगुष्ठ झैं भै पस्या ।।८।।
निस्क्या जल्दि र भन्दछन् ति हनुमान हे देवि ! मुखमा पसी ।
निस्क्याँ जान्छु म ता अवश्य अब ता बन्दैन् काम् ता बसी ।।
अक्कल् बल्सितका वचन् जब सुनिन् यस्ता हनूमानका ।
आफ्नू सत्य कुरा तसै सब कहिन् छाडिन् कुरा खानका ।।९।।
सक्छौ काम् तिमि साधि आउ अनुमान् यो बल् छ तिम्रो भनी ।
चीन्ह्याँ भन्छु म इन्द्रका हजुरमा तिम्रो पराक्रम् पनि ।।
बल् बुझ्नै भनि इन्द्रका हुकुमले आयाकि ता हूँ भनी ।
खुश् भै स्वर्गविषे गइन् ति सुरसा कूद्या हनूमान् पनि ।।१०।।
जस्ले सागर नाम् धर्‍या मकन सो राजा सगर् जो गया ।
तिन्का वंशमहाँ विभूषण सरी श्रीराम राजा भया ।।
तिन्का काम निमित्त आज हनुमान् जान्छन् इ लङ्कामहाँ ।
मैनाक् पर्वत! निस्कि जाउ तिमि गै विश्राम् गराऊ तहाँ ।।११।।

बैठे । ७ चार कोस का हनुमान देखकर सुरसा ने अपने मुँह को बीस कोस का बनाया और तब हनुमान चालिस कोस का हुआ । सुरसा ने तत्क्षण ही अपना मुँह अस्सी कोस का बनाया हनुमान ने शीघ्रता से अपने को एक सौ बीस कोस का बना डाला और जब सुरसा ने दो सौ कोस का मुँह बनाया, वैसे ही अंगूठा-सदृश सूक्ष्म रूप धारणकर हनुमान ने उसके मुँह में प्रवेश किया । ८ सुरसा के मुँह में प्रवेश कर हनुमान कहते हैं कि हे देवी मैं मुँह में प्रवेश कर निकल आया हूँ । अब मैं जाता हूँ । अब जाता हूँ, यहाँ रहकर अवश्य ही कार्य में विलम्ब होगा । सुरसा ने जब हनुमान की ऐसी शक्ति तथा बुद्धिमत्ता देखी तो आहार करने की बात छोड़कर सब सत्य कह सुनाया । ९ हनुमान ! तुम अपने कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त कर आओगे । तुममें अपार शक्ति है, यह मैंने जान लिया । अब मैं इन्द्र को भी तुम्हारे पराक्रम के विषय में कह सुनाऊँगी । इन्द्र के आदेशानुसार मैं तुम्हारी परीक्षा लेने ही आयी थी । इसके बाद सुरसा प्रसन्न होकर स्वर्ग को चली गयी और हनुमान भी कूद पड़े । १० सागर ने कहा कि जिसने मुझे सागर के नाम से विभूषित किया है, उन राजा सगर के वंश में श्रीराम राजा हुए हैं और उन्हीं के कार्य से आज हनुमान लंका जा रहे हैं, अतः हे मैनाक

थाक्या हुन् हनुमान् बिसाइ फलफूल् खाऊन् र जाउन् भनी ।
भन्दा सागरका वचन् सुनि तहाँ निस्क्या ति मैनाक् पनि ।।
अर्को एक मनुष्यको स्वरुप ली हात् जोरि बिन्ती गऱ्या ।
आई फल्फुल् खाइ जाउ हनुमान् भन्दै अगाडी सऱ्या ।।१२।।

आज्ञा सागरको हुँदा चरणमा आयाँ म ऐले भनी ।
मैनाक्ले यति बिन्ति बात् जब गऱ्या बोल्या हनूमान् पनि ।
राम्को काम् नगरी बसेर कसरी खान्छू म जान्छू यसै ।
हात्ले छुन्छु म लौ भनेर खुशि भै छोयेर कूद्या तसै ।।१३।।

केही दुर् हनुमान् पुग्या पछि तहाँ एक् सिंहिका राक्षसी ।
छाया पक्रि उ जन्तु खैंचि बलले खान्थी जलैमा बसी ।।
छाया पक्रि उ तान्न लागि हनुमान् ज्यूको गती बन्द भो ।
कस्ले बन्द गऱ्यो गती भनि दिशा दश्मा तसै दृष्टिगो ।।१४।।

देख्या तल्तिर दृष्टि दीकन तहाँ जस्सै नजर्मा परी ।
एकै चोट् दुइ लात् दिया र सहजै घुस्रुक्क ताहीं मरी ।।
ताहाँ देखि कुदी गया र हनुमान् पौंच्या जसै तीरमा ।
लङ्कापूरि तहाँ त्रिकूट गिरिका देख्या उपर् शीरमा ।।१५।।

पर्वत ! प्रकट हो जाओ और जाकर विश्राम कराओ । ११ हनुमान थके होंगे, विश्राम कर लें । उन्हें फल-फूलादि दो, खाकर जायँ । इस प्रकार सागर के बचनों को सुनकर मैनाक भी प्रकट हो गये । वे एक अन्य मनुष्य के रूप में प्रकट होकर आगे बढ़े और इस प्रकार विनती की—"हे हनुमान, आओ, फल-फूल खाकर जाना । १२ सागर की आज्ञा पाकर मैं आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूँ" । यह कहकर मैनाक ने जब विनती की तो हनुमान ने भी कहा कि राम का कार्य सिद्ध किये बिना मैं कैसे जलपान करूँ ? मैं ऐसे ही जाता हूँ । केवल हाथ से स्पर्श करके ही चलता हूँ । इतना कहकर प्रसन्न होकर स्पर्श किया और कूद वे पड़े । १३ कुछ दूर चलकर हनुमान को सिंहिका नामक राक्षसी मिली, जो जल में ही रहकर अपनी शक्ति द्वारा जीव-जन्तुओं को खींच लेती थी और उसी से अपना आहार चलाती थी । उसने छाया देखकर ज्योंही हनुमान को खींचना चाहा त्योंही हनुमान की गति लुप्त हो गयी । किसने गति लुप्त कर दी ? —कहते हुए हनुमान ने दसों दिशाओं की ओर दृष्टिपात किया । १४ हनुमान ने जैसे ही नीचे की ओर देखा तो राक्षसी दृष्टिगत हुई; और उन्होंने दोनों लातों से एक साथ प्रहार किया । राक्षसी सहज ही में मृत्यु को प्राप्त हो गयी ।

वरिपरि तहिं तीर्मा छन् भरी वृक्ष फल्फूल् ।
जउन बनमहाँ धेर् गर्दछन् पक्षिले गुल् ॥
भ्रमरहरु लताक फूलमा हल्लि हल्ली ।
घुनुतु घुनुतु गर्दै हिंड्दछन् बल्लि बल्ली ॥१६॥

नजर वरिपरीको जो छ शोभा नजर् भो ।
त्रिकुट गिरि उपर्का पूरिमा फेर् नजर् गो ॥
वरिपरि परखाल् छन् बीच-बीच्मा छ खावा ।
सहजसँग अरूले गर्न को सक्छ दावा ॥१७॥

अति तखत पऱ्याको खुप् अगम् देखि लंका ।
यहि घडि पसि जाँ की राति जाँ येति शंका ॥
गरिकन ठहराया याहिं बस्छू र राती ।
सहज सित म जाँलाँ जान ता राति जाती ॥१८॥

तहिं बसि यति गम्ले बाँकि दिन् सब् बिताया ।
दिन बिति जब रात् भो जान पाऊ चलाया ॥
स्वरुप पनि त सानू ली पस्याथ्या जसै ता ।
दगुरि नजिक आइन् लंकिनी पो तसै ता ॥१९॥

वहाँ से कूदकर हनुमान किनारे पहुँच गये और वहाँ से त्रिकूटगिरि के ऊपरी शिखर से लंकापुरी देखी। १५ उन्होंने देखा, किनारे चारों ओर फलों से लदे वृक्ष हैं। उस वन के पक्षीगण अपनी मधुर ध्वनि से वातावरण को गुंजित कर रहे हैं और भँवरे लताओं में लगे फूलों के साथ झूम-झूमकर गुनगुनाते हुए उड़ रहे हैं। १६ हनुमान ने वहाँ की ऐसी छटा देखी, फिर त्रिकूटगिरि के ऊपर से दूर तक दृष्टिपात किया—चारों ओर दीवार खड़ी है और बीचोबीच में पहरा लगा है। ऐसी जगह में, भला कौन सहज ही में आक्रमण कर सकता है? १७ अति अगम और कठोर व्यवस्थापूर्ण लंका को देखकर हनुमान सोचने लगे—इसी समय प्रवेश करें अथवा रात्रि में? सोचते-सोचते, निश्चय किया कि अभी यहीं ठहरता हूँ; रात्रि में ही सरलता होगी, वही समय इस कार्य के लिए उत्तम है। १८ ऐसा सोचकर शेष दिन वहीं ठहर कर बिताया। दिन व्यतीत हो गया। रात आयी तो जाने के लिए पाँव उठाया। सूक्ष्म रूप धारणकर उन्होंने जैसे ही प्रवेश किया, वैसे ही लंकिनी दौड़कर निकट आयी। १९ कौन है यह! आज मुझे कुछ भी न समझकर अन्दर प्रवेश करनेवाला! चोर ही है—ऐसा सोचकर क्रोध

को हो आज मलाइ केहि नगनी यो भित्र जान्या भनी ।
चोरै हो भनि लात् उठाइ रिसले एक् चोट् त हानिन् पनि ।।
जल्दी वाम मुठी उठाइ सहजै ठोक्ता जमिन्मा परिन् ।
छाद्दै ताहिं रगत् गिराइ झटपट् ऊठेर बिन्ती गरिन् ।।२०।।

लंकापूरि त हुन् ति राक्षसि भई बस्थिन् सदा द्वारमा ।
जानिन् श्रीहनुमान् भनेर जब चोट् पाइन् चलिन् सारमा ।।
लंकीनी हुँ मलाइ त जितिगयौ यस्ले सक्यो राज् गरी ।
रावण्को त मरण् हुन्या बखत भो आयो मरण्को घरि ।।२१।।

ब्रह्माजी अघि भन्दथ्या प्रभुजिको हून्याछ रामावतार् ।
हर्ला रावणले सिता र रघुनाथ् सुग्रीवथ्यैं मित्र चार् ।।
गर्नन् सुग्रिवले पनी दश दिशा सीताजिको खोज् खबर् ।
गर्नालाइ पठाउनन् विरहरू छाने र खुप् खुप् जबर् ।।२२।

तिन्मा एक् विर आउला र तिमिले लात् मारिद्यौली जसै ।
हान्ला वाम मुठी उठाइ र रगत् छाद्दै गिरौली तसै ।।
रावण्को तहिंसम्म आयु छ भनी भन्थ्या र सो वात सुनी ।
ब्रह्माको त वचन् प्रमाण् गरि भन्याँ त्यो मर्छ रावण् पनि ।।२३।।

से उसने (हनुमान पर) लात से प्रहार किया। तत्क्षण (प्रत्युत्तर में हनुमान के) मुट्ठी कसकर घूँसे से प्रहार करते ही वह पृथ्वी पर गिर गयी और रक्त-वमन करते हुए तुरन्त उठकर विनती करने लगी। २० वह लंकापुरी (की रक्षिका) है, जो सदैव राक्षसी बनकर द्वार पर रहती थी। चोट खाने के बाद उसने हनुमान को पहचान लिया तथा उनकी शक्ति का परिचय पाया। मन ही मन कहने लगी—मैं लंकिनी हूँ। मुझे तो इसने पराजित कर दिया है और अब राज्य भी हड़प कर लेगा। ऐसा लगता है कि रावण का तो अब अन्तिम समय आ गया है। २१ ब्रह्माजी कहते थे कि प्रभुजी का राम अवतार होगा; रावण सीता का हरण करेगा; रघुनाथजी सुग्रीव के साथ मित्रता करेंगे तथा सुग्रीव भी अपने बलिष्ठ वीरों को सीता की खोज में भेजेंगे। २२ उनमें से एक वीर आयेगा और जैसे ही तुम लात से प्रहार करोगी, वैसे ही वह बाईं मुट्ठी से प्रहार करेगा और तुम रक्त-वमनकर गिर पड़ोगी। कहा जाता है कि रावण की आयु उसी समय तक के लिए है। अतः हनुमान की बातें सुनकर उन्हें प्रणाम किया और कहा कि यह ब्रह्मा का वचन है कि रावण मरेगा। २३ जाओ सीताजी से भेंट करो। वहाँ अन्दर उद्यान में अशोकवन के एक उत्तम

जाऊ भेट सिताजिलाइ ति अगम् भित्री बघैंचामहाँ ।
अशोक्का वनमा छ वृक्ष बढिया एक् शिशपाको तहाँ ॥
ताहीं छन् प्रभुकी प्रिया वरिपरी छन् राक्षसीगण् पनि ।
भेटी गै रघुनाथथ्यैं भन तिली यस्ता विपत् छन् भनी॥२४॥

धन्यै भयाँ म अहिले प्रभुको स्मरण् भो ।
संसारको भय छ जो उ त आज दूर् भो ॥
जस्तो मिल्यो मकन संग र भक्ति ऐल्हे ।
यस्तै रहोस् यहि म पाउँ न बिर्सु कैल्हे ॥२५॥

जस्सै श्री हनुमान् पुग्या सहजमा लंका समुद्रै तरी ।
तस्सै जानकिको फुऱ्यो नजर वाम् हातै समेत् खुप् गरी ॥
रावण्को पनि वाम हात्, नजर वाम् फुऱ्यो, रघुनाथको ।
दक्षिण् अंग फुऱ्यो तसै बखतमा खुश् मन् भयो नाथको॥२६॥

सानू रूप लिई पसी सब शहर् हेर्दै विचार् खुप् गरी ।
रावण्को दरबार् विशेष् गरि ढुँड्या चोटा र कोठा गरी ॥
पायानन् र कता म जाँ भनि तहाँ मन्मा विचार् भो जसै ।
सम्झ्या लंकिनिका वचन् र ति गया अशोक वन्मा तसै ॥२७॥

शिशपा के वृक्ष के नीचे प्रभु की प्रिया विराजमान है। उनके चारो ओर राज्य का पहरा है। सीता से भेंट करके शीघ्र ही रघुनाथजी से उनकी विपत्तियों का हाल कहो। २४ मैं घायल हो गयी हूँ। अभी प्रभु का स्मरण हो आया। संसार के सारे भय मेरे हृदय से दूर हो गये। मेरी यही कामना है कि अभी जैसी भक्ति भावना प्रभु के लिए मेरे हृदय में है, वैसी ही सदा बनी रहे। २५ इधर हनुमान सहज ही समुद्र पार करके लंका पहुँचे और उधर उसी समय जानकी के बाम अंग (बायाँ नेत्र तथा बायाँ हाथ) अत्यधिक फड़कने लगे। तभी रावण का भी बायाँ हाथ तथा नेत्र फड़क उठा और उसी समय रघुनाथ के भी दक्षिण अंग फड़क उठे। ऐसा शुभ लक्षण देख राम के मन में प्रसन्नता छा गयी। २६ हनुमान ने सूक्ष्म शरीर धारणकर नगर में प्रवेश किया। चारों ओर भलीभाँति देखते हुए और सोचते-विचारते हुए कमरे-कमरे की छान-बीन की और रावण के दरबार-विशेष को खोजने लगे। जब कुछ पता नहीं चला तो सोचने लगे अब कहाँ जाऊँ? तत्क्षण ही लंकिनी की बात याद आयी और वे अशोक-वन में चले गये। २७ उन्होंने देखा—इन्द्र की नगरी के समस्त वृक्ष वहाँ

जो जो वृक्षका त इन्द्रका नगरिमा सो सो त सब् छन् तहीं ।
रत्नैका सिढि साफ् असल् जल पनी यस्ता तलाऊ कहीं ॥
फलफूल्ले अति भार् भयेर रुखका सबका ति हाँगा पनि ।
लच्कयाका भ्रमरा र पन्छि बहुतै रूखमा बस्या का पनि॥२८॥

बिच्बीच्मा सुनका हवेलि पनि छन् उच्चा मणीको छ थाम् ।
जस्मा छन् कति गर्नु वर्णन जहाँ हेर्‍यो तहाँ पक्कि काम् ॥
यस्तो सुन्दर वन् नजर् गरि सबै डुल्दै हनुमान् गया ।
देख्या सुन्दर शिशपा र खुशि भै ताहीं ति दाखिल् भया॥२९॥

अधिक गंभिर छाया सूर्यको ताप् नपस्न्या ।
उपर अति पहेंला बेस् चरा मात्र बस्न्या ॥
वरिपरि पनि नाना राक्षसीको छ घेरा ।
रुखमनि तहिं सीता देखिइन् फेद-नेरा ॥३०॥

भोकी मैलि निनाउरी न त कपाल् कोर्‍याकि सब् केश उसै ।
लट्टा गाल गर्‍याकि खालि भुमिमा रूँदै बस्याकी यसै ॥
राम् राम् राम् यति मात्र बोलि रहँदी देख्या र साना भई ।
पात्का अन्तरमा लुक्या ति हनुमान् रूखका उपर्मा गई ॥३१॥

भन्छन् श्रीहनुमान् तहाँ मनमनै ऐले कृतार्थ भयाँ ।
जो सीताकन देखि आज खुशिले सीता-समीप्मा रह्याँ ॥

हैं । निर्मल एवं स्वच्छ जल के तालाब, रत्नों से जड़ी सीढ़ियाँ, फल-फूलों से लदी झुकी हुई टहनियाँ और उन पर भँवरे तथा पक्षी बैठे हुए हैं । २८ बीच-बीच में स्वर्ण-हवेलियाँ भी हैं । मणि-जटित ऊँचे-ऊँचे मंदिर हैं, जो वर्णन-शक्ति से परे हैं । जिधर देखो, उधर ही पक्के काम हैं । ऐसे सुन्दर वन में घूमते हुए और चारों ओर निरीक्षण करते हुए हनुमान गये । सुन्दर शिशपा को (अशोक-वृक्ष) देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और वहीं प्रवेश किया । २९ अत्यन्त घना छायादार वन, जहाँ सूर्य की गर्मी भी प्रवेश नहीं कर सकती, जहाँ अत्यन्त उत्तम पीले रंग के पक्षी ही केवल रहते थे, वहाँ एक वृक्ष के नीचे राक्षसियों से घिरी हुई सीताजी दिखायी दीं । ३० भूखी-प्यासी, हताश, अस्त-व्यस्त केश-राशि खुली हुई, लटें बिखराये सीता भूमि पर बैठी रोती और केवल राम-राम की रट लगा रही हैं । हनुमान ने अपने सूक्ष्म रूप में ही उस पेड़ पर चढ़कर पत्तों में छिपे हुए ही सब हाल देखा । ३१ श्रीहनुमानजी मन ही मन कहते हैं—अब मैं सीताजी के पावन दर्शन पाकर कृतार्थ हुआ । आज मैं प्रसन्नतापूर्वक यहीं सीताजी के समीप रहूँ । अब

साध्याँ काम् पनि रामको भनि तहाँ खुशी भयाथ्या जसै ।
फेर् अन्तःपुरमा भयो र खलबल् त्यो शब्द सुन्या तसै ॥३२॥
क्याको शब्द भयो भनेर हनुमान् लुक्या ति झन् पातमा ।
आयो रावण जल्दि ताहिं नजिकै सब् स्त्री लिई साथमा ॥
कैले मर्छु म रामदेखि अझतक् सीता हर्‍याँ तापनि ।
आयानन् रघुनाथ भनेर रहँदा देखेछ स्वप्ना पनि ॥३३॥
रामको दूत् अति वीर वानर अशोक् वन्-भित्र आई पसी ।
सीताजीकन देखिन्या गरि तहाँ वन्-भित्र लुकी बसी ॥
हेर्दो सुर् सब कामको खुशि भई स्वप्ना मिलेथ्यो जसै ।
साँच्चै हो कि भनेर दौडिकन झट् आयो नजीकमा तसै ॥३४॥
साँच्चै पो यदि हो भन्या असल भो दुर्वाच्य बोल्छु जसै ।
सीतालाइ यसो सुनेर रिसले जाला त भन्ला तसै ॥
मेरा दुष्ट वचन् सुनेर रघुनाथ् आएर मार्नन् भनी ।
यस्तो निश्चय मन् गरी नजिक गै दुर्वाच्य बोल्यो पनि ॥३५॥
सीताजी पनि दुष्टलाइ नजिकै देखी अधोमुख् गरिन् ।
श्रीराम्का चरणारविन्द मनले अन्तःकरण्मा धरिन् ॥

राम का कार्य भी पूरा हुआ । ऐसा सोचा ही था कि अन्तःपुर में खलबली-सी मच गई और बड़ा बमचक सुनायी दिया । ३२ कैसी हलचल मची है—(मन ही मन) यह कहते हुए हनुमान और भी पत्तों के बीच छुप गये । रावण शीघ्र ही तमाम स्त्रियों को लेकर वहाँ आ गया । निकट आकर बोला—सीता का हरण करने पर भी रघुनाथ अभी तक नहीं आये । आखिर कब तक मैं राम के हाथों मारा जाऊँगा । कहने लगा कि एक स्वप्न भी देखा है । ३३ स्वप्न में देखा कि राम के दूत अत्यन्त बली वानर अशोक वन में प्रवेश कर सीता को देखने-भर की व्यवस्था करके पत्ते के अन्दर वहीं पर छिपकर निडरतापूर्वक देख-देख प्रसन्न हो रहा है । ऐसा स्वप्न देखकर सोचा कि कदाचित् यह सच ही तो नहीं है । यह जानने के लिए तुरन्त दौड़कर निकट आया । ३४ यदि सत्य ही होगा तो अति उत्तम है । सीता को दुर्वाक्य कहूँगा, जिसे सुनते ही वह क्रोधित होकर चला जायगा और सब यथार्थ (वृत्तान्त) कह डालेगा । मेरे दुष्ट वचनों को सुनकर रघुनाथ आकर मुझे मारेंगे । ऐसा सोचकर वह निकट गया और (उसने) सीताजी को दुर्वचन कहे । ३५ सीताजी ने भी उस दुष्ट को देखकर अपना मुँह नीचे किया और अपने अन्तःकरण में राम के

चूप् लागि जननी रहिन् जब तहाँ सो देखि रावण् पनि ।
लाग्यो भन्न मलाइ देखि किन है लायौ अधोमुख् भनी ।।३६।।
राम् मेरा पति हुन् भनेर तिमि पो भन्छचौ उ भन्छन् कहाँ ।
मेरी हो यदि भन्दथ्या पनि भन्या आऊनु पर्थ्यो यहाँ ।।
माया छैन तिमी उपर् नबुझि क्या शोक् मात्र गर्छचौ उसै ।
यौवन् व्यर्थ गयो विचार किन यो यौवन् अफाल्छचौ यसै।।३७।।
यौवन् व्यर्थ नफाल व्यर्थ मनमा शोक् गर्दछचौ यो कति ।
मैलाई पति मान आज तिमिले हुन्छू म तिम्रो पति ।।
मेरी पत्नि भयौ भन्या त सबकी मालिक् हुन्याछौ म ता ।
साह्रै प्रेम् गरि राखुला बुझ अधिक् बैगूनि छन् राम ता ।।३८।।
मानी मूर्ख कृतघ्न मानुषमहाँ साह्रै अधम् जो त छन् ।
शक्तीका पनि कम् उ राम् पनि यहाँ आऊन क्या सक्तछन् ।।
तस्मात् छोड नराख रामतिर मन् यस्तो भनेथ्यो जसै ।
लाल् लाल् नेत्र गराइ पूर्ण रिसले बोलिन् सिताजी तसै ।।३९।।
पाजी रावण! बोल्दछस् कति बहुत् दुर्वाच्य बक्-बक् गरी ।
राघव्देखि डराइ छल्न भनि एक् सन्यासिको रूप् धरी ।।

श्रीचरणारविन्दों का ध्यान किया। सीता को मौन खड़ी देख रावण कहने लगा—मुझे देखकर मुँह क्यों नीचे कर लिया। ३६ तुम कहती हो, राम मेरा पति है। यदि ऐसा समझता तो उसे यहाँ आना चाहिए था। तुम्हारे ऊपर उसका कोई प्रेम नहीं है। केवल तुम्हीं व्यर्थ में शोकग्रस्त हो रही हो। विचार करके देखो यौवनावस्था व्यर्थ ही जा रही है। ३७ यौवन व्यर्थ न गँवाओ। कहाँ तक शोक में डूबी रहोगी ? आज ही तुम मुझे अपना पति स्वीकार करो। तुम मेरी पत्नी हो जाओगी तो सबकी स्वामिनी बन जाओगी और मैं स्वयं तुम्हें अत्यन्त प्रेमपूर्वक रक्खूँगा। समझो और जानो कि राम तो बहुत ही अवगुणी है। ३८ जिस मनुष्य में अधर्म, मूर्खता एवं अभिमान व्याप्त है और जिसकी शक्ति भी थोड़ी है, वह (राम) यहाँ किस प्रकार आ सकता है। अतः राम को मन से त्याग दो। रावण ने जैसे ही ये वचन कहे, सीताजी के नेत्र क्रोध से लाल हो गये और वे बोलीं— ३९ पाखण्डी रावण ! दुर्वचन कहाँ तक बोलते हो। रघुनाथ से भयभीत होकर छल करके संन्यासी का रूप धारण किया। जिस प्रकार कुत्स यज्ञ में हवन अर्पित पदार्थों को चुरा ले जाता था, उसी प्रकार राम-लक्ष्मण की अनुपस्थिति में तुमने मेरा हरण किया। समझ लो,

जस्तै यज्ञविषे हविस् कुकुरले हर्छन् उसै चालले।
राम् लक्ष्मण् नहुँदा हरिस् तँ बुझिले मर्लास् यसै कालले ॥४०॥
सागर् शोषि कि साथुँलाइ रघुनाथ आयेर घेरा दिई।
तेरो वंश विनाश् गरेर पछि फेर् प्राण् खैंचि तेरो लिई॥
लैजानन् रघुनाथ् मलाइ भनि झट् दीइन् जवाफ् यो जसै।
लाल् लाल् नेत्र गराइ खड्ग पनि ली काट्नै तयार् भो तसै ॥४१॥

मन्दोदरी विनति गर्न अगाडि सर्दी।
यो खड्ग टारुँ कसरी भनि चित्त धर्दी॥
पाऊ परीकन बहुत् गरि बिन्ति लाइन्।
सब् रिस् शमन् पनि गरायर खड्ग टारिन् ॥४२॥

हुकुम् रावणले तहाँ यति दिया हे राक्षसी ! ई सिता।
मैह्ना दुइ यसै बसून् तब उपर् मेरा शयन्मा कि ता॥
बस्तिन् बस्तिन पो पनी भनि भन्या काटेर टुक् टुक् गरी।
तर्कारी भुटुवा बनाउनु असल् मीठा मसाला धरी ॥४३॥
मासू खाइ म छाडुँला अझ पनी चेताउ येती भनी।
रावण् फर्कि गयो ति राक्षसिहरू एक् मुख् भया फेर् अनि॥

तुम इसी काल-से मरोगे। ४० सागर का शोषण कर सेना-सहित रघुनाथ आकर यहाँ घेरा डालेंगे और तेरे वंश का विनाशकर तेरे प्राण खींच लेंगे तथा उसके बाद रघुनाथ मुझे लिवा ले जायेंगें। सीता ने जैसे ही ऐसे उत्तर दिये, वैसे ही रावण ने क्रोध से लाल आँखें करके देखा और खड्ग लेकर काट डालने के लिए तत्पर हो गया। ४१ मन्दोदरी ने किसी प्रकार खड्ग को रोका और चित्त में विचार करती हुई रावण के चरणों पर गिर पड़ी और विनती करने लगी। अब शीघ्र ही शान्त हो जायें और खड्ग रोक लें। मन्दोदरी की विनती सुनकर रावण ने अपने समस्त क्रोध को शान्त कर खड्ग रोक लिया। ४२ उस समय रावण ने इस प्रकार आज्ञा दी—हे राक्षसी ! यह सीता दो महीने तक इसी प्रकार रहे, तदुपरान्त मेरे शयन में रहेगी। यदि रहने के लिए अस्वीकार करे तो इसके टुकड़े-टुकड़े कर देना और उत्तम मीठा मसाला डालकर भूनना। ४३ मैं इसका मांस भक्षण करके ही छोड़ूँगा। अभी भी इसे सावधान कर दो। इतना कहकर रावण लौट गया। वहाँ की राक्षसियाँ सब एक-मुँह होकर कहने लगीं, क्यों यौवन को नष्ट करती हो ? रावण को पति स्वीकार कर लो। जिसे सुनकर एक राक्षसी कहती है कि बार-बार इसे समझाकर तुम थक

एक् भन्छे किन व्यर्थ यौवन सक्यौ रावण् गराऊ पति ।
दोस्री क्या भनि उठ्तछे कि कति वार् भन्छेस्तँथाक्छेस्कति ॥४४॥
काट्नैपर्छ नकाटि हुन्न भनि बात् गर्दै थिई अर्कि ता ।
हात्मा ली तरवार दौडि पनि गै भन्दै म काट्छु सिता ॥
आर्की घोर् मुख बाइ डर् दिन नजीक् धाई सिताथ्यैं जसै ।
बूढी राक्षसि एक् थिई र त्रिजटा तेस्ले हटाई तसै ॥४५॥
लागी भन्न अभागि दुष्टहरु हो! क्या दुष्टको झैं मति ।
गर्छौ छोड विरोध् नराख गर खुप् सीताजिको ता स्तुति ॥
पाऊमा परि दण्डवत् गर सबै मालिक् इनै हुन् भनी ।
मेरा आज वचन् लियौ भनि भन्या खुप् हीत होला पनि ॥४६॥
स्वप्नाको सुन भन्छु लक्षण यहाँ श्रीराम् सिताका पति ।
ऐरावत् उपरी चढेर सँगमा भाई लिई वीर् अति ॥
याहाँ आइ रिसाइ भस्म सब यो लंकै गराईदिया ।
रावण् मारि सिता लियेर सँगमा पर्वत् उपर् पो थिया ॥४७॥
रावण् गोमय कुण्डमा कुल समेत् खुप् तेल मर्दन् गरी ।
बुड्थ्यो सब् मुड आफना उनि उसै मुड्को त माला धरी ॥

जाओगी । ४४ एक अन्य राक्षसी तो कह रही है कि इसे काटना ही पड़ेगा; बिना काटे काम नहीं चलेगा । हाथ में तलवार लेकर सीता को काट डालूँगी—यह कहती हुई सीता की ओर दौड़ी । दूसरी मुँह फैलाकर सीता को भयभीत करती हुई, उनकी ओर लपकी, जिसे एक त्रिजटा नामक राक्षसी ने पकड़कर हटा लिया । ४५ कहने लगी—अभागिन ! दुष्टाओं ! क्यों दुष्टों की भाँति अपनी बुद्धि करती हो ? विरोधी विचारों को हटाकर, सीताजी की खूब स्तुति करो । इन्हीं को सर्वस्वामिनी मानो । इनके पाँव पड़ो और दण्डवत करो । मेरे इन वचनों को मानोगी तो तुम्हारा बड़ा हित होगा । ४६ सुनो, अपने स्वप्न के लक्षण मैं यहाँ बताती हूँ । श्रीराम, सीता के पति हाथी पर सवार होकर और साथ में अपने अत्यन्त वीर भाई (लक्षमण) को लेकर यहाँ आये और क्रोधित हो सम्पूर्ण लंका को भस्म कर दिया और रावण को मारकर सीता को लेकर पर्वत के ऊपर चले गये । ४७ रावण के कुल वाले (अन्य राक्षस) खूब तेल मालिश कर अपने-अपने सर गोबर के कुण्ड में डुबाते थे । उन्हीं सरों की माला धारण कर विभीषण श्रीराम के निकट प्रभु की भक्ति करते थे और अत्यन्त प्रसन्न होकर तन-मन-वचन से सेवा करते थे । ४८ राम आज रावण को समस्त

श्रीराम्का नजिकै विभीषण थिया भक्ती प्रभूको गरी ।
गर्थ्या खूब टहल् बहुत खुशि हुँदै तन्मन् वचन्ले गरी ।।४८।।
राम्ले रावणलाइ आज सहजै मार्छन् कुलै साफ् गरी ।
रावण्को अब बृद्धि छैन यसको आयो मरण्को घरि ।।
राम्को भक्त विभीषणै अब उपर् बस्नन् यहाँ राज् गरी ।
जस्तो हुन्छ हुकूम् सितापतिजिको सोही शिरोपर् धरी ।।४९।।
जस्तो स्वप्न भयो उ सब् भनिसक्याँ येती भनी चुप् जसै ।
लागीथी त्रिजटा ति बात् सुनि डऱ्या सब् राक्षसीगण् तसै ।।
निद्रामा वशमा सबै परिगया सीता बहूतै रुँदी ।
आधार् कोहि नपाउँरी अधिक ताप् मानेर विह्वल् हुँदी ।।५०।।
भोकी शोक् गरि भन्दछिन् अब यहाँ ऐले कसोरी मरूँ ।
इन्का हात परेर मर्नु ननिको आफैं म मर्छू बरु ।
ताप्ले पूर्ण हुँदी उपाय अरु थोक् केही नजान्दी कबै ।
मन्मा स्वस्थ नपाउँदा विरहले देख्ती अँध्यारो सबै ।।५१।
राम्मा चित्त दियेर मर्नु बढिया मानेर सीता तहाँ ।
झुन्डीन्या मतलब् लिई खडि भइन् पक्रेर हाँगामहाँ ।

कुल-सहित सफ़ाया कर मारेंगे । रावण की बुद्धि अब क्षीण हो गयी है अब उसकी विपत्ति की घड़ी आ गयी है । राम के भक्त विभीषण ही अ यहाँ, सीतापति की जैसी आज्ञा होगी, उसे शिरोधार्य कर राजा बनक रहेंगे । ४९ जैसा स्वप्न हुआ, वह सब मैं बता चुकी हूँ, इतना कहक जैसे ही त्रिजटा चुप हुई सब राक्षसियाँ उसकी बातों से प्रभावित होक भयभीत हुईं और उसी समय निन्द्रा के वशीभूत हो गयीं । सीता को सहारा न देख असहाय बनकर अत्यधिक रोयीं । ५० भूखी-प्यासी सीर अत्यन्त शोक में डूबी हुई कहती हैं कि मैं यहाँ मरूँ भी किस प्रकार ? इ लोगों के हाथों से तो मरना भी उचित नहीं । इससे तो अच्छा हो कि मैं स्वयं ही अपना प्राण त्याग दूँ । सन्तापग्रस्त मस्तिष्क में को उपाय भी नहीं सूझ रहा था । विरह से मन में चिन्ता छायी थी । स ओर अन्धकार ही अन्धकार दृष्टिगोचर होता था । ५१ उन्होंने सोचा f राम के ध्यान में लीन होकर ही मृत्यु को प्राप्त होना अति उत्तम होगा यह निश्चयकर सीताजी ने राम का ध्यान किया और वहाँ एक डा पकड़कर खड़ी हो गयीं । राक्षसों के बीच रहकर जीवित रहना धिक्क है, इससे तो मर जाना ही अच्छा है । अतः अब मैं मर ही जाऊँ । ल लम्बी हैं, इसलिए गले में फन्दा डालकर लटकने के लिए, रस्सी बनाने

राक्षस्का बिचमा बसी जिउनु धिक् मर्नू निको मर्दछु ।
चुल्ठो लामु छ झुन्डिनाकन यहाँ डोरी त यै गर्दछु ।।५२।।
यस्तो निश्चय सुर् गरीकन सिता झुन्डीन आँटिन् जसै ।
काम् बिग्ला भनि सानु बोलि झटपट् बोल्या हनूमान् तसै ।।
भारतवर्ष विषे मणी मुकुट झैं नाम् ता अयोध्या भनी ।
ठूलो एक शहर् थियो मणिमयी सुन्दर् बन्याको पनि ।।५३।।
इक्ष्वाकूका कुलैमा अति बलि दशरथ् वीर् महाराज् रह्याछन् ।
तिन्का तीन् रानिमध्ये गुणिगुणि अति वीर् चार छोरा भयाछन् ।।
जेठा राम्जी ति चार्मा उहि पछि त भरत्जी र लक्ष्मण् इ तीनै ।
भन्दा शत्रुघ्न कान्छा सकल गुणमहाँ कम्ति छैनन् ति कूनै ।।५४।।
जेठा राम पिताजिका हुकुमले सब् राज्य छोडीदिई ।
बन्मा बस्न चल्या बहुत् खुशि हुँदै सीता र लक्ष्मण् लिई ।।
एक् दिन् पञ्चवटी गया प्रभु तहीं डेरा प्रभूको पऱ्यो ।
रावण्ले अति छल् गरीकन तहाँ सीताजिलाई हऱ्यो ।।५५।।
राम् लक्ष्मण् नहुँदा सीता पनि तहाँ चोरी जसै ता हऱ्यो ।
चोरी आज सिता हऱ्यो भनि बहुत् खेद् रामलाई पऱ्यो ।।
जान्थ्या खोजि सिताजिलाइ वनमा फेला जटायु पऱ्या ।
तिन्माथी करुणा भयो प्रभुजिको ताहीं जटायु तऱ्या ।।५६।।

लिए यही ठीक हैं । ५२ इस प्रकार निश्चयकर साहस बटोरकर सीता जैसे ही लटकनेवाली थीं, वैसे ही कहीं काम न बिगड़ जाय--यह सोचकर हनुमान तुरन्त ही धीरे से बोले, "भारतवर्ष में सरताज के समान एक सुन्दर सुसज्जित अयोध्या नामक नगर है जो बड़ा ही विशाल है । ५३ इक्ष्वाकु के वंश में अत्यन्त बली वीर दशरथ नामक महाराजा रहते हैं । उनकी तीन रानियों से बढ़े ही उत्तम गुणवान् एवं वीर चार पुत्र हुए । ज्येष्ठ रामजी, उनके बाद भरत, फिर लक्ष्मण और उनसे भी कनिष्ठ पुत्र शत्रुघ्न, जो सकल गुणों से सम्पन्न हैं । ५४ ज्येष्ठ पुत्र राम पिता की आज्ञा से सकल राज्य का त्यागकर वन में रहने के लिए सीता और लक्ष्मण को लेकर अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक एक दिन पंचवटी गये, जहाँ प्रभु का पड़ाव पड़ा । रावण ने अति छल करके सीता का हरण किया । ५५ राम-लक्ष्मण की अनुपस्थिति में (रावण ने) जैसे ही सीता की चोरी की, वैसे ही इस सत्य को जानकर राम के मन में घोर चिन्ता और विरह उत्पन्न हो आया । सीताजी की खोज में जाते हुए वन में (राम से) जटायु से भेंट हुई । उन पर प्रभु की कृपा हुई और वे वहां तर गये । ५६

भेट् सुग्रीव्सित भो पछी प्रभुजिको लाया मित्यारी पनि ।
बाली मारि रजाइँ बक्सनुभयो मित् हुन् इ मेरा भनी ।।
बीर् वीर् वानर छानि सुग्रिवजिले सीताजि खोज्नै भनी ।
हूकुम् बक्सनुभो र वीर्हरु गया सीताजि खोज्नै पनि ।५७।
तिन्मा एक् विर ता म हूँ म त यहाँ आयाँ समुद्रै तरी ।
सम्पाती-सित भेट् हुँदा खबर भै उन्का वचन्ले गरी ।।
लंका दाखिल भै गयाँ छिनमहाँ राम्का प्रताप्ले गरी ।
फुत्क्याँ लंकिनि देखि निर्भय भई अश्शोक वन्मा परी ।५८।
देख्याँ सुन्दर वाटिका वरिपरी रूख् बेस् लताले गरी ।
बेह्र्चाका चहुँओर रत्न सरिका फल् फूल् फल्याका भरी ।।
देख्याँ आज सिताजिलाइ र यहाँ -आनन्द पायाँ भनी ।
येती बिन्ति गरेर चुप् भइ रह्या ताहाँ हनूमान् पनि ।।५९।।

सीताजिले जब इ बात् क्रमले सुनीथिन् ।
आश्चर्य भैकन वरीपरि हेरि एक्छिन् ।।
कोही नदेखि ति सिता अरुलाइ ताहाँ ।
भन्छिन् कुरा इ कहन्या जन को छ याहाँ ।।६०।।

भ्रम् हो भनूँ पनि भन्या सब चेत् छ मेरा ।
स्वप्ना कसोगरि भनूँ निद छैन मेरा ।।

बाद में प्रभुजी की भेंट सुग्रीव से हुई और उनसे मित्रता हुई। उन्होंने बालि को मारकर और उन्हें (सुग्रीव को) अपना मित्र कह कर राज्य सौंपने की कृपा की। एक से एक वीर वानरों को चुनकर सुग्रीव जी ने सीता जी की खोज में भेजा। समस्त वीर सीता की खोज में चल पड़े। ५७ उनमें से एक वीर तो मैं स्वयं हूँ। संपाती से भेंट होने पर (यह) समाचार मिला और उन्हीं के कथनानुसार, राम की कृपा से मैं क्षण-भर में ही लंका में प्रविष्ट हो गया। लंकिनी से भी निर्भयतापूर्वक बच निकला और अब अशोक वन में आया हूँ। ५८ चारों ओर वृक्ष और सुन्दर लताएँ देखीं, रत्नों के समान फल-फूलों से भरी हुई एक सुन्दर बाटिका देखी। आज सीता माता के दर्शन पाकर बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। इतनी बिनती कर हनुमान जी मौन हो गये। ५९ सीता ने जब इन बातों को क्रम से सुना तो आश्चर्य-चकित हो चारों ओर देखने लगीं और किसी को वहाँ न देख कहने लगीं—यह सब बातें कहनेवाला यहाँ कौन जीव है ? ६० यदि मैं इसे भ्रम कहूँ, तो किस प्रकार ? मैं

जो हो इ बात कहन्या उ अगाडि आई ।
अमृत् वचन् इ अति आज भनोस् मलाई ॥६१॥
सीताजिको यति वचन् जब सुन्न पाया ।
सानू स्वरूप् लि हनुमान्जि अगाडि आया ॥
दर्शन् प्रणाम् पनि गऱ्या र सिताजिलाई ।
ताहीं खडा भइ रह्या अति हर्ष पाई ॥६२॥

लाल् मुख् पीत शरीर् शरीर् पनि अधिक् सानू भङ्गेरा सरी ।
क्षाम्याका हनुमान देखि मनले आफै ति शंका परी ॥
रावण्को छल हो कि यो भनि तहाँ लाइन् अधोमुख् जसै ।
शंका भो अब माइलाइ भनि झट् बोल्या हनूमान् तसै।६३

हे माता ! म त दास हूँ हजुरको राम्का हुकूम्ले गरी ।
आयाको छु हजूरको खबरमा गम्भीर् समुद्रै तरी ॥
राजा सुग्रिवको म मन्त्रि पनि हूँ वायू पिता हुन् पनि ।
येती बिन्ति गरेर चुप् भइ रह्या क्या हुन्छ मर्जी भनी।६४

सीताजी पनि भन्दछिन् कसरि यो जानूँ म मानिस् पनि ।
बानर् सीत मित्यारि लाउँछ कतै क्या हुन् कुराको जनी ॥

तो सचेत हूँ। यदि स्वप्न कहूँ तो मैं सो नहीं रही हूँ। जो भी हो वह मेरे सम्मुख आकर इन अमृत-तुल्य वचनों को कहे। ६१ सीता जी के ये वचन सुनते ही हनुमान अपना छोटा-सा रूप धारण किये हुए उनके सामने आये। उन्होंने सीता जी का दर्शन कर प्रणाम किया और अत्यन्त हर्षोन्मुख होकर उनके आगे खड़े रहे। ६२ हनुमान का लाल मुँह तथा पीला शरीर और गौरैया के समान अत्यन्त छोटा आकार देख कर सीता जी के मन में शंका उत्पन्न हुई, उन्होंने सोचा कि कहीं रावण ही तो नहीं उनके साथ पुनः छल कर रहा है। इन्हीं विचारों में डूबी सीता को मुँह नीचा किये देख कर हनुमान समझ गये कि उन्हें शंका हो रही है, अतः वे तुरन्त बोल पड़े—६३ हे माता ! मैं तो आपका सेवक हूँ। राम की आज्ञा से कठिन समुद्र को पार कर यहाँ आपकी सूचना लेने आया हूँ। राजा सुग्रीव का मैं मंत्री हूँ और वायु मेरा पिता है। इतना कहकर वे मौन होकर सीता की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे। ६४ सीता जी कहती हैं कि मैं यह कैसे मान लूँ कि बानर और मनुष्य के बीच भी मित्रता होती है ? कहाँ क्या बात है, मैं वास्तविक सत्य को कैसे जानूँ ? अविश्वास प्रगट कर सीता जी जैसे ही चुप हुईं, वैसे ही

येती बोलि सिताजि चुप् भइरहिन् साँचो नमानी जसै ।
फेर् वृत्तान्त गरी सुनाइ सब बात् औंठी दिया पो तसै।६५।
औंठी दीकन फेर् प्रणाम् पनि गरी जस्सै हनूमान् बस्या ।
देखिन् औंठि जसै तसै बखतमा हर्षाश्रुधारा खस्या ।।
बर्बर् आँसु खसाउँदै प्रभुजिको औंठी शिरोपर् धरिन् ।
साह्रै खुश हनुमान उपर् भइ तहाँ प्राण् झैं पियारो गरिन्६६

हित गरि हनुमान्‌जीलाइ भन्छिन् ति माता ।
मकन तिमि भयौ खुप् प्राणका आज दाता ।।
तिमिसित रघुनाथ्‌ले खूब विश्वास मान्या ।
तब मसित पठाया येहि काम्‌ले त जान्याँ ।।६७।।
अब त तिमि हनूमान् जल्दि गै रामलाई ।
भन विपति पऱ्याको देखिहाल्यौ मलाई ।।
जति गरि म उपर् श्रीरामको हुन्छ माया ।
तति गरि तिमिले खुप् युक्तिले बिन्ति लाया ।।६८।।

जिन्तिन् शरीर महिना दुई ता म धर्छु ।
ताहाँपछी त तिमि निश्चय जान मर्छु ।।
खान्या छ दुष्ट तरकारि बनाइ येही ।
छैनन् यहाँ अरु सहाय मलाइ कोही ।।६९।।

हनुमान ने पुनः विस्तारपूर्वक सारा वृतान्त सुनाकर उन्हें श्रीरामचन्द्र जी की अंगूठी दी। ६५ अंगूठी देकर हनुमान ने पुनः प्रणाम किया और वहीं बैठ गये। सीता जी अंगूठी देखते ही हर्ष से विभोर हो उठीं और उनके नेत्रों से प्रेमाश्रु प्रवाहित हो चले। अश्रु बहाते हुए उन्होंने प्रभु की अंगूठी अपने मस्तक से लगा ली। हनुमान के ऊपर अत्यधिक प्रसन्न होकर उन्हें प्राणों से बढ़ कर प्यार किया। ६६ हनुमान के प्रति कृतज्ञ होकर सीता माता कहती हैं--आज तुमने मुझको जीवन दिया है, अतः तुम मेरे प्राण-दाता हुए हो। अब मैं मान गयी कि प्रभु ने तुम्हारे ऊपर विश्वास कर इसी काम से मेरे पास भेजा है। ६७ हनुमान ! अब तो शीघ्र ही तुम राम के पास जाकर मेरी विपत्तियों का हाल कह दो। जैसा तुम देख रहे हो, श्रीराम से उसी प्रकार युक्तिपूर्ण विनती करना, जिससे उनकी महान् कृपा शीघ्रातिशीघ्र हो। ६८ एक-दो माह तक तो मैं किसी प्रकार अपने शरीर को धारण किये रहूँगी, तत्पश्चात् तुम निश्चित जानो कि मैं जीवित रहने में असमर्थ हो जाऊँगी। ये दुष्ट

तस्मात् अवश्य इ दुई महिना नजाई ।
सुग्रीव् समेत् सकल सैन्य लियेर आई ।।
यस् दुष्टलाइ सब वंश समेत मारून् ।
यो दु:ख-सागर पऱ्याकि मलाइ तारून् ।।७०।।
सिप सित गरि बिन्ती खुप् दयालू बनाया ।
जति छ फजिति मेरा यो सबै थोक् जनाया ।।
यति बिनति गऱ्या लौ पाउला धर्म धेरै ।
सकल भनि सक्याँ बात् क्या भनूँ बेरबेरै ।।७१।।

बिन्ती श्री हनुमानले पनि गऱ्या माता म सेवक् त हूँ ।
स्वामित्का इ विपत् सबै म कहुँला धेर् बात् यहाँ क्या कहूँ ।।
राम् लक्ष्मण् दुइ भाइ सुग्रिव समेत् बानर् कि सेना लिई ।
वंशै रावणको विनाश् गरिदिनन् घेरा शहर्मा दिई ।।७२।।
स्वामित्लाइ लियेर फेरि रघुनाथ् जानन अयोध्यामहाँ ।
आवैनन् रघुनाथ्, भनेर मनमा शङ्का नलागोस् यहाँ ।।
यो बिन्ती सुनि भन्दछिन् तहिं सिता रामचन्द्रजी क्या गरी ।
सेना लीकन आउनन् अति गभीर् यस्तो समुद्रै तरी ।।७३।।

मुझे तरकारी बनाकर खा डालेंगे । यहाँ मेरा सहायक, मेरी रक्षा करनेवाला कोई नहीं है । ६९ उनसे कहना कि ये दो महीने व्यतीत होने के पूर्व ही निश्चित रूप से सुग्रीव-सहित समस्त सेना लेकर आयें और इस दुष्ट को सपरिवार नष्ट करके इस दासी को दु:खसागर से उबार लें । ७० अत्यन्त चातुर्यपूर्वक विनती करके प्रभु का हृदय दया और करुणा से द्रवित कर देना । जो भी मेरी कष्टमय दशा है, विस्तारपूर्वक कह देना । केवल इतना ही कर देने से तुम्हें एक महान् धर्म करने का पुण्य प्राप्त होगा । अपना सब हाल तुमसे कह डाला, अब और क्या कहूँ ? ७१ श्रीहनुमान ने भी विनती की, हे माता ! मैं तो सेवक हूँ । स्वामिनी की समस्त विपत्तिजनक कथा कह सुनाऊँगा । मुँह से अधिक क्या कहूँ ! राम-लक्ष्मण दोनों भाई एवं सुग्रीव समस्त वानर-सेना सहित यहाँ आयेंगे और सारे नगर में घेरा डाल कर रावण का उसके वंश-सहित नाश कर डालेंगे । ७२ स्वामिनी को लेकर रघुनाथ पुन: अयोध्या जायेंगे । आप मन में तनिक भी चिन्ता न करें । आप ऐसी शंका न करें कि रघुनाथ कदाचित् न आयें, वे अवश्य आयेंगे । यह विनती सुनकर सीताजी कहती हैं कि लंका आने के मार्ग में पड़नेवाले ऐसे गम्भीर-गहन सागर को श्रीरामजी सेना-सहित किस प्रकार पार

जननिकन बुझाया यो हुकूम् सूनि ताहाँ ।
मइ छु प्रभुजिको दास् बोकुंला पीठमाहाँ ॥
रघुपति दुइ भाईलाइ क्या दुःख पर्छन् ।
सकल अरु र सुग्रीव कूदि आफै ति तर्छन् ॥७४॥
जननि ! म त बिदा झट् पाउँ मर्जीत सून्याँ ।
अब त उहिं गया पो हुन्छ काम् जल्दि हून्या ॥
जउन चिज दिदामा राम विश्वास गान्छन् ।
उहि चिज पनि पाऊँ जान्छु दिन् मात्र जान्छन् ॥७५॥
यति सुनि अघिदेखिन् केशपाश्मा धर्‍याको ।
मणि झिकि दिइहालिन् रामको मन् पर्‍याको ॥
मणि दिइ फिरि भन्छिन् चित्रकूट्मा भयाको ।
शरण परि नजर् दी काग बाँची गयाको ॥७६॥
एक् दिन् हे हनुमान् ! म चित्रकुटमा राम्का नजीक्मा थियाँ ।
मेरा काखमहाँ सुत्या र रघुनाथ् हात्को तकीया दियाँ ॥
मेरा लाल् दुइ पाउ देखिकन काग् आयो र ठूँग्यो जसै ।
मेरा ई दुइ पाउदेखि बहुतै आयो रगत् पो तसै ॥७७॥

कर पायेंगे ? ७३ सीता जी की यह शंका-युक्त बात सुनकर हनुमान ने समझाया—मैं तो प्रभुजी का दास हूँ । उन्हें पीठ पर उठा लूँगा राम-लक्ष्मण दोनों भाइयों को कैसे कष्ट उठाना पड़ेगा । समस्त वानर सेना तथा सुग्रीव (आदि) छलाँग मार कर स्वयं ही पार हो लेंगे । ७४ हे जननी ! अब मुझे शीघ्र ही जाने की आज्ञा दें । आपकी आज्ञा का प्रत्येक शब्द मैंने ध्यानपूर्वक सुन लिया है । अब यहाँ अधिक रुकने से काम नहीं बनेगा, शीघ्रातिशीघ्र जाने से ही होगा । मुझे कोई ऐसा चिह्न दें, जिसे देखकर राम को विश्वास हो जाये; मैं वही लेकर चल जाऊँ । समय व्यर्थ ही व्यतीत न हो जाय । ७५ ऐसा सुनकर (सीता ने) पहले से ही केश-पाश में धारण किये हुए मणि को निकाला, जो राम के मन को अधिक भाता था, वही हनुमान को दिया । मणि देकर चित्रकूट में घटित एक घटना सुनाने लगीं । यह घटना एक शरण में आये हुए कौए की, उनकी कृपा-दृष्टि द्वारा बच जाने के विषय में थी वे पुनः कहती हैं—७६ हे हनुमान ! एक दिन मैं चित्रकूट में रामजी के निकट थी । वे मेरी गोद में हाथ का तकिया लगा कर लेटे हुए थे मेरे दोनों लाल पाँवों को देख कर एकाएक, एक कौए को भ्रम हुआ और उसने आकर जैसे ही मेरे पाँवों में चोंच मारी कि दोनों पावों से रक

ऊठी श्रीरघुनाथको नजर भो वाहीं थियो काग् पनि ।
फ्याँक्या एक् तृण ली तहाँ प्रभुजिले यो काग मार्छू भनी ॥
त्यो काग् चौधभुवन् डुल्यो त पनि एक् पायेन आधार् जसै ।
फेरी आइ शरण् परी नजर दी बाँची गयो काग् तसै ।७८।

मेरो आज शरण् पर्‍यो भनि दया आयो उ कागमा पनि ।
मै साथी त दया कसो हुन गयो भन्थिन् भन्या यो पनि ॥
हात् जोरीकन बिन्ति फेरि हनुमान् वीर् गर्न लाग्या तहाँ ।
याहाँ छन् भनि यो खबर् नभइ पो आऊन ढीलभो यहाँ॥७९॥

रावण्ले हरि ली गयो भनि खबर् हुन्थ्यो त बाँच्थ्यो कहाँ ।
आज् तक् रावणको कुलै प्रभुजिले सब् भस्म गर्थ्या यहाँ ॥
देख्छू रूप त सानु मानु भङ्गिरा जत्रो कसोरी लडी ।
राक्षस् नाश् तिमि गर्दछौ तिमि ठुला हुन्छौ स्वरूपकी बढी ।८०।

तिम्रो रूप् अति सानु देख्छु अरु ता कत्ता हुनन् झन् भनी ।
संझन्छू मनले र गम्छु मनमा आश्चर्य मान्छू पनि ॥
यस्तो मर्जि सिताजिको सुनि तहाँ पर्वत् सरीका भया ।
मेरू तुल्य स्वरूप् गरेर हनुमान् साम्ने खडा भै रह्या ।८१।

वह निकला । ७७ श्रीरघुनाथ ने उठ कर देखा । कौआ भी वहीं था । इस कौए को मारने के लिए रघुनान ने कंकड़ उठाकर प्रहार किया । कौआ चौदहो भुवन में घूमा, परन्तु कहीं उसे कोई सहारा न मिला और पुनः उन्हीं की शरण में आ गिरा । राम की ही कृपादृष्टि पाकर उस कौए के प्राण बच गये । ७८ श्रीराम ने देखा कि अन्त में कौआ उन्हीं की शरण में आया । यही देखकर उनका हृदय पक्षी के प्रति करुण हो उठा और उन्होंने उसकी रक्षा की । अतः वे मेरे ऊपर भी अवश्य दया करेंगे और इन दुष्टों से मेरी रक्षा करेंगे । हनुमान पुनः हाथ जोड़कर विनती करने लगे—हे माता ! आप यहाँ हैं, यह पता लगाने में ही विलम्ब हुआ है । ७९ यदि यही निश्चय होता कि रावण द्वारा आपका हरण हुआ है तो वह बच कर कहाँ जाता ? प्रभु ने अब तक रावण को उसके वंश-सहित नष्ट कर डाला होता । हनुमान की विनती सुनकर सीता कहती हैं कि तुम्हरा रूप तो मैं अत्यन्त सूक्ष्म देख रही हूँ । गौरैया चिड़िया के समान हो । किस प्रकार लड़कर तुम रावण के वंश का नाश करोगे ? तुम बड़े होगे या तुम्हारा स्वरूप बड़ा होगा । ८० तुम्हारा रूप तो मैं अत्यन्त छोटा देखती हूँ । मैं विचार करती हूँ तो सोचती हूँ, तुम्हारे अन्य साथी कैसे होंगे । यह सब सोच कर आश्चर्य

जब त ति हनुमान्को रूप् ठुलो देखिलीइन् ।
खुशि भइ तहिं बीदा माइले जल्दि दीइन् ।।
अब त तिमि हनूमान् धृष्ट चाला छिपाऊ ।
इनिहरु सब देख्छन् कूदि फेर् जाइ जाऊ ।।८२।।

यति सुनि हनुमान्ले फेरि बिन्ती लगाया ।
सहज सित म जान्थ्याँ केहि फल् खान पाया ।।
वरिपरि फल फूल् छन् मर्जि मात्रै म पाऊँ ।
हुकुम बिनु कसोरी आज आफै म खाऊँ ।।८३।।
यति विनति गऱ्याथ्या खानको मर्जि पाई ।
खुशि भइ फल खाई माइथ्यैं जल्दि आई ।।
चरण परि बिदा भै क्यै गया दूर् जसै ता ।
अलिकति कछु काम् फेर् गर्न आँट्या तसै ता ।।८४।।

आफ्नै मन्मन भन्दछन् ति हनुमान् जुन् वीर दूत् भै गई ।
जत्ती स्वामितको हुकूम् छ उतिमा मात्रै चनाखो भई ।।
उत्ती काम् गरि फिर्छ पो पनि भन्या त्यो दूत् अधम् हो भनी ।
भन्छन् सब् दुनियाँ त भेटिकन जाँ कस्तो छ रावण् पनि।८५।

यति गमि ति बर्घैचा फैक्न मनसुब चलाई ।
खुशि भइ ति महावीर् जल्दि फर्कि आई ।।

भी होता है। सीता की यह आश्चर्यपूर्ण वाणी सुनकर मेरु पर्वत के समान विराट् रूप धारण करके हनुमान सीता के सम्मुख खड़े हो गये। ८१ सीता माता ने जब हनुमान का ऐसा विराट् रूप देखा तो अत्यन्त प्रसन्न होकर उन्हें तुरन्त विदा किया। उन्होंने कहा—हनुमान अब अधिक न दिखाओ, अपने कौशल को छुपा कर रक्खो, अन्यथा यहाँ के लोगों के सम्मुख प्रगट हो जायगा। अतः तुरन्त कूद कर चले जाओ। ८२ यह सुनकर हनुमान ने पुनः विनती की कि हे माता। यहाँ चारों ओर फल-फूलादि भरे पड़े हैं। यदि इतनी आज्ञा हो तो मैं कुछ खा लूँ तब जाऊँ। बिना आपकी आज्ञा, मैं स्वयं कैसे खा लूँ? ८३ उनकी इतनी विनती सुनकर सीता ने आज्ञा दे दी। उन्होंने प्रसन्न होकर फल-फूल खाये और तुरन्त माता के निकट आकर विदा ली। जैसे ही कुछ दूर गये थे कि कुछ और काम करना चाहा। ८४ वे मन-ही-मन बोले—हनुमान एक वीरदूत होकर गया, जितनी स्वामी की आज्ञा हुई, उतना ही करके वापस लौटने पर सारी दुनिया कहेगी कि वह दूत अधम है। अत

सकल वन उखेल्दै चौकि सम्पूर्ण मार्‍या ।
फकत जननि बस्न्या एक् सिसौ शेष पार्‍या ॥८६॥
जब त वन बिनास्या राक्षसी जल्दि आई ।
पुगि नजिक सिताका सोधि सीताजिलाई ॥
भन न तिमि सिताजी वीर् को हो क्यान आयो ।
अति असल बघैंचा मासि मैदान् बनायो ॥८७॥
यति सुनि तहिँ सीता भन्दछिन् क्या म जानूँ ।
विपत परि रह्याकी छू म ता चानुमानूँ ॥
तिमि बुझ न सबै बात् कौन हो क्या न आयो ।
अति असल बघैंचा क्यान मैदान् बनायो ॥८८॥
सकल छल त हो यो राक्षसै गर्छ माया ।
जब त यति भनीथिन् राक्षसी सब् डराया ॥
कहन भनि गया सब् रावणैका हजूर्मा ।
पुगि कहन ति लाग्या वन् गयो जो बिसुर्मा ॥८९॥
ऐले हे महाराज् ! अधीक बलियो आयो र वानर् यहाँ ।
सीताजीसँग केहि बात्चित गरी कूद्यो बघैंचामहाँ ॥

रावण से भेंट करके भी देखना चाहिए, वह कैसा है । ८५ ऐसा विचार कर अशोकवाटिका उजाड़ने की आकांक्षा से प्रसन्न होकर वह महावीर पुनः लौट आया । सारे वृक्षों को नष्ट करते हुए समस्त वाटिका को उजाड़ डाला । केवल वही शिंशपा का वृक्ष, जहाँ सीता माता बैठती थीं, शेष रह गया । ८६ जब सारी वाटिका उजड़ गयी, तब वहाँ एक राक्षसी तुरन्त आ पहुँची और सीता के निकट आकर बोली—सीता तुम बताओ, यह वीर कौन है ? क्यों आया है ? ऐसी उत्तम वाटिका को नष्ट करके मैदान क्यों बनाया ? ८७ सीता जी ने कहा—मैं क्या जानूं ? मैं तो स्वयं ही विपत्ति में पड़ी हूँ । स्वयं ही समझो, कौन है, क्यों आया है और इन उत्तम बगीचों को मैदान क्यों बनाया ? ८८ सर्वत्र छल है । सीता की यह बात सुनकर राक्षसी डर गयी और सब कुछ कहने के लिए रावण के पास गयी । उसने रावण के पास जाकर कहा कि वन में एक वीर सूरमा आया है । ८९ हे महाराज ! अभी आज यहाँ एक बलिष्ठ वानर आया । उसने सीताजी से कुछ बातचीत की और बगीचे की ओर कूदा और सारे वृक्षों को बड़ी सरलता से उखाड़ कर सारा बगीचा मैदान बना दिया । चौकी को चूर्ण कर हवेली को नष्ट कर के बैठा है । ९० मैं तो यही विनती करने के लिए आयी हूँ ।

सब् तो रूख् सहजै उखेलिकन साफ् मैदान् बनाईदियो ।
चौकी चूर्ण गरी हवेलि पनि सब् नासी बस्याको थियो।९०।
आयौं हामि त बिन्ति गर्न भनि यो बिन्ती गर्‍याथ्या जसै ।
सून्यो जल्दि उठेर पक्रन भनी लश्कर् पठायो तसै ॥
हुकूम् पायर लाख लश्कर गयो पक्रेर ल्याऊँ भनी ।
एक् लाख् लश्करलाइ देखि हुनुमान् अत्यन्त गर्ज्या पनि ।९१।
त्यो शब्दै सुनि मोह लश्कर भयो छोड्यो हतीयार् पनि ।
सब् मार्‍या हनुमानले क्षणमहाँ ई हुन् भुसूना भनी ॥
लोहस्तम्भ उठाइ साफ् सब गर्‍या सम्चार् पुगेथ्यो जसै ।
रावण् खूब रिसाइ फेर् पनि ठुलो सेना पठायो तसै । ९२ ।
सेनाका पति पाँच् गया हुकुमले ठूलै थियो तापनि ।
त्यो सेना पनि साफ् तहाँ गरिदिया उस्तै भुसूना गनी ॥
फेर् मन्त्री सुत सात् गया हुकुमले खुप् भारि लश्कर् लिई ।
लोहस्तम्भ उठाइ साफ् फिरि गर्‍या सब्लाइ ठक्कर् दिई ।९३।
सात् मन्त्री सुतलाइ सैन्य सहितै मारी सक्याथ्या जसै ।
कान्छो रावणपुत्र अक्षयकुमार् पो लड्न आयो तसै ॥

रावण ने जैसे ही यह विनती सुनी, उसने उठकर सेना को आज्ञा दी कि उसे (हनुमान को) पकड़ लिया जाये। आज्ञा पाकर लाखों सैनिक दौड़ पड़े। एक लाख सैनिकों को देख कर हनुमान ने तीव्र गर्जना की। ९१ उस गर्जना को सुनकर समस्त सैन्य-दल आकृष्ट हो उठा और अपने-अपने हथियार डाल दिये। हनुमान ने भी सबको भुनगे की तरह क्षण-भर में ही नष्ट कर डाला। गदा उठाकर सबका सफ़ाया कर डाला। जब यह समाचार (रावण के पास) पहुँचा तो रावण ने पुनः एक विराट् सेना भेजी। ९२ आज्ञानुसार सेना बड़ी होते हुए भी साथ में केवल पाँच सेनापति ही गये; हनुमान ने उस विराट् सेना का भी उसी प्रकार सफ़ाया कर डाला। इस बार तो गिन-गिन कर एक-एक को समाप्त किया। उसके बाद रावण ने फिर एक भारी सेना भेजी जिसके साथ में सात मंत्री गये। (हनुमान ने) गदा उठाकर इन सबको भी धकेलते हुए समाप्त कर दिया। ९३ जैसे ही सेना-सहित सातों मंत्रियों को समाप्त किया, वैसे ही रावण का कनिष्ठ पुत्र अक्षयकुमार लड़ने के लिए आया। तितली की तरह जैसे ही वह भारी सेना लेकर पहुँचा, वैसे ही हनुमान आकाश की ओर उछले और गदा से सरलतापूर्वक उसके सिर पर प्रहार

भारी फौज लियेर त्यो पुतलि झैं आई जसैं ता पऱ्यो।
आकाश्मा कुदि लोहदण्ड शिरमा ठोक्या सहज्मा मऱ्यो।९४।
पैले अक्षकुमार मारि अरु सब् सेना समेत् नाश् गऱ्या।
आउँ दैमा तहिं बत्तिका पुतलि झैं हूँदै अनेक् वीर् मऱ्या॥
सब् राक्षस्हरुलाइ मारिसकि फेर् आऊँछ कुन् वीर् भनी।
लोहस्तम्भ लिई खडा भइ रह्या ताहाँ हनूमान् पनि।९५।

जब त अति पियारो पुत्र कान्छो मऱ्याको।
खबर कहन आयो फौज् समेत् नाश् गऱ्याको।
तब त अधिक ताप् भै अन्छ रावण् रिसाई।
अब त गइ म आफै मार्दछू तेसलाई॥९६॥

की मार्छू कि त बाँधि ल्याउँछु यहाँ तेरा नजीक्मा भनी।
रावण्ले यति इन्द्रजित् सित भन्यो तेस् इन्द्रजित्ले पनि॥
हात् जोरीकन बिन्ति गर्छु म छँदै आफै हजूर्ले तहाँ।
जानूपर्छ कतै म गै सहजमा ल्याऊँछु बाँधी यहाँ।९७।
येती बिन्ति गरी चढ्यो रथमहाँ क्यै फौज् पनी साथ् लिई।
आयो श्री हनुमान् भयातिर गयो साम्ने मुहूडा दिई॥
देख्या श्रीहनुमानले पनि र खुप् गर्ज्या ति साम्ने भई।
लोहस्तम्भ लिई कुदीकन उपर् आकाश बीचमा गई।९८।

किया और मार डाला। ९४ इस प्रकार (हनुमान ने) अक्षयकुमार को मार कर (उसकी) शेष सेना को भी नष्ट किया। आते ही दीपक के उपर नष्ट होनेवाले पतिंगों के समान सारे वीर समाप्त हो गये। सब राक्षसों को मारकर हनुमान यह सोच कर कि अब कौन सामने आता है, वहीं गदा लेकर खड़े रहे। ९५ जब अपने अति प्रिय कनिष्ठ पुत्र के सेना-सहित मारे जाने की सूचना रावण को मिली तो वह अधिक चिन्तित हो क्रोध से कहता है—अब तो मैं स्वयं जाकर उसे मार डालूँगा। ९६ अब या तो उसे मार ही डालूँगा या बन्दी बनाकर तेरे निकट ले आऊँगा। इन्द्रजीत से रावण ने इतना कहा, तो वह हाथ जोड़कर विनती करने लगा—मेरे होते हुए श्रीमान् को वहाँ जाने की आवश्यकता नहीं। मैं स्वयं ही जाकर वहाँ से उसे बाँध कर यहाँ लाऊँगा। ९७ इतनी विनती करके वह रथ पर आ-चढ़ा और कुछ सेना भी साथ में ले ली। जहाँ हनुमान थे वहीं जाकर सामने डेरा डाला। श्रीहनुमान ने देखा और तीन बार गरज कर आकाश की ओर उछले और

लोहस्तम्भ उचालि घुम्न बिचमा लाग्या गरुड् झैं जसै ।
पाँच् बाण् छोडि लगाइ आठ् अनि थपी फेरी लगायो तसै ।।
बाण् लाग्या भनि इन्द्रजित् खुशि भई गर्ज्यो जसै ता तहाँ ।
घोडा सूत् रथ चूर्ण पारि हनुमान् कूद्या ति आकाश महाँ।९९।
फेर् अर्का रथमा चढेर अब ता बाँध्छू म ऐले भनी ।
फाँक्यो जल्दि र ब्रह्मपाश् ति हनुमान् जीलाइ बाँध्यो पनि ।।
बाँधी श्रीहनुमानलाइ सँग ली फर्क्यो र दर्बार् गयो ।
बाँध्याका हनुमान देखि शहरै सम्पूर्ण खूशी भयो ।१००।
जुन् रामका चरणै स्मरण् गरि सहज् अज्ञान पाश् नाश् गरी ।
वैकुण्ठै सब पुग्दछन् भनि भन्या तेस् ब्रह्मपाशमा परी ।।
बाँधिन्थ्या हनुमान् कहाँ तर पनी बन्धन् पर्‍या झैं भया ।
रावण् भेटि त जाँ भनेर हनुमान् चुप्चाप लागी गया ।१०१।
जस्सै इन्द्रजितै गयो र हनुमान्- जीलाइ बाँधी तहाँ ।
फर्कॅंथ्यो घर जाँ भनी तब तहीं आयेर रस्तामहाँ ।।
रिस् फेर्‍या पुरवासिले पनि मुठी ऊठाइ हान्दा भया ।
रिस् फेर्छन् भुसुना भनेर हनुमान् चुप्चाप लागी गया ।१०२।

गदा लिये हुए आकाश के बीच में पहुंचे । ९८ वे गदा घुमाते हुए गरुड़ की तरह मध्य आकाश में ही मँडराने लगे । इसी समय (इन्द्रजीत ने उन पर) पाँच बाण छोड़—आठ बाण और लगाये और उसके ऊपर और चलाये । बाण लगा, समझ कर इन्द्रजीत ने प्रसन्न होकर जैसे ही गर्जना की, वैसे ही घोड़ा-सहित रथ को चूरकर हनुमान आकाश में कूदे । ९९ फिर वह दूसरे रथ में चढ़ा और 'अब तो इसे बाँध लूँगा', यह सोचकर शीघ्रता से ब्रह्मपाश फेंक कर हनुमान जी को बाँध लिया । हनुमान को बँधे देखकर सारा नगर प्रसन्नता में डूब गया । हनुमान को दरबार में ले जाया गया । १०० जिस राम का स्मरण करने-मात्र से ही मनुष्य अज्ञान-पाश से मुक्त हो जाता है और बैकुण्ड पहुँच जाता है, तो भला (उस राम के कृपापात्र भक्त एवं दूत) हनुमान (जिससे इन्द्रजीत ने उन्हें बाँधा था) उस ब्रह्मपाश से कहाँ बँध सकते थे ? वे तो केवल बँध जाना दिखा रहे थे (वह बँधना तो) बहाना-मात्र था, जिससे वे सरलता-पूर्वक रावण से मिल सकें । १०१ जैसे ही इन्द्रजीत हनुमान को वहाँ बाँधकर घर जाने के लिए लौटा, उसी समय मार्ग में नगरवासियों ने बदला चुकाने के लिए मुट्ठी (मुक्का) उठाकर (हनुमान पर) प्रहार किया । यह सोच-कर कि शुनगे बदला ले रहे हैं, हनुमान चुप-चाप (उनकी) मार खाते

पैले ता ब्रह्मपास्मा परिकन क्षणभर् बाँधिनू काभ थीयो ।
ब्रह्माको वाक्य साँचो गरिकन पछि ता पाशले छोडिदीयो ॥
बन्धन्देखी त खुस्क्या तरपनि हनुमान् भेट्न मन्सुब् धऱ्याका ।
पौंच्या रावण् छ जहाँ खुशिभइ अरुतामान्दछन् कर्पऱ्याका ।१०३।

रावण् वीर् पनि मन्त्रिवर्ग सँग ली भारी सभामा थियो ।
पौंच्यो ताहिर इन्द्रजित्ति हनुमान्-जीलाइ सुम्पीदियो ॥
हात् जोरी विन्ती गऱ्यो अति हरीप् वानर् छ सेना पनि ।
धेरै नाश गरेछ आज मइ गै ल्यायाँ खुनी हो भनी १०४।

जो गर्नू अब पर्छ मन्त्रि सँगको सल्लाह बात्चित् गरी ।
यस्को आज ठिकान् लगाउनु हवस् मन्मा विचार् खुप् गरी ॥
येती बिन्ति सुन्यो र इन्द्रजितको हेऱ्यो नजर्ले पनि ।
लायो सोधन प्रहस्तलाइ किन यो आयेछ लौ सोध् भनी १०५।

अस्सल्मा पनि क्या भनूँ अति असल् मेरो बघैंचा पनि ।
नास्यो वीर् पनि नाश् गऱ्यो मकन ता मानू भुसूना गनी ॥
हूकूम् यो मुनि त्यो प्रहस्त हनुमान् जीका अगाडी गई ।
लाग्यो सोध्न सबै कुरा पनि बहुत् आधार दीन्या भई ।१०६।

हुए बैठे रहे । १०२ पहले तो ब्रह्मपाश में बंध जाने और कुछ देर इसी प्रकार बने रहने का काम था । ब्रह्मा के वचन को सत्य करने के बाद उन्हें पाश से मुक्त कर दिया गया । बन्धन से मुक्त होने पर भी हनुमान को तो रावण से भेंट करना ही था । अतः वे जहाँ रावण था, वहीं गये; और लोगों ने यही समझा कि वे विवश करके लाये गये हैं, परन्तु हनुमान स्वेच्छापूर्वक (वहाँ) गये थे । १०३ रावण उस समय अपने वीर मन्त्रियों के साथ अपनी विराट सभा का संचालन कर रहा था । वहाँ पहुँचकर इन्द्रजीत ने हनुमान को रावण के हाथों में सौंप दिया । उसने रावण के सम्मुख हाथ जोड़कर विनती की कि यह बड़ा ही नटखट वानर है, इसने बड़ी-बड़ी सेनाओं का नाश किया है, अतः आज मैं स्वयं ही इस हत्यारे को पकड़कर लाया हूँ । १०४ (इन्द्रजीत ने आगे कहा—) जो कुछ भी करना उचित हो, अब सब मन्त्रियों से विचार-विमर्श करके, आज ही इसको ठिकाने लगाने की कृपा करें । इन्द्रजीत की विनती सुनकर रावण ने मन में एक पल विचार किया, फिर एक दृष्टि इन्द्रजीत पर डाली और कहा--पूछो, इसी से कि यह क्यों आया है ? १०५ क्या कहूँ ! इसने मेरे अति उत्तम बगीचे को भी नष्ट कर दिया और सारे

यै बीच्मा नडराइ रावण उपर् सामने नजर् दी तहाँ ।
बोल्या श्री हनुमानले तँ बुझिले काम्ले त आयाँ यहाँ ॥
भार्या जस्कि हरिस् उनै जगतनाथ् राम्को म दास् हूँ, मति ।
तेरो नष्ट भयो र अति दिन यो आयाँ नले यो मति।१०७।
आया राम मतङ्ग पर्वतविषे लक्ष्मण् सहित् भैं जसै ।
लाया सुग्रिवले मित्यारि खुशि भै राम्चन्द्रजी थ्यैं तसै ॥
बाली मारि रजाइँ बक्सनुभयो सुग्रीव राजा भया ।
सीता खोज्न हुकूम् हुँदा विरहरू फेर् दस् दिशामा गया१०८।
एक् वीर् ता मइ हूँ हुकूम् शिर उपर लीयेर आयाँ यहाँ ।
पायाँ देख्न सिताजिलाइ दुत हूँ राम्को मजान्थ्याँ कहाँ ॥
वानर् हूँ र उखेलि साफ् गरिदियाँ तेरो बघैंचा पनि ।
आया मार्न मलाइ जो अगि सरी उन्लाइ मार्‍याँ पनि।१०९।

यो इन्द्राजित् गइ यसै बिचमा मलाई ।
बाँधेर ल्याइकन आज दियो तँलाई ॥
बन्धन् परचो भनि नठान् त दियाँ जनाई ।
खूला छु अति पनि दिन्छु म सुन् तँलाई ॥११०॥

वीरों को तो भुनगा समझकर सरलता से मार डाला। ऐसी आज्ञा पाकर एक प्रहरी हनुमान जी के सम्मुख आया और आश्वासन देते हुए सभी बातें पूछने लगा। १०६ इसी समय निडरतापूर्वक रावण की ओर दृष्टि डाल कर श्रीहनुमान जी बोले—समझ ले कि मैं यहाँ किसी कार्यवश ही आया हूँ। जिसकी पत्नी का तुमने हरण किया है, उन्हीं जगन्नाथ राम का मैं दास हूँ। तेरी मति भ्रष्ट हो गयी है और अब तेरे दिन भी निकट आ गये हैं, अतः (यदि कल्याण चाहता है तो) अपनी विचारधारा बदल दे। १०७ जैसे ही लक्ष्मण-सहित श्रीराम मतंगपर्वत पर आये, सुग्रीवजी ने अति प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्रजी से मित्रता कर ली। (श्रीरामचन्द्रजी ने) बालि को मारकर सुग्रीव को राज्य सौंप कर राजा बनाया और अब उनकी आज्ञा से ही सीता को ढूंढने के लिए बहुत से वीर दसों दिशाओं में गये हैं। १०८ (हनुमान ने आगे कहा—) उन्हीं में से एक वीर मैं (भी) हूँ। श्रीराम की आज्ञा शिरोधार्य कर (यहाँ) आया हूँ और सीताजी को देख चुका हूँ। राम का दूत हूँ। इसी लिए तेरा बगीचा उजाड़ कर साफ़ कर दिया है और जो कोई भी मुझे मारने के लिए आया, उसे ही मैंने मार डाला। १०९ उसी समय यह इन्द्रजीत मुझे बाँधकर ले आया और तुझे सौंप दिया है। यह न समझ कि मैं

लोक्को गती सब विचार् गरि आज तैंले ।
यो राक्षसी मति नले हित भन्छु मैले ॥
ब्राह्मण् तँ होस् ऋषि पुलस्त्यजिको त नाती ।
राक्षस् कसोगरि तँ होस् बुझिले न भाँती ॥१११॥
आत्मा स्वरूप उ त झन् छ स्वरूप काहाँ ।
जाती र वर्ण लिइ भन्न सकिन्छ याहाँ ॥
सो आत्मरूप भनि नित्य विचार गर्न्या ।
आनन्दमा रहुँ भन्या मति येहि धर्न्या ॥११२॥
जो यो लोकविषे प्रपंच छ सबै जान् स्वप्न जस्तो भनी ।
सूतुन्ज्याल् सपना छ सत्य उठिता लाग्दैन साँचो पनि ।
तस्तैं ज्ञान् त भयो भन्या त्रिभुवनै एक् देख्छ आत्मा फकत् ।
अज्ञान्रूप्निदमा पऱ्यो पनि भन्या देखिन्छ नाना जगत् ।११३।
आत्मा सत्य म हूँ भनेर बुझिले यस् देहलाई पनि ।
झूटो जान् पृथिवी र जल्हरु मिली झूटै बन्याको भनी ॥
तर्लास् यो मनमा लिइस् पनि भन्या तार्न्या उनै विष्णु छन् ।
जो हुन् विष्णु उ राम हुन् शरण पर् रिस् उठ्छते रातझन्।११४।

बन्धन में हूँ। मैं स्पष्ट कर देता हूँ कि मैं मुक्त हूँ, तुझे उपदेश भी देता हूँ, सो सुन ! ११० जगत् की गति को विचार करो और इस राक्षसी मति का त्याग करो। मैं तेरे हित की बात कहता हूँ। तुम ब्राह्मण हो। श्रीपुलस्त्यजी के पौत्र (हो)। फिर तुम किस प्रकार राक्षस हो। भलीभाँति विचार करो। १११। वह आत्मास्वरूप तो कहता है कि स्वरूप कहाँ है। जाति एवं वर्ण को लेकर जो कुछ भी यहाँ कहा जा सकता है, उसी को आत्मस्वरूप समझकर विचार करो। यदि आनन्द-पूर्वक जीवन व्यतीत करना है तो ऐसी ही (मेरे उपदेश के अनुसार) मति को धारण करो। ११२ इस जगत् के जितने प्रपंच हैं, उन सब को स्वप्न-सदृश समझो। जैसे सपना सोते समय तक ही रहता है, जागने पर सब कुछ मिथ्या साबित हो जाता है, उसी प्रकार जब मनुष्य को ज्ञान प्राप्त हो जाता है, तब उसे तीनों भुवन एक ही आत्मा के समान दिखायी देते हैं। ११३ यह समझकर कि सत्य आत्मा मैं हूँ, इस शरीर को जो पृथ्वी-जल (आदि तत्वों) के मिश्रण से बना है, झूठ ही समझो। इस विचार को यदि मन में रखोगे तो तर जाओगे। तारनेवाला वही विष्णु है, वही राम है; उसी की शरण में जाओ। क्रोध, जो (तुम्हारे मन में) उत्पन्न होता है, उसे त्याग दो। ११४ ऐसी मूर्खता को मन से

यस्तो मूर्खपना नली अब सिता सुम्पी शरण्मा तँ पर् ।
खुश् हूनन् रघुनाथ् शरण् परि गया यो दुष्ट चाला नगर् ॥
राम्को भक्ति गरैन ता कसरि यो संसार तर्ला उसै ।
पर्ला जन्मनु मर्न यै फजितिमा छुट्‌तैन यो ताप् कसै।११५।
यो जानीकन भक्ति गर् शरण पर् राम्का हजूर्मा गई ।
आफ्नू आत्म नरक् विषे नलइजा यस्तो तँ जान्या भई ।
सीताराम् सितको विरोध् गरि तँहेर् गिर्लास् नरक्मा पनि ।
फेर् उत्तीर्ण हुनू कठिन् छ बुझिले अर्ती दियाँ यो पनि ।११६।
यस्ता बात् हनुमानका जब सुन्यो रावण् रिसायो तहाँ ।
लाल् लाल् नेत्र गराइ भन्छ रिसले सूनाइ संसद्महाँ ॥
मेरो डर् रतिभर् नराखि बहुतै क्या बोल्दछस् रे यहाँ ।
राम् लक्ष्मण् दुइ भाइलाइ सहजै मार्छू म छोड्छू कहाँ।११७।
सुग्रीव्लाइ तँलाइ मार्छु पछि फेर मार्छू सिताजी पनि ।
राम् लक्ष्मण् सित क्या डराउँछुर की मार्नन् मलाई भनी ॥
तिन्का वानर सैन्यको पनि विनाश् गर्न्याछु येती जसै ।
बोल्यो रावणले इ बात् सुनि तहाँ बोल्या हनूमान् तसै।११८।

निकाल दो और सीता को लेकर प्रभु की शरण में जाओ। शरण में आया हुआ देखकर प्रभु प्रसन्न होंगे अतः यह दुष्टतापूर्ण व्यवहार न करो। राम की भक्ति बिना किस प्रकार भव-सागर तरोगे ? इन्हीं कष्टों में जन्म लेना पड़ेगा और अन्त में मरना पड़ेगा। यह (जन्म-मरण का) ताप (कभी नहीं छूटेगा)। ११५ यह सब जानकर अब राम की सेवा में जाकर उनकी भक्ति करो। अपनी आत्मा को नर्क की ओर मत लगाओ। बुद्धि धारण करो और सीता-राम का विरोध कर तुम नर्क में ही गिरोगे, फिर उबरना कठिन हो जायगा। अतः मैं तुम्हें केवल ऐसा उपदेश दे रहा हूँ, ऐसा समझ लो। ११६ हनुमान की यह उपदेश-पूर्ण बातें सुनकर रावण को क्रोध आया। उसने लाल-लाल नेत्र कर कहा—मेरा किंचित् मात्र भी ध्यान न रखकर, निडरतापूर्वक यहाँ अधिक क्या बकता है रे! राम-लक्ष्मण दोनों भाइयों को मैं सहज ही मार डालूँगा। मैं भला उन्हें कहाँ छोड़ सकता हूँ। ११७ फिर सुग्रीव, और तुझे मारने के पश्चात् सीता को मार डालूँगा। मैं क्यों डरूँ कि राम-लक्ष्मण कहीं मुझे न मार डालें। उसकी वानरसेना का मैं विनाश कर डालूँगा। रावण ने जैसे ही इतना कहा कि हनुमान बोले—११८ इस प्रकार व्यर्थ ही क्यों अहंकार करते हो। प्रभु को तो अलग रक्खो, तुम मेरे ही बराबर नहीं

यसरि किन बहूतै गर्दछस् सेखि धेरै ।
प्रभुकन त परै राख् जोरि छैनस् तँ मेरै ॥
अघि सरुँ ततँ जस्ता कोटि रावण् म मारूँ ।
हुकुम त नभयाको मार्न पो आज क्यारूँ ॥११९॥

यस्ता बात् हनुमानका सुनि तहाँ रावण् रिसायो अति ।
साँचा हुन् इ कुरा हुनाकन त हो लिन्थ्यो कहाँ दुर्मति ॥
यो वानर्कन काटि टुक् गर भनी यस्तो हुकूम् पोदियो ।
हात्मा बेस् हतियार् लिई अगि सर्‍यो जुन् वीर् नजीक्माथियो२०
यस् बीच्मा त विभीषणै अगिसरी हात् जोरि बिन्ती गर्‍या ।
दूत् हो यो महाराज् ! कुरा पनि वहाँ लैजान्छ को यो मर्‍या ॥
चिन्हूँ केहि लगाइ छोड् दिनुहवस् जावस् र विस्तार् गरोस् ।
येसै बानरका कुरा सुनि यहाँ आउन् ति संग्राम् परोस्२१

साँचो भन्या भनि बुझी कपडा मगायो ।
तेल् धीउले मुछि पुछर् भरि बेर्न लायो ॥
हुकूम् दियो अब जलायर बाँधिलेऊ ।
सारा शहर पनि घुमायर छाडिदेऊ ॥१२२॥
जावस् ठुटो पुछर लीकन फर्कि वाहीं ।
पुच्छर् डढी नसकि छोड़नु छैन काहीं ॥

हो । आगे बढ़कर तुम-जैसे कोटि रावणों को मैं मार डालूँगा । मारने की आज्ञा मुझे अभी नहीं मिली, क्या करूँ । ११९ हनुमान की ऐसी ओजपूर्ण बातें सुनकर रावण को और भी क्रोध आया । हनुमान की कही हुई बातें यद्यपि सत्य थीं, किन्तु रावण अपनी कुमति के कारण (भला उन्हें) क्यों मानने लगा । उसने आज्ञा दी कि इस वानर के टुकड़े कर दिये जायँ । उसकी आज्ञा पाकर, जो वीर निकट था, हाथ में अति उत्तम हथियार लेकर आगे बढ़ा । १२० इसी बीच विभीषण ने आगे बढ़कर करबद्ध विनती की–महाराज, यह तो दूत है, यदि यह मर जायगा तो वहाँ संदेश लेकर कौन जायगा ? कोई निशान लगाकर इसे छोड़ दें, जिससे कि यह वहाँ जाकर सब विस्तारपूर्वक कह सके । इसी वानर की बात सुनकर वे (राम-लक्ष्मण आदि) संग्राम के लिए(सामने) आयें । १२१ विभीषण की बात सत्य मानकर उसने (रावण ने) एक वस्त्र मँगाया और उसे तेल-घी में भिगोकर हनुमान की पूँछ में लपेट दिया और आज्ञा दे दी कि इसकी पूँछ में आग लगाकर सारे नगर में घुमाओ और छोड़ दो । १२२ (रावण ने आगे कहा–)अपनी जलती हुईपूँछ लेकर कहीं चलाजाय । जब तक

यस्तो हुकूम् जब दियो तब बाँधिलीया ।
आगो पनी पुछरतीर लगाइदीया ॥१२३॥

बाँध्याका हनुमान् लिएर खुशि भै भेरी अगाडी फुकी ।
लाग्या घुम्न शहर् ति राक्षसहरू चोर्‌हो भनी खुप् भुकी॥
चुप् लागी हनुमान् पनी खुरुखुरू गम् हेरि हिंड्दै गया ।
ढोका पश्चिममा पुगी शहरको ताहीं ति साना भया।१२४।

बन्धन् देखि त खुश्कि सूक्ष्म रुपले पर्वत् सरीका भया ।
ठूलो स्तम्भ उठाइ राक्षस अनेक् मार्‍या र कुद्दै गया ॥
बल्दो लामु पुछर् लियेर घर-घर् कुद्दै शहर्‌मा डुली ।
पोल्या सब् शहरै छुटेन कहिं घर् बाँकी कतै एक् भुली।१२५।

लाग्यो बल्न शहर् जल्या र सब घर् बन्द रस्ता भई ।
भागी जान नपाउँदा हुँदि अनेक् राक्षस् अटाली गई ॥
फाल् हालीकन अग्निमा परि मर्‍या यो चाल् शहर्‌मा भयो ।
पोल्यानन् घर एक् विभीषणजिको त्यो मात्र बाँकी रह्यो।१२६।

येती काम गरी सकी पुछरको आगो निभाऊँ भनी ।
कूदी जल्दि समुद्रमा पुगि पुछर् चोभी निभाया पनि ॥

पूँछ जलकर समाप्त न हो जाय, इसे छोड़ना नहीं । ऐसी आज्ञा होने पर हनुमान की पूँछ में आग लगा दी गयी । १२३ बँधे हुए हनुमान को लेकर नगाड़े बजाते हुए और चोर कहते हुए राक्षसगण सारे नगर में घूमने लगे । इस प्रकार खूब प्रसन्नतापूर्वक चिल्लाते हुए सब आनन्दपूर्वक घूमने लगे । हनुमान भी प्रसन्नतापूर्वक सीधे-सीधे चलते रहे । अचानक पश्चिम द्वार की ओर जाते समय वे छोटे हो गये । १२४ हनुमान के कसे हुए बन्धन, सूक्ष्म रूप धारण करते ही, सब ढीले पड़ गये । अपना सूक्ष्म शरीर लेकर वे बन्धनों से (मुक्त होकर) बाहर निकले और तुरन्त ही एक पर्वत के समान (विशालकाय) हो गये । अब हनुमान एक बड़ा स्तम्भ उठा कर अनेक राक्षसों का संहार करते हुए उछलते गये । वे जलती हुई पूँछ लिये घर-घर में कूदते हुए नगर में घूमने लगे । इस प्रकार उन्होंने सारे नगर को जला कर भस्म कर दिया, एक भी घर शेष न बचा । १२५ सम्पूर्ण नगर के सभी घर जल गये । सारे मार्ग अवरुद्ध हो गये । भागने के लिए मार्ग न पाकर अनेक राक्षस घबरा कर आग में कूद पड़े । इस प्रकार बहुत से राक्षस जल कर मर गये । नगर में ऐसी (प्रलयकारी) स्थिति उत्पन्न हो गयी । केवल विभीषण का ही घर शेष रहा, जो अग्नि से सुरक्षित बचा । १२६ इतना कार्य करके पूँछ की आग बुझाने के लिए

अग्नीले पनि मित्र-पुत्र भनि ताप् केही गर्न्यानन् तहाँ ।
सीताको पनि प्रार्थना हुन गयो डढ्थ्या हनूमान् कहाँ।१२७।
रामका फकत् स्मरणले पनि दुःख छुट्छन् ।
अध्यात्मिकादिहरु ताप् पनि जल्दि छुट्छन् ॥
साक्षात् उनै प्रभुजिका दुत भै गयाका ।
डढ्थ्या कहाँ ति हनुमान् अति हित् भयाका ॥१२८॥

फिर्न्या मन् सब लौ बिदा हुन सिता जीथ्यैं हनूमान् गया ।
बीदा खूशि भयेर बक्सनुहवस् जान्छू म भन्दा भया ॥
आऊँछन् रघुनाथ् अवश्य भनि यो बिन्ती गरयाथ्या जसै ।
साह्रै शोक् मनमा धरीकन सिता क्यै भन्न लागिन् तसै।१२९।
तिमिकन नजिकैमा देखि खुप् खुशि हुन्थ्याँ ।
घडि घडि रघुनाथ्का मिष्ट वार्ता म सुन्थ्याँ ॥
अब कसरि म यस्तो दुःखले प्राण धर्छु ।
तिमी पनि फिरि जान्या फेरि ताप्मा म पर्छु ।१३०।

सीताका इ वचन् सुनेर झटपट् हात् जोरि बिन्ती गरया ।
यस्तो शोक् अब छाडि बक्सनुहवस् आपत्ति साह्रै भया ॥

(हनुमान) तुरन्त कूद कर समुद्र में पहुँचे और अपनी पूँछ पानी में डुबो कर अग्नि बुझा दी । अग्नि ने भी मित्र (पवन) का पुत्र जानकर उनकी पूँछ में प्रभाव न डाला । उनकी रक्षा के लिए सीता ने भी विनती की, अतः हनुमान भला कहाँ जलते ! १२७ केवल राम के स्मरण से ही दुःखों का नाश होता है, आध्यात्मिक तापों से भी शीघ्र ही छुटकारा मिलता है, फिर साक्षात् प्रभु के ही दूत बन कर (वहाँ) गये हुए हनुमान किस प्रकार जल जाते (जब) प्रभु ही उनके पक्ष में थे । १२८ लौटने की इच्छा से हनुमान विदा लेने सीता के पास गये । कहने लगे—प्रसन्न होकर आप मुझे विदा देने की कृपा करें । मैं जाता हूँ, रघुनाथ अवश्य आयेंगे । हनुमान की विनती सुनकर सीता जी अत्यन्त शोकाकुल मन से कहने लगीं— १२९ तुम्हें अपने निकट पाकर मैं अत्यन्त प्रसन्न होती थी और बार-बार रघुनाथ की मधुर चर्चा करती थी । अब कैसे इन दुःखों के मध्य रहकर प्राणों को रख पाऊँगी । तुम भी लौट जाओगे तो मैं पुनः संकट में पड़ जाऊँगी । १३० सीता के वचन सुनकर हनुमान ने हाथ जोड़ कर विनती की कि आप इस शोक को त्यागने की कृपा करें । यदि आपको यहाँ रहने में अधिक कठिनाई है तो आज्ञा दें, मैं अभी आपको लेकर

ऐले दाखिल गर्छु रामचरणमा बोकी हुकूम् लौ हवस् ।
धेरै शोक् किन गर्नुहुन्छ मनमा यो शोक् दुरैमा रहोस् १३१

सीताजी पनि भन्दछिन् म त नजाँ जाऊ तिमी मात्र गै ।
विस्तार् बिन्ति गरेर जल्दि रघुनाथ् लीयेर आऊ सँगै ॥
राम् आईकन दुष्टलाइ सहजै मारी मलाई सँगै ॥
लैजानन् रघुनाथ् त कीर्ति रहला क्या हुन्छ येसै म गै।१३२।

सीताको जब यो हुकूम् हुन गयो बीदा हनुमान् भया ।
तीन् बेर् जल्दि परिक्रमा गरि प्रणाम् गर्दा छँदा ती गया ॥
पर्वत् माथि चढ़ेर रूप् पनि ठुलो पर्वत् सरीको धर्‍या ।
आकाश् मार्ग लिई कुदेर खुशिले खुप् शब्द ठूलो गर्‍या१३३

सून्या शब्द ति अङ्गदादिहरुले बोल्या परस्पर् पनि ।
शब्दैले बुझियो अवश्य सहजै भेटेर आया भनी ॥
यस्ता बात् तिरमा बसेर सब वीर् गर्दै थिया खुश् भई ।
पौंच्या श्रीहनुमान् तहाँ तिरमहाँ आनन्द खूशी रही ।१३४।

भेट् भो अङ्गद वीर्हरूसित तहाँ विस्तार् कुरा सब् गर्‍या ।
अङ्गद् वीर्हरु खुश् भई पुछरमा पक्रेर घुम्दन् गर्‍या ॥

रघुनाथ के चरणों में प्रस्तुत करूँगा । मन में अधिक शोक क्यों करती हैं ? इस शोक को दूर करने की कृपा करें । १३१ सीताजी कहती हैं—मैं तो नहीं जाऊँगी, केवल तुम ही जाकर विस्तारपूर्वक विनती करना और शीघ्र ही रघुनाथ को लेकर यहाँ आना । वे आकर शीघ्र ही दुष्टों को मारकर मुझे साथ ले जायें, तभी उनकी कीर्ति रहेगी, अन्यथा केवल मेरे इस प्रकार जाने से क्या होगा ? १३२ सीताजी की ऐसी आज्ञा पाकर हनुमान विदा हो गये । तीन बार (उनकी) शीघ्र परिक्रमा कर प्रणाम करते हुए वे चले गये । पर्वत के ऊपर चढ़ कर उन्होंने विशाल शरीर धारण किया । आकाशमार्ग ग्रहण कर कूद पड़े और अत्यन्त प्रसन्न होकर गगनभेदी नाद किया । १३३ उस गर्जना को सुनकर अंगदादि परस्पर कहने लगे कि अवश्य ही हनुमान सरलता से भेंट कर आया है । समस्त वीर प्रसन्नचित्त हो किनारे बैठ कर इसी प्रकार की बातें कर रहे थे, उसी समय रघुनाथ भी निकट पहुँच गये, जिससे वहाँ पूर्णतया प्रसन्नता छा गयी । १३४ अंगदादि वीरों से वहाँ भेंट हुई और विस्तृत बातचीत हुई । अंगद तथा अन्य वीर प्रसन्न होकर (अपनी-अपनी) पूँछ पकड़ कर घूमने लगे । कोई प्रसन्न होकर नाचने लगा । इसी प्रकार सब लोग मिलकर

नाच्या कोहि खुशी भयेर यहि रीत् गर्दै ति रामथ्यैं गया।
सुग्रीव्को मधुवन् मिल्यो नजिकमा साह्रै खुशी ती भया१३५।
बिन्ती अङ्गदथ्यैं गऱ्या पनि तहाँ खाऊँ इ फल् फूल् भनी।
अङ्गद्ले पनि खाउ जाइ हनुमान् जीका प्रसाद्ले भनी॥
दीया मर्जिर खाउँ फल फुल् भनी वानर् गयाथ्या जसै।
चौकी बानर जो थिया सब तहाँ आया र रोक्या तसै।१३६।
रोक्न्या बानरलाइ लात् दिइ पिया मीठो मधुर् रस् तहाँ।
यो चुक्ली दधिवक्त्रले लिइ गया सुग्रीवजी छन् जहाँ॥
सब् विस्तार् दधिमूखले जब गऱ्या लूट्या मधूवन् भनी।
लूटपीट्को समचार् सुन्या र पनि रिस् ऊठेन कत्ती पनि ॥१३७॥
भेट्याछन् बुझियो सिताकन न ता लुट्थ्या मधूवन् कहाँ।
ई बात् सुग्रिव गर्दथ्या प्रभुजिले सून्या र सोध्या तहाँ॥
सीताको पनि नाम् लिएर तिमिले क्या बोल्दछौ बात् भनी।
सोधी बक्सनुभो र सुग्रिवजिले बिन्ती गऱ्या बात् पनि१३८
हे नाथ् श्रीमधुवन् थियो अति असल् मेरो बघैंचा तहाँ।
ऐले ता हनुमान्हरू बलजफत् आएर एक् क्षण्महाँ॥

एक साथ राम के पास गये। सुग्रीव को मधुवन के निकट मिले और सभी लोग अत्यन्त प्रसन्न हुए। १३५ (सभी ने) अंगद से विनती भी की कि (वे) फल-फूल आदि खा लें। अंगद ने भी (उनसे) कहा 'लो खा लो'—यही हनुमान जी का प्रसाद है। जैसे ही फल-फूल खाने की सहमति देकर (अंगद के) वानर साथी (वहाँ से) चले गये, वैसे ही (सुग्रीव के मधुवन के) चौकीदार वानरों ने वहाँ आकर (उन्हें) खाने से रोक दिया। १३६ रोकनेवाले वानर (चौकीदारों) को (हनुमान के संगी वानरों ने) लात मार कर मीठा मधुरस पान किया। यह शिकायत लेकर दधिवक्त्र सुग्रीव के पास गया और दधिमुख ने सविस्तार सब कुछ कह सुनाया। उसने कहा कि मधुवन लुट गया। लूट का समाचार सुनकर भी (सुग्रीव को) किंचित-मात्र क्रोध नहीं आया। १३७ उन्होंने (सुग्रीव ने) समझा कि (हनुमान की) सीताजी से भेंट हो गयी होगी, नहीं तो मधुवन में क्यों लूट-मार करता! जब सुग्रीव को इस प्रकार बात करते प्रभुजी ने सुना तो वे (सुग्रीव से) प्रश्न करने लगे—सीता का नाम लेकर तुम क्या कह रहे थे? सुग्रीव ने विनती की—१३८ हे नाथ! मधुवन मेरा एक अति उत्तम बगीचा था। अभी-अभी हनुमान के लोगों ने बल-

लूटचाछन् मधुरस् अनेक् तरहका चौकी कुटचाछन् पनि।
आया आज फिराद गर्न मधुवन् लूटचा र कूटचा भनी १३९
सोही बात म गर्दछू रघुपते ! इन्‌ले सिताजी पनि।
भेटचाछन् तब पो लुटचार मधुवन् रोक्ता चुटचाको भनी॥
यो बिन्ती गरि जल्दि सुग्रिवजिले ती चौकिलाई तहाँ।
दीया हूकुम जल्दि फर्किकन गै चाँडै पठाऊ यहाँ॥१४०॥

आऊन् श्रीहनुमान्‌हरू अब यहीं चांडो भनी यो जसै।
दीया निर्भय दी हुकूम् उहि बखत् फर्क्या र दौड्या तसै॥
मामा सुग्रिवका गया र दधिमुख् हूकुम् सुनाईदिया।
खूशी भै हनुमान्‌हरू पनि गया जाहां रघूनाथ् थिया १४१

राम् सुग्रीव्‌कन दण्डवत् गरिलिया साम्ने जमीन्‌मा परी।
सब् विस्तार् हनुमानले तहिं गऱ्या वृत्तान्त एक् एक् गरी॥
भेटचां आज सिताजिलाइ रघुनाथ् लंका पुरीमा गई।
जस्सै देखिलियां सिताकन तसै सानू स्वरूप्‌को भई।१४२।

पात्का अन्तरमा लुकी जननिका साम्ने नजीक्‌मा रह्यां।
जो वृत्तान्त थियो सबै हजुरको त्यै सूक्ष्म रूप्‌ले कह्यां॥

पूर्वक एक ही क्षण में अनेक प्रकार के मधुरस की लूट मचायी है और वहाँ के (प्रहरी) मधुरस लुटने और मार-पीट की शिकायत लेकर आये हैं। १३९ हे रघुपते ! मैं वही बात कह रहा हूँ। इन्होंने सीताजी से भेंट कर ली है; इसी लिए मधुवन को लूटा है और मना करने पर मार-पीट भी की है। यह विनती करके सुग्रीव ने शीघ्र ही उस (उनमें से एक) प्रहरी को आज्ञा दी कि अभी लौटकर जाओ और उन्हें यहाँ भेज दो। १४० श्रीहनुमान आदि अब शीघ्र ही यहाँ आ जायें। ऐसी आज्ञा पाते ही (वे प्रहरी) निर्भयतापूर्ण तत्काल लौटकर दौड़ पड़े। सुग्रीव के मामा दधिमुख गये और आदेश सुना दिया। प्रसन्न होकर हनुमान आदि भी रघुनाथ के पास चले गये। १४१ सभी ने राम एवं सुग्रीव को साष्टांग दण्डवत की। वहीं हनुमान ने एक-एक बात का सविस्तार वर्णन किया—हे रघुनाथ ! लंकापुरी में जाकर आज सीताजी से भेंट कर ली। सीताजी को देखते ही मैंने सूक्ष्म रूप धारण कर लिया। १४२ (हनुमान ने आगे कहा—) पत्तों के अन्दर छिप कर जननी के सम्मुख हो, निकट रहा। आपके विषय में जो कुछ भी समाचार था, मैंने सारा वृत्तान्त कह सुनाया। मैंने उनसे अपने उसी सूक्ष्मरूप में ही सारी बातें कीं। श्रीमन् से दूर

शोकी दुःखि हजूर दूर रहँदा संझेर साह्रै रुँदी ।
राम्राम् बोल्दि अनाथ् भईकन बहुत् विह्वल् निरन्तर् हुँदी १४३
अशोक्‌का बनमा सिसौ पनि छ एक् त्यै वृक्षका बीचमा ।
झुन्‌डीन्या मतलब् लिई खडि भइन् सुनिन् उसै बीचमा ॥
यो वृत्तान्त सुनी हुकूम् पनि भयो को होस् तँ बोल्छस् कहाँ।
क्या लूकीकन बोल्दछस् अब नलुक् आईज साम्ने महाँ ।१४४।
पायाँ येहि हुकूम् जसै जननिको बानर् स्वरूप्‌ले गयाँ ।
को होस् भन् भनि सोधिवक्सनुभयो फेर् बिन्ति गर्दो भयाँ ॥
फेर् वृत्तान्त गरीसक्याँ हजुरको औंठी दियाथ्याँ जसै ।
बर्बर् आँसु खसालनू पनि भयो विश्वास लाग्यो तसै।१४५।
आफ्नू दुःख हवाल् सबै कहनुभो यस्ता विपत् छन् भनी ।
आऊँछन् रघुनाथ् भनेर बहुतै मैले बुझायाँ पनि ॥
आज्ञा भो रघुनाथका हजुरमा सब् दुःख मेरो कही ।
लङ्कामा प्रभुको सवारि तिमिले चांडो गराऊ गई ।१४६।
बात्‌चित् गरी जब यतातिर फिर्न लाग्याँ ।
विश्वास पार्न जननी सित चीज माग्याँ ॥

विरह-पीड़ित, भूखी-प्यासी क्षीणगात हो सीता रोती रहती हैं । वे अनाथ-सी होकर हर समय राम-राम की रट लगाती, विलाप करती रहती हैं । १४३ अशोकवन में जो एक शीशम का वृक्ष है, उसी के बीच में लटकने के उद्देश्य से जैसे ही वे उठकर खड़ी हुईं उसी समय यह वृत्तान्त सुनकर उन्होंने आज्ञा दी "तुम कौन हो और कहाँ से बोल रहे हो ? अब छिपो मत, सामने आ जाओ" । १४४ जननी का यह आदेश पाकर मैं वानर-स्वरूप में गया । (वे) पूछने लगीं—"कहो कौन हो ?", तब मैंने विनती की और आपकी मुद्रिका उन्हें दी । श्रीमन् की अंगूठी पाते ही उनके नेत्रों से अश्रु प्रवाहित होने लगे और उन्हें मेरे ऊपर विश्वास हुआ । १४५ उन्होंने मुझसे अपनी सारी विरह-कथा कही और अपनी विपत्तियों का सविस्तार वर्णन कर डाला । तब मैंने समझाया कि रघुनाथजी निश्चय ही यहाँ आयेंगे । तब उन्होंने आज्ञा दी कि रघुनाथ की सेवा में मेरी सारी दुःखकथा सुना देना और शीघ्र ही जाकर प्रभु की सवारी लंकापुरी में लाने का प्रबन्ध करना । १४६ बातचीत करके जब इधर की ओर आने लगा तो आपको विश्वास दिलाने के लिए जननी की निशानी कोई वस्तु माँगी तो उन्होंने शिर में धारण किया हुआ चूड़ामणि निकाल कर दिया

चूडामणी दिनुभयो शिरमा रह्याको ।
कागको कुरा कहनुभो अघि जो भयाको ॥१४७॥

लक्ष्मणलाइ अवाच्य बात् भनि बहुत् बोल्याकि छू तापनि ।
त्यो रिस् लक्ष्मणले कदापि नलिउन् येसो भनीथिन् भनी ॥
हात् जोरीकन विन्ति खुप् गरिदिया येती हुकुम् भो जसै ।
सब् वृत्तान्त सुनी बिदा पनि भयाँ फर्केर आयाँ तसै ।१४८।

माई सीत बिदा भई जब फिर्याँ मन्मा लहड् यो गयो ।
रावणलाइ नभेटि जाँ म कसरी भन्न्या विचार् यो भयो।
भेटी रावणलाइ अर्ति पनि दी फिर्नू असल् हो भनी ।
फर्की ध्वस्त गर्याँ अशोक वनको मार्याँ अनेक् वीर् पनि४९

कान्छो रावण-पुत्र अक्षय कुमार् मार्याँ र रावण् जहाँ ।
थीयो ताहि गयाँ भन्याँ हित वचन् टेरेन केही तहाँ ॥
गर्थ्यो बक्बक बात् अनेक् तरहका मैले भुसूनै गनी ।
रावण्कै अघि खाक् गरी सकिदियाँ पोलेर लङ्का पनि ।१५०।

येती कर्म गरी यहाँ हुजुरमा आयाँ म ऐले भनी ।
येती विन्ति गरी खडा भइ रह्याँ ताहाँ ति सेवक् बनी ॥
श्रीरामले पनि काखमा लिनुभया सर्वस्व दिन्छू भनी ।
बात्ले चित्त बुझाइ बक्सनुभयो सर्वस्व यै हो भनी ।१५१।

और पहले की कभी घटी हुई कौए सम्बन्धी घटना भी सुनायी । १४७ लक्ष्मण को अनेक अवाच्य वाक्य मैंने कहा है, इसके लिए उन्होंने हाथ जोड़ कर विनती की है कि वे उनसे क्रोधित न हों । फिर मैं आज्ञा लेकर विदा हुआ, और लौट कर आया हूँ । १४८ माता (सीता) से विदा लेकर चला तो मन में विचार हुआ कि रावण से भेंट किये बिना कैसे चलूँ । यह सोच कर कि रावण से भेंट कर उसे उपदेश देकर लौटना ही उत्तम होगा, मैं लौट गया और अशोक वन को उजाड़ डाला । अनेक वीरों को भी मौत के घाट उतार दिया । १४९ मैंने रावण के कनिष्ठ पुत्र अक्षयकुमार को मार डाला और रावण जहाँ था, वहीं वह पहुँचाया गया । वहाँ मैंने उसी के हित की अनेक बातें बतायीं, किन्तु उसने किसी बात पर भी ध्यान नहीं दिया । वह अनेक प्रकार की बातें बकता, किन्तु मैंने सबको भुनगा की तरह समझ कर समाप्त कर दिया । रावण के ही सामने उसकी लंका जलाकर राख कर डाली । १५० इन सब कार्यों को समाप्त कर अब आप की सेवा में उपस्थित हुआ हूँ । इतनी विनती

मैले खुश् भइ काख् दियाँ पनि भन्या फेर् दीनु बाँकी रती ।
केही चीज् रहँदैन सब् मिलि गयो यी बात् बताऊँ कति ।।
काखमा राखि हुकूम् भयो यति जसै खूशी हनूमान् भया ।
आनन्दाश्रु गिराइ भक्ति रसले हाजिर् हजूर्मा रह्या५२

धन्य हुन् इ हनुमान् यि सरीको ।
कोहि छैन अरु भक्त हरीको ।।
भक्ति खुप् गरि त काख् पनि पाया ।
लोकमा अधिक धन्य कहाया ।।१५३।।

जस्को पुजा तुलसि-पत्र चढाइ गर्छन् ।
उस्ता पनी त भवसागर-पार तर्छन् ।
ई ता उनै प्रभुजिका दुत हुन् त काहाँ ।
सक्नू छ वर्णन गरी यिनको त याहाँ ।।१५४।।

।। सुन्दरकाण्ड समाप्त ।।

करके सेवक बन कर हनुमान वहाँ खड़े हो गये। "सर्वस्व देता हूँ"— कहते हुए रघुनाथ ने हनुमान को गोद में बैठा लिया और समझाते हुए बोले कि यही सर्वस्व है। वे बोले कि प्रसन्न होकर अपनी गोद अर्पण कर देने के बाद मेरे पास कुछ नहीं शेष रहता। अतः तुम्हें सब प्राप्त हो गया, यह बात कहाँ तक बताऊँ ? गोद में रख कर जैसे ही (राम ने) यह आदेश दिया हनुमान आनन्द से ओतप्रोत हो गये—प्रेमाश्रु बहाते हुए वे (राम की) शरण में पड़े रहे। १५१-१५२ धन्य हैं यह हनुमान! हरि के भक्तों में इनके समान कोई नहीं। इसी भक्ति की शक्ति से ही उन्हें हरि की गोद प्राप्त हुई। इसी लिए वे जगत् में अधिक धन्य कहलाये। १५३ इनकी (हनुमान की) पूजा केवल तुलसी चढ़ा कर की जाती है। जो ऐसा करते हैं, वे लोग भवसागर पार तर जाते हैं। ये तो उन्हीं प्रभुजी के दूत हैं, अतः इनका पूर्णतया वर्णन कर सकना भी अत्यधिक कठिन है। १५४

।। सुन्दरकाण्ड समाप्त ।।

युद्ध काण्ड

लङ्कापुरी सकल खाक् गरि सैन्य मारी।
फेरी समुद्र सहजै तरि आइ वारी॥
सीताजिको जब सबै समचार् बताया।
श्रीरामले ति हनुमान्कन खुप् सह्राया॥ १ ॥

भन्छन् श्रीरघुनाथ् अहो इ हनुमान्- ले खुप् ठुलो काम् गऱ्या।
एक्लै गैकन रावणादि विरको सेखी इनैले हऱ्या॥
यत्रो क्षार समुद्र कूदिकन फेर् खाक् गर्नु लंका अनि।
को सक्ला सब डर्दछन् इ जति छन् इन्द्रादि द्यौता पनि॥२॥

सुग्रीव्का सब मन्त्रिमा इ सरिको होला न काही भया।
छोरो रावणको निभाइकन ता सामने उसैका गया॥
सेवक्ले जति गर्नुपर्छ तति सब् सेवा इनैले गऱ्या।
सीताको समचार् बतायर यहाँ हाम्रो ठुलो ताप् हऱ्या॥३॥

सम्पूर्ण लंकापुरी को राख करके तथा सेनाओं को समाप्त करके जब हनुमान पुनः समुद्र पार करके इस ओर श्रीराम के पास आये और सीता जी का सब समाचार बताया तो श्रीरामचन्द्रजी अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने हनुमान की भूरि-भूरि सराहना की। १ श्रीरघुनाथ जी कहते हैं, ओह! इस हनुमान ने अत्यन्त महान् कार्य किया है। वहाँ जाकर रावणादि वीरों का अहंकार इसने अकेले ही नष्ट किया है। इतने महान् और विस्तृत सागर को छलाँग मार कर पार करना, और फिर लंका को भस्म करना, दूसरा और कौन कर सकता है। इसी लिए ये इन्द्रादि जितने देवता हैं (उससे) सभी डरते हैं। २ सुग्रीव के सब मंत्री एवं भाइयों में इसके समान न कोइ हुआ है न होगा, जो रावण के पुत्र को मार कर उसी के समक्ष प्रस्तुत हुआ। सेवक को जो कुछ भी करना चाहिए वह सभी कुछ इसने किया। सीता का समाचार ला कर यहाँ इसने हमारे विषम तापों का हरण किया। ३ यह हनुमान महान्वीर है, तभी तो (इतनी सरलता से)

वीर् हुन् ई हनुमान् र कूदिकन गै कूदेर आया यहाँ ।
यो सागर् कसरी तरी म अहिले पौंचन्छु लंकामहाँ ॥
गैह्रो क्षार समुद्र यो छ बिचमा जलमा अनेक् जन्तु छन् ।
त्यो सागर् कसरी तरिन्छ भनि खुप् आत्तिन्छ मेरो त मन् ॥४॥
रावण्लाइ कसोरि मारुँ कसरी तारूँ म फौज् यो भनी ।
चिन्ता हुन्छ कसोरि पाउँछु अहो ! मेरी पियारी पनि ॥
राघव्का इ वचन् सुनीकन तहाँ सुग्रीव् अगाडी सरी ।
गर्छन् बिन्ति हजूरमा रघुपते ! क्या हुन्छ चिन्ता गरी॥५॥

यो फौज् वानरको ठुलो छ बलियो लड्न्या छ घूँडा धसी ।
अग्नीमा पनि पस्नु पर्दछ भन्या पस्न्या छ कम्मर् कसी ॥
सागर् तर्न उपाय मात्र त हवस् यो फौज जावस् तरी ।
रावण् मार्न कठिन् छ क्या सहजमा मारिन्छ येसै घरि ॥६॥
मेरो चित्तमहाँ त यो छ रघुनाथ् साम्ने हजूर्मा परी ।
लड्न्या वीर् कहिं छैन बिन्ति गरियो सारा तिनै लोक् भरी ॥
हाम्रो निश्चय जित् हुन्याछ बढिया देखिन्छ लक्षण् पनि ।
माछौं राक्षसलाइ आज सहजै साना भुसूना गनी ॥७॥

कूद कर गया और कूद कर आया भी है। यह सागर पार करके मैं किस प्रकार लंका पहुचूँगा। यह सागर अत्यधिक गहरा है, और जल के मध्य में अनेक जन्तु हैं। मेरा तो मन अत्यधिक घबरा रहा है, यह सागर कैसे पार किया जा सकेगा ! ४ मुझे यही चिन्ता हो रही है कि सेना को समुद्र-पार कैसे ले जाऊँ और रावण को कैसे मार डालूँ। अब मैं अपनी प्राणप्यारी प्रियतमा को पुनः कैसे प्राप्त कर पाऊँगा। राघव के इन दुःख-भरे वचनों को सुनकर सुग्रीव आगे बढ़ कर सेवा में विनती करते हैं—हे रघुपते ! चिन्ता करके क्या होगा। ५ ये वानरों की विशाल सेना है जो घुटने धँसा कर युद्ध करने में भी बलिष्ट है। इन्हें यदि अग्नि में भी कूदना पड़ेगा तो कमर कस कर कूद पड़ेंगे। केवल सागर पार करने का उपाय बताने की कृपा करें। ये सेना जब सागर पार हो जायेगी। रावण को मारना क्या कठिन है। इसी समय सहज ही में मारा जा सकता है। ६ रघुनाथ ! मेरे विचार में तो यही है। श्रीमन् के सम्मुख आकर तो लड़नेवाला वीर कहीं तीनों लोक में नहीं। मेरी यही विनती है, हमारी विजय निश्चय ही होगी। लक्षण भी शुभ प्रतीत होते हैं। हम राक्षसों को आज सहज ही में भुनगों के समान नष्ट कर

सुग्रीव्का इ वचन् सुनी हुकुम भो श्रीरामजीको तहाँ।
जुन् पाठ्ले त तरिन्छ सो गरियला कस्तो छ लंकामहाँ ॥
लङ्काको अकबाल् सुनौं त पहिले कस्तो छ तेस्को तखत् ।
सब् बूझीकन पो गया जितियला यै हो विचार्को बखत्॥८॥

ठाकुर्का इ वचन् सुनेर हनुमान् ताहाँ अगाडी सरी।
भक्तीले गरि अञ्जली पनि बहुत् न्यूह्रेर शिर्मा धरी ॥
गर्छन् बिन्ति जगत्पते ! रघुपते लंका पुरी सुन्दरी।
देखिन्छे जति देख्तछन् ति सबको लिन्छे सबै मन् हरी ॥९॥

त्रीकुट् पर्वतका उपर् छ सुनको पर्खाल् छ चारौं तरफ्।
थामै छन् मणिका जउन् घरमहाँ देखिन्छ तिन्को हरफ् ॥
एक् खावा त समुद्र भो अरु नजीक् अर्को खन्याको पनि।
पर्खाल्का नजिकै छ बेस् वरिपरी वैरी नआउन् भनी ॥१०॥

घर पनि सुनकै छन् गल्लि जो छन् सुनैका।
मणिजडित हुनाले झन् असल् छन् कुनैका ॥
घुमि घुमिकन हेर्‍याँ सब् बगैचा तलाऊ।
सहज सित कसैको केहि लाग्दैन दाऊ ॥११॥

डालेंगे। ७ सुग्रीव के इन वचनों को सुनकर श्रीराम की आज्ञा हुई कि जिस उपाय से समुद्र पार हो जाने की सम्भावना है वही किया जाएगा। पहले यह बताओ कि लंका में क्या दशा है, वहाँ का वर्णन तो सुनें कि वहाँ की राजगद्दी कैसी है। सब समझ-बूझ कर ही जाने से तो विजय प्राप्त होगी। यही विचार करने का समय है। ८ प्रभु के इन वचनों को सुनकर हनुमान आगे बढ़े और भक्तिपूर्वक पर्याप्त अंजली अर्पित की, तथा मस्तक में लगाते हुए विनती करने लगे—जगत्पते ! रघुपते ! लंकापुरी की सुन्दरी अत्यन्त सुन्दर दिखाई देती है और जितना देखती है सब के मन को मुग्ध कर लेती है। ९ त्रिकूट पर्वत के ऊपर चारों ओर सोने की दीवार है। जिन घरों में मणि के मन्दिर हैं उन्हीं पर उनके लेख दिखाई देते हैं। एक स्तम्भ तो समुद्र और दूसरा समीप ही में खड़ा हुआ है। दीवार के निकट चारों ओर खाई है, जिससे शत्रु न आ जाय। १० वहाँ के घर तथा मार्ग सभी सोने के हैं। कहीं-कहीं तो मणिजटित होने के कारण अत्यन्त रमणीक हो गया है। मैंने घूम-घूम कर चारों ओर सारे बगीचे तथा तालाब देख लिए हैं। सरलता से वहाँ प्रवेश होने का किसी को अवसर नहीं मिलता। ११ नगर के चार द्वार हैं, कहीं वीरों की विशाल सेना तत्पर

ढोका छन् चार् शहर्का तहिं विरहरुको फौज् छ ठूलो बस्याको ।
जो ताहाँ पस्न जाला उ सित तहिं लडी मर्न कम्मर् कस्याको ॥
एक् अर्बुद् पूर्व ढोकातिर अति बलवान् जङ्गि पाले बस्याको ॥
राक्षस् छन् हात्ति घोडा रथ अरु खजना ली खडा भै रह्याका॥१२।

ढोकैपिच्छे यसै रीत्सित खडि पहरा छन् सदा नित्य ताहाँ ।
येती जम्मा छ फौज् सब् भनिकन त खबर् पाइसक्नू छ काहाँ ॥
यस्तो मज्बूतिको फौज् छ तपनि उहि फौज् ध्वस्त चौथाइपारर्याँ ।
लंका पोलेर सब् खाक् गरिकन सहजै वैरिको सेखि झार्‍याँ ॥१३॥

यहिं ढिल किन स्वामित् ! जाउँ सागर् छ जाहाँ।
कछु ढिल तहिं होला तर्नुपर्न्या छ ताहाँ ॥
यति विनति हनूमान्ले गर्‍याथ्या जसै ता ।
हुकुम पनि ति सुग्रीव्लाइ भैगो यसै ता ॥ १४ ॥

हे सुग्रीव सखे ! असल् विजय यो मूहूर्त ऐले पर्‍यो ।
यस् सायेतमहाँ मुहूर्त नचुकी जस्ले त साइत् गर्‍यो ॥
तेस्ले जित्छ अवश्य यै बखतमा सायेत फौज्ले गरून् ।
मेरो दक्षिण नेत्र फुर्छ बढ़िया लक्षण् छ धीरज् धरून्।१५।

हैं, जो भी वहाँ जाएगा उससे लड़कर मार डालने के लिए कमर कसे हुए हैं। पूर्व की ओर जो द्वार है वहाँ एक बलवान जंगी द्वारपाल है। राक्षसगण, हाथी, घोड़ा, रथ एवं ख़ज़ाने लेकर खड़े हैं। १२ इसी प्रकार प्रत्येक द्वार पर सदैव पहरेदार खड़े रहते हैं। वहाँ की सेना के सैनिकों की संख्या ज्ञात करना भी सम्भव नहीं है। ऐसी बलिष्ठ सेना है, फिर भी उसका चौथाई भाग का तो ध्वंस कर दिया और समस्त वीरों के घमण्ड को चूर कर आया हूँ। १३ स्वामी ! अब यहाँ विलम्ब क्यों कर रहे हैं। सागर की ओर चलिए, भले ही वहाँ कुछ लोगों को उतारने में कुछ विलम्ब हो जाये। हनुमान के विनती करते ही सुग्रीव को आदेश दे दिया गया। १४ हे मित्र सुग्रीव ! यही वास्तविक विजय के शुभ मुहूर्त का अवसर है। इस अवसर को व्यर्थ गँवाये बिना जो कार्य करता है वह अवश्य ही विजय प्राप्त करता है। मेरा तो दक्षिण नेत्र फड़क रहा है, यह उत्तम लक्षण है। यदि इस शुभ अवसर को सेनाएँ हाथ से न जाने दें, तो हमें अवश्य ही विजय की प्राप्ति होगी। १५ वानरसेना लंका में प्रस्थान करके लंका पर आक्रमण कर दे तथा रावण को वंश-सहित नष्ट

रावण्लाइ कुलैसमेत् क्षय गरी ल्याइन्छ सीता पनि ।
वानर्को जति फौज् छ सब् अब चलोस् ठोकिन्छ लंका भनी ।।
लक्ष्मण् अंगदमा चढून् दुइ जना हामी हनूमान् महाँ ।
सुग्रीव्लाइ यती हुकूम दिइ गर्‍या प्रस्थात् प्रभूले तहाँ ।।१६।।
राम् सुग्रीव् हनुमानमा चढि चल्या लक्ष्मण्जि अंगद्महाँ ।
वानर्को सब फौज् चल्यो पृथिवि सब् डग्मग् गराई तहाँ ।।
चाहींदैन रसद् सबैं विरहरू खान्छन् फलैफूल् फकत् ।
गर्जन्छन् सब वीर्हरू तस बखत् सब् काम्न लाग्यो जगत् १७
रात्दिन् फौज चल्यो टिकेन बिचमा काहीं कतैं एक् घरि ।
विन्ध्याचल्कन नाघि फेरि मलया- चल् नाघि यस्तैं गरी ।।
पौंच्या क्षार समुद्रका तिरमहाँ डेरा प्रभूको पर्‍यो ।
वानर्को त्यति फौजले खचित भै सारा किनारा भर्‍यो ।१८।
वानर्को सब फौज् तहाँ हुकुमले तिर्मा जसैं ता बस्यो ।
सागर् तर्न उपाय केहि नहुँदा मन्मा ठुलो ताप् पस्यो ।।
भन्छन् वीर्हरु यो कसो गरि तरौं साह्रै कठिन भो यहाँ ।
यो सागर् नतरी त जान नहुन्या हींडेर लंकामहाँ ।।१९।।

करके महारानी सीता को स्वतन्त्र करें। लक्ष्मण अंगद की सहायता लें और हम दोनों हनुमान की सहायता लेंगे। सुग्रीव को यह आज्ञा दे कर प्रभुने भी वहाँ से प्रस्थान किया। १६ राम-सुग्रीव, हनुमान के ऊपर सवार हुए तथा लक्ष्मण अंगद पर सवार हुए और इस प्रकार लंका-विजय के लिए सम्पूर्ण बानरसेना को लेकर चल पड़े। वानरों के प्रस्थान करने पर उनकी भीड़ से समस्त पृथ्वी ढक गई। रसद की कोई आवश्यकता ही न थी, क्योंकि सभी वीर फल-फूलादि खा कर ही दिन पार कर सकते थे। सारे वीर गर्जते हुए जा रहे थे। उनके गर्जन से समस्त भू-मण्डल काँप उठा। १७ सेना सारी-रात, सारा-दिन चलती रही, क्षणभर को भी कहीं नहीं रुकी। विंध्याचल और फिर मलयाचल को लाँघते हुए इसी क्रम से सब लोग क्षीरसागर के किनारे पहुँचे और वहीं प्रभु ने पड़ाव डालने की आज्ञा दी। वानरों की असंख्य सेना से समुद्र-तट खचाखच भर गया। १८ आज्ञा पाकर एक-एक कर सभी लोग किनारे बैठ गए और सागर पार करने का उपाय सोचने लगे। कोई उपाय समझ में न आया तो वे गहरी चिन्ता तथा ताप से भर गए। वीरजन कहते हैं कि इस सागर को किस प्रकार पार किया जाए, यह तो अत्यन्त कठिन समस्या उत्पन्न हो गई है। अन्य कोई ऐसा मार्ग भी नहीं

सब् राक्षस्‌कन मार्दथ्यौं यहि बखत् सागर् तरी पार् गया ॥
आपस्‌मा यति बात् परस्पर गरी जम्मा प्रभूथ्यैं भया ॥
सीताजीकन संझि संझि रघुनाथ् ज्ञानै स्वरूपी पनि ।
लाग्या गर्न विलाप् अनेक् तरहले सीते ! कहाँ छौ भनी ।२०।

राम्‌को नाम फगत् लिन्याकन पनी सब् दुःख ताप् टर्दछन् ।
आफै श्रीरघुनाथलाइ पनि क्या सन्ताप् कतै पर्दछन् ॥
सच्चित् रूप् परिपूर्ण अद्वितिय एक् आत्मा स्वरूपी पनि ।
गर्छन् मानुष भैं लिला पनि अनेक् सुक्खी र दुक्खी बनी ।२१।

कुदि कुदि सब लङ्का पोलि फेर् पुत्र मारी ।
बहुत विरहरूको सैन्य खुप् ध्वस्त पारी ॥
गरिकन सब भेट्घाट् फेर हनुमान् फिर्‍याको ।
सुनिकन तहिं रावण् भै गयो नूर् गिर्‍याको ॥ २२ ॥

उहि बखतमहाँ त्यो मन्त्रणा गर्नलाई ।
सब विरकन ताहाँ डाकन जल्दी पठाई ॥
वरिपरि सब राखी मन्त्रिथ्यैं भन्न लाग्यो ।
कसरि सहज उम्‌की त्यो हनूमान भाग्यो ॥ २३ ॥

अब त जसरि मेरो हुन्छ सो हित् चिताऊ ।
बुझिकन सबले एक् मन्त्रणा लौ बताऊ ॥

जिससे पैदल चलकर ही लंका पहुँच जाए । १९ इसी समय किसी प्रकार सागर पार कर पाते तो सभी राक्षसों को मार डालते । परस्पर इसी प्रकार का विचार-विमर्श करते हुए सब लोग प्रभु के पास एकत्रित हो गए । सीताजी को बारम्बार स्मरण करके ज्ञान-सागर श्रीरघुनाथजी भी, 'सीते कहाँ हो !' कहते हुए विलाप करने लगे । २० सच्चिदानन्द-रूपी होकर भी मनुष्य के समान अनेक प्रकार से सुखी एवं दुखी बन कर वे लीलाएँ करते हैं, परन्तु वास्तव में, राम का तो केवल नाम लेने से ही सारे दुःख-संकट टल जाते हैं । २१ रावण को समाचार मिला कि हनुमान ने कूद-कूद कर सम्पूर्ण लंका को जला डाला है । उसके पुत्र को मार कर अनेक वीरों की सेना को ध्वस्त करके, सीता से भेंट करके, पुनः हनुमान लौट गया है तो वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गया । २२ उसी समय विचार-विमर्श करने के लिए सब वीरों को बुलावा भेजा । सब को चारों ओर बैठा कर रावण मंत्रियों से कहने लगा कि हनुमान इतनी सरलता से बच कर किस प्रकार भाग निकला । २३ अब तो किसी प्रकार मेरे हित का कोई उपाय

तिमि सबकन नाघी काम सिद्ध्याइ भाग्यो ।
मकन त हनुमान्का कामले लाज लाग्यो ॥ २४ ॥
यति हुकुम सुनी सब् घोचिया झैं ति जाग्या ।
अगि सरि सरि बिन्ती सेखिको गर्न लाग्या ॥
किन बहुत हजूर्को तेहि राम्देखि शंका ।
कसरि सहज जित्ला रामले आज लंका ॥ २५ ॥
कति बिनति गरौं धेर् इन्द्रजित् पुत्र जस्को ।
छ त कसरि ति जित्छन् पुग्छ जोर् आज कस्को ॥
फकत हजुरका एक् पुत्रले इन्द्र जीत्या ।
यहि बुझि अरु दिक्पाल्का समेत् सेखि बीत्या ॥ २६ ॥
अधिपति मय हुन् सब् दैत्यका सो डरैले ।
खुरुखुरु यहिं आई छोरि सुम्प्या करैले ॥
अरु अब कहिं छन् क्या वीर् हजुर्का सरीका ।
सब विर वशमै छन् ई तिनै लोक्भरीका ॥ २७ ॥
अलिकति हनुमान्ले जो यहाँ वीर भाग्यो ।
कुदि कुदि सब लङ्का पोलि जो ध्वस्त पाऱ्यो ।

निकालो और सब लोग सोच-समझ कर अपना-अपना विचार प्रकट करो । तुम सबके देखते-देखते आगे निकल कर अपना कार्य समाप्त करके भाग गया । मुझे तो हनुमान की इस कार्य-कुशलता पर बड़ा क्षोभ हो रहा है । २४ रावण के यह वचन तथा आदेश सुनकर सब के हृदय में एक चुभन सी हुई । वे सब बारी-बारी से आगे बढ़-बढ़ कर अपने अहंकार को प्रगट करते हुए इस प्रकार बोले—श्रीमन् ! उस राम से क्यों इतने भयभीत हैं ? आज लंका पर विजय प्राप्त करना राम के लिये सरल नहीं होगा । २५ अधिक विनती क्या करूँ । आपका तो पुत्र इन्द्रजीत है, जिसने अकेले ही इन्द्र पर विजय प्राप्त की है । ऐसे पराक्रमी के सामने अन्य दिग्पालों का घमण्ड भी चूर हो गया, तो राम किस प्रकार टिक पायेगा । २६ समस्त दैत्यों ने भयभीत होकर, सीधे यहाँ आ कर विवश हो आत्मसमर्पण कर अपनी पुत्री आपको सौंप दी । हे श्रीमन् ! क्या अब भी आपके समान कहीं अन्य कोई वीर है ? तीनों लोक के समस्त वीर आपके वश में हो चुके हैं । २७ हनुमान अकेला था । वह अकेला क्या कर लेगा, यही सोच कर हम लोग चूक गए और वह कूद-कूद कर सम्पूर्ण लंका को भस्म कर गया । जो कुछ भी तहस-नहस वह कर गया

उ त फकत यसैले गर्न क्या सक्छ भन्दा ।
चुकिदियौं गरिहाल्यो फेरिको क्या छ धन्दा ।। २८ ।।
हुकुम दिनुहवस् लौ दश् दिशा वीर जाऊँ ।
जति जति अगि सर्छन् मारि तिन्लाइ आऊँ ।।
सकल पृथिविमाका वानरै छुट्टि गर्छौं ।
सकल हजुरको ताप् एक क्षण्मा त हर्छौं ।। २९ ।।

येती गर्व गरी सबै ति विरले बिन्ती गर्‍याको सुनी ।
मेरो मत् पनि बिन्ति गर्दछु भनी आफ्ना मनैले गुनी ।।
गर्छन् विन्ति ति कुम्भकर्ण विरले हे नाथ् लियौ क्या मति ।
सीता क्यान हर्‍यौ चुक्यौ तिमि यहाँ कुन् हुन्छ तिम्रो गति ।३०।
श्रीराम्चन्द्रजिले अवश्य अघि नै देख्थ्या त एक् बाण् धरी ।
तिम्रा प्राण लिन्या थिया तहिं कहाँ बाँच्थ्यौ तिमी एक् घरि ।।
सीता चोरि गर्‍यौ र पो तिमि बच्यौ को टिक्छ साम्ने परी ।
तेस्को फल् सब पाउँछौ अब भन्या मार्छन् कुलै साफ्गरी ।३१।
राम् जो हुन् प्रभु ई अनन्त अधिनाथ् चौधै भुवन्का धनी ।
लक्ष्मी हुन् जगदम्बिका इ यिनकी पत्नी सिताजी पनि ।।

वह केवल इसी कारण हुआ कि हमें उसकी ऐसी फ़ुर्तीली कार्य-कुशलता का अनुमान नहीं था। अब आगे इस प्रकार के भय की कोई आशंका नहीं। अब हम सब पूर्णतया उसका सामना करने योग्य हैं। २८ आज्ञा देने की कृपा करें। दशों दिशाओं को सारे वीर चले जायें और जो-जो शत्रु सम्मुख पड़ता जाये उसे मार आएँ। इस प्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी के समस्त वानरों का सफ़ाया हो जायगा। हम सब मिल कर श्रीमन् के सकल तापों का हरण कर लेंगे। २९ उन सब वीरों द्वारा की गई गर्वपूर्ण विनती को सुनकर कुम्भकर्ण मन में विचार करते हुए कहता है—हे नाथ! आपने कैसी मति को धारण किया। सीता का अपहरण क्यों किया। आपने यहाँ पर बड़ी चूक कर दी है। अब पता नहीं आपकी क्या गति होगी। ३० यदि श्रीरामचन्द्र जी ने पहले ही देख लिया होता तो अवश्य ही उसी समय उनके एक ही बाण के प्रहार से आपके प्राण चले जाते; फिर आप कहीं एक क्षण के लिए भी जीवित न दिखाइ देते। आपने सीता का हरण चोरी से किया है, इसी लिए अभी तक जीवित हैं। उनके सामने पड़ने से कौन टिक सकेगा, इसका परिणाम आप अब भोगोगे। अब तो, श्रीरामचन्द्र जी आपको वंश-सहित मार डालेंगे। ३१ राम चौदह

सब् राक्षस्हरु नाश् गराउन यहाँ सीता तिमीले हर्‍यौ।
साँचा हुन् इ कुरा अवश्य तिमिले आफनै बहुत् नाश् गर्‍यौ ३२
जुन् काम् गर्नु उचित् थियेन उहि काम् ऐले गर्‍यौ तापनि।
सब् हाम्रा भरले गर्‍यौ अधिक वीर् छन् भाइ छोरा भनी॥
लड्छौं निश्चय भाइ वर्ग पनि सब् हामी जती छौं यहाँ।
स्वस्थै भैं रहनू हवस् हजुरले शोक् गर्नुपर्ला कहाँ।३३।

तेस् कुम्भकर्ण विरले सब यो भन्याको।
श्री रामलाइ परमेश्वरमा गन्याको॥
सून्यो र इन्द्रजित भन्छ हुकूम् म पाऊँ।
सेना समेत सहज राम्कन मारि आऊँ॥ ३४॥
यस्तै तहाँ विरहरू सब बिन्ति पार्थ्या।
केवल् गफै गरि मुखै तरवार मार्थ्या॥
श्रीरामभक्त ति विभीषण ताहिं आई।
बिन्ती गर्‍या वहुत हित् मनले चिताई॥ ३५॥
श्रीरामजीसित विरोध् किन हो गर्‍याको।
सीताजिलाइ तिमिले किन हो हर्‍याको॥

भुवन के स्वामी हैं, अनन्त अधिनाथ प्रभु हैं। उनकी पत्नी सीता, जगदम्बिका लक्ष्मी हैं। सारे राक्षसों का नाश कराने के लिए ही आपने सीता का हरण किया है। ये बातें सत्य हैं, आपने निश्चय ही अपनी बड़ी भारी हानि को स्वयं निमंत्रण दिया है। ३२ जो कार्य करना उचित नहीं था उसे भी आपने किया, केवल हम लोगों के भरोसे पर। भाई और पुत्रादि अत्यन्त वीर हैं, लड़ेंगे ही। श्रीमन् अब आप शान्त हो जाएँ। शोक क्यों करते हैं, धैर्य धारण करने की कृपा करें। ३३ उस वीर कुम्भकर्ण की सब बातों को तथा श्रीराम को परमेश्वर की श्रेणी में गिनने की बात को सुन कर इन्द्रजीत ने कहा, मुझे आज्ञा हो! मैं राम को उनकी सेना सहित सहज ही में अभी मार कर चला आऊँ। ३४ इसी प्रकार वहाँ पर समस्त वीर-केवल वाक् प्रहार कर रहे थे। लेकिन श्रीराम के भक्त विभीषण ने वहाँ आकर मन में शुभकामनाएँ कीं और कई प्रकार की विनती की। ३५ श्रीरामभक्त विभीषण ने रावण से पूछा कि ऐसे महाबली श्रीराम, जिसने कि खर, त्रिशिर और दूषण जैसे बलिष्ट वीरों को मार डाला है, उसके सामने कोई विजय नहीं पा सकता है। अतः ऐसे पराक्रमी से विरोध कैसा, और आपने सीताजी का हरण क्यों किया? ३६

श्रीरामचन्द्रकन सक्तछ जित्न कस्ले ।
मान्या खर त्रिशिर दूषण वीर जस्ले ॥ ३६ ॥

ठूला भन्नु इ कुम्भकर्ण विर हुन् क्या चल्छ इन्को पनि ।
सेखी गर्दछ इन्द्रजित् नबुझि यो राम्लाइ मार्छू भनी ॥
सेखी गर्न जती छ सब् यहि गरून् को टिक्छ साम्ने परी ।
सब् राक्षस्हरु नाश् हुनन् जब तहाँ चेत्नन् चुक्याको घरी ।३७।

सीताजी ग्रहतुल्य भैकन सबै खाक् गर्न आँटिन् यहाँ ।
यो प्राणान्त बखत् भयो अझ पनी चेत् छैन चेत् गो कहाँ ॥
बाँच्नाको यदि मन् छ पो त महाराज्! श्रीरामजीथ्यैं गई ।
सीता सुम्पिदिनू यही बखतमा सोझो र साम्ने भई ।३८।

श्रीराम्चन्द्रजि फौज् लिइकन यहाँ आई नलड्दै गया ।
आयो आज शरण् पर्‍यो भनि बहुत् गर्नन् प्रभूले दया ॥
चाँडै आज सिताजि सुम्पनुहवस् सीताजि लंका रही ।
बाँची सक्नु कदापि छैन अरुथ्यैं काहीं शरण्मा गई ॥३९॥

हित् अमृत् सरिको विभीषणजिको सून्यो वचन् यो जसै ।
लिन्थ्यो त्यो इ कुरा कहाँ अधिक झन् रावण् रिसायो तसै ॥

कुम्भकर्ण कैसा ही बहादुर वीर क्यों न हों। श्रीराम के समक्ष उसकी भी कुछ नहीं चलेगी। इन्द्रजीत भी राम को मारने का व्यर्थ अभिमान कर रहा है। जितनी डींग मारनी हो यहीं मारलो, प्रभु के सामने कोई भी नहीं टिक पायेगा। समस्त राक्षणगण नष्ट हो जाने पर बीते अवसर के लिए पश्चाताप करेंगे। ३७ सीताजी ग्रह-तुल्य हो कर यहाँ पर सब खाक करना चाहती हैं। अब प्राणान्त का समय हो चुका है। सबकी चेतना कहाँ लुप्त हो गयी है ? अतः किसी को चेतना नहीं है। विभीषण रावण से कहता है कि महाराज, यदि जीवित रहना है तो यही अवसर है कि आप श्रीराम के पास जाकर सीता जी को उन्हें सौंप दें। ३८ श्रीरामचन्द्र जी सेना लेकर यहाँ आ पहुँचें, इससे पहले ही यदि आप शीघ्र जाकर आज ही सीता जी को उन्हें सौंप दें, तो यह जानकर कि यह शरण में आया है, वे अत्यन्त दया प्रदर्शित करेंगे। सीताजी के लंका में ही रहने से आप सभी लोगों का जीवित रहना कठिन है। ३९ जैसे ही विभीषण की अमृत-बाणी रावण ने सुनी, वैसे ही उस बात को महत्व देने के बजाय उसको क्रोध आ गया। अत्यन्त ही क्रोधित होने पर उसने लोगों से कहा कि आज यह हमारा शत्रु बन गया है तथा इसे रामचन्द्र के प्रति श्रद्धा

लाग्यो भन्न रिसाइ आज सुन यो शत्रू सरीको भयो।
मेरा शत्रु ति रामचन्द्र सित खुप् प्रीत् बस्न यस्को गयो।।४०।
आफ्नै ज्ञाति बढ्यो भन्या अरु सबै ज्ञाती गिरोस् यो भनी।
भन्छन् निश्चय भन्दथ्या उहि छटा यस्ले जनायो पनि।।
ऐले मारिदिन्या थियाँ अरु भया भाई भयो क्या गरूँ।
राक्षस्का कुलमा अधम् यहि भयो धिक्कार दिन्छू बरु।।४१।।
मेरो आज नजीकमा रहनको लायक् तँ छैनस् भनी।
धिक्कार् हो तँ अधम् भइस् भनि बहुत् धिक्कार दीयो पनि।।
धिक्कार्को यति बात् सुन्या र झटपट् श्रीराममा मन् दिई।
आकाश्मा झटपट् कुदीकन गया चार् मंत्रि साथ्मा लिई।४२।
लाग्या रावणलाइ भन्न महराज् ! हीतै भन्याँ तापनि।
धिक्कारै तिमिले गन्यौ नबुझि झन् शत्रू त हो यो भनी।।
दाज्यू हौ पितृ तुल्य छौ यति सही ऐले फरक् लौ भयाँ।
खूशी भै तिमि राज् गन्या म त उनै राम्का शरण्मा गयाँ।।४३।।
काली हुन् जगदम्बिका भगवती सीताजि राम् काल हुन्।
भूभार् हर्ननिमित्त यो छ अवतार् बाँच्न्या छ पापी कउन्।।

उत्पन्न हो गयी है। ४० अपने ज्ञान को देख कर दूसरों के ज्ञान का आभास हो जाता है, ऐसा निश्चय ही कहा जाता था, ठीक उसी प्रकार लक्षण इसने भी दिखाये। राक्षसवंश में यही एक अधम उत्पन्न हुआ है। यदि मेरे स्थान पर कोई और होता तो इसे अभी समाप्त कर देता। लेकिन क्या कर सकता हूँ, अपना ही भाई तो है। ४१ अत्यन्त ही क्रोधित होने के कारण रावण ने विभीषण को धिक्कारते हुए कहा, तुम मेरे साथ रहने के योग्य नहीं हो और अधम हो। रावण के मुख से ऐसी बात सुनकर विभीषण ने श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान किया और चार मंत्रियों को लेकर वहाँ से चला गया। ४२ विभीषण ने रावण से कहा कि महाराज ! हित की बात कहने पर भी आपने मुझ पर व्यर्थ ही क्रोध किया। आप मेरे भाई है और बड़ा भाई पिता के तुल्य होता है, यह ठीक है। लेकिन अब कुछ भी नहीं हो सकता। अब आप प्रसन्नचित्त होकर अपना राज्य चलायें, और मैंने तो अब श्रीरामचन्द्रजी की शरण स्वीकार की है। ४३ महारानी सीता जी काली, जगदम्बिका तथा भगवती का रूप हैं और श्रीराम काल हैं। वे भू-भार को हरने के लिए ही इस संसार में अवतरित हुए हैं; ऐसे प्रभु से कौन पापी अपनी जान बचा सकेगा। श्रीराम ने

श्रीराम्को मतलब् छ मार्न तब पो फिर्दैन तिम्रो मति ।
काल्रूप् श्रीरघुनाथको अरु यहाँ को बुझ्न सक्छन् गति ।४४।
सब् राक्षस्कुलको हुन्या छ अब नाश् छोड्छन् प्रभूले कहाँ ।
तिम्रा नाश् कसरी म देखुँ म त लौ जान्छू प्रभू छन् जहाँ ।।
खूशी भै चिरकाल तक् गर यहाँ राज्खुप् चिरायू भया ।
येती बिन्ति गरी विभीषण सबै छाडेर राम्थ्यैं गया ।४५।

चार् मन्त्रीसँग ली विभीषण गया श्रीरामका पासमा ।
वाहाँ जान डराइ सम्मुख भया टाढै ति आकाशमा ।।
हेनाथ् ! आज शरण् पर्‍याँ चरणमा आयाँ म सेवक् भनी ।
उच्चा शब्द गरी गर्‍या विनति खूप् वृत्तान्त आफ्नू पनि ।।४६।।

हे राम् ! रावण कुम्भकर्ण विरको भाई विभीषण् म हूँ ।
रावण् आज अधम् भयो हजुरमा बिस्तार् कहाँ तक् कहूँ ।।
सीता क्यान हर्‍यौ फिराउ भनि खुप् हीतै भन्याँ तापनि ।
झन् धिक्कार् गरि खड्ग लीकन उठ्यो काट्छू तँलाई भनी ।।४७।।

यस्तो रावणले गर्‍यो र रघुनाथ् आयाँ हजूर्मा म ता ।
संसार् पार् सहजै उतार्छ जसले सो छोडि जाऊँ कता ।।

तुम्हारा नाश करने के लिए ही जन्म लिया है, इसी कारण से तुम्हारी मति में कोई परिवर्तन नहीं होता है । अतः काल-रूपी श्रीरघुनाथ की गति को यहाँ कौन समझ सकता है ? ४४ अब तो वे समस्त राक्षस-वंश का समूल नाश कर डालेंगे । लेकिन तुम्हारा नाश होते हुए मैं कैसे देख सकूँगा, इसलिए मैं तो भगवान श्रीरामचन्द्रजी की शरण में जाता हूँ । तुम प्रसन्न होकर राज्य सँभालो और चिरायु रहो । ऐसा कह कर विभीषण सब कुछ त्याग कर राम के पास चला गया । ४५ चार मंत्रियों को साथ लेकर विभीषण श्रीरघुनाथ के पास चला गया । वहाँ जाने से भयभीत होकर आकाश में ही दूर सम्मुख हुआ और अपना वृत्तान्त सुनाते हुए विभीषण ने श्रीराम से विनती की कि हे नाथ ! मैं आपका ही सेवक हूँ और आज आपकी शरण में आ गया हूँ । ४६ विभीषण ने राम से अपना वृत्तान्त सुनाते हुए कहा कि हे प्रभु ! मैं लंका के राजा रावण का भाई हूँ । वह आज अधम हो गया है, मैं कहाँ तक उसकी सेवा करता रहूँ । 'सीता को क्यों हरण किया? उसे श्रीराम को वापस सौंप दो', जब मैंने उससे ऐसा कहा तो वह क्रोधित हो-कर मुझ पर खड्ग लेकर प्रहार करने के लिए दौड़ा और मुझे तरह-तरह से धिक्कारा । ४७ जब रावण

यस्तो बिन्ति सुन्या विभीषणजिको सुग्रीव्‌जीले जसै ।
रावण्‌कै छल झैं बुझ्या र झटपट् बिन्ती गऱ्या यो तसै ॥४८॥

विश्वास् नमान्नु रघुनाथ ! इ त दुष्ट पो हुन् ।
गर्नन् इ औसर पऱ्या हुँदि जीयमा खुन् ॥
मर्जी हवस् इ सब पक्‌डि निभाइ हालुम् ।
भाई म हूँ पनि भन्यो उ छँदै छ मालुम् ॥ ४९ ॥

विश्वास् कत्ति नमानि बक्सनुहवस् सब् दुष्ट पो हुन् इता ।
रावण्‌ कै यदि भाइ हो त किन ढील् मारौं-न भन्छू म ता ॥
जैले पर्दछ छिद्र उस् बखतमा मार्नन् इ दागा गरी ।
मार्नालाइ हुकूम् हवस् सहजमा मारिन्छ येसै घरि ॥५०॥
मेरो मत् बिनती गऱ्याँ हजुरको क्या मत् छ स्वामित् भनी ।
सुग्रीव्‌को बिनती सुनेर रघुनाथ् हाँसेर बोल्या पनि ॥
हे सुग्रीय सखे ! म आटुँ न सबै लोक् ध्वस्त ऐले गरी ।
फेर् सृष्टी क्षणमा गरूँ सहजमा लाग्दैन एक्‌काल् घरि ।५१।

ने मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया, तो हे रघुनाथ ! मैं आपकी शरण में आ गया और अब आपकी ही सेवा करने की इच्छा है । जो प्रभु संसार को तारनेवाले हैं उस प्रभु को छोड़कर मैं और किसकी शरण में जाऊँ । विभीषण की ऐसी विनती सुनकर सुग्रीव ने भय के कारण श्रीराम से विनती की । ४८ सुग्रीव श्रीराम से विनती करते हुए कहने लगे, "हे रघुनाथ ! यह तो दुष्ट है । इस पर आप जरा भी विश्वास न करें । कहीं ऐसा न हो कि अवसर पाते ही आक्रमण कर दे । अपने को रावण का भाई बताता है और लगता भी ऐसा ही है । आज्ञा दें तो मैं अभी इन सब को पकड़ कर समाप्त कर डालूँ । ४९ हे रघुनाथ, आप किंचित्‌मात्र भी इसका विश्वास न करें । यदि रावण का ही भाई है तो फिर इसका नाश करने में विलम्ब कैसा । कोई अवसर मिलने पर उस अवसर का लाभ उठाकर ये हम पर आक्रमण कर दें, इससे पहले ही आप मारने की आज्ञा दें, जिससे इसका सहज ही नाश कर दिया जाय । ५० मेरा तो यही विचार है, हे प्रभु ! आपका क्या मत है ।" सुग्रीव की विनती सुनकर श्रीरामचन्द्र जी हँसकर बोले, "हे मित्र सुग्रीव ! यदि मैं चाहूँ तो अभी सारी सृष्टि ध्वस्त कर डालूँ और चाहूँ तो क्षण में ही पुनः सृष्टि निर्माण कर लूँ । ऐसा करने में तो कुछ भी समय नहीं लगेगा । ५१ अपना भक्त समझ कर विभीषण को अन्दर आने की अनुमति दे दो ।

तस्मात् भक्त बुझेर निर्भय दियाँ आउन् यि ल्याऊ यहाँ।
उस् साथी पनि शत्रुदल् यदि भया मार्थ्यां म छोड्थ्याँ कहाँ ॥
शत्रूका इ त ओरि हुन् तर पनी आया शरण्मा यहाँ।
मेरा आज शरण् पऱ्या पनि भन्या तिन्लाइ छोड्छू कहाँ।५२।

एकै बखत् पनि शरण् भनि जो मलाई।
संझेर पर्दछ शरण् त म तेसलाई ॥
लिन्छू शरण् यदि उ शत्रु हवस् दयैले।
मेरो व्रतै छ यहि छोड्छु कसोरि ऐले ॥ ५३ ॥

श्रीराम्चन्द्रजिको हुकूम् यति हुँदा ल्याया विभीषण् पनि।
पौंचाया रघुनाथका हजुरमा ल्याई इनै हुन् भनी ॥
श्रीराम्चन्द्रजिको विभीषणजिले पाया र दर्शन् तहाँ।
खुप् साष्टांग गरी प्रणाम् पनि गऱ्या पस्रेर पृथ्वीमहाँ ॥५४॥

दर्शन् श्रीरघुनाथको जब मिल्यो खूशी विभीषण् भया।
जो ती दुःख थिया विभीषणजिका ताहीं तुरुन्तै गया ॥
सर्वात्मा रघुनाथको स्तुती गऱ्या ईश्वर इनै हुन् भनी।
सर्वात्मा रघुनाथ् स्तुती सुनि बहुत् खूशी हुनूभो पनि ॥५५॥

क्या माग्छौ वर माग दिन्छु म भनी हूकूम् भएथ्यो जसै।
भक्ती मात्र थियो वहाँ मनमहाँ त्यो भक्ति माग्या तसै ॥

यदि विभीषण के साथ शत्रु दल भी होते तो मैं उन्हें अवश्य मार डालता, छोड़ क्यो देता। शत्रु के तो ये सम्बन्धी हैं, तथापि मेरी शरण में आये हैं। जब मेरी शरण में आ पड़ते हैं तो मैं भी उन्हें छोड़ूंगा कहाँ? ५२ श्रीराम ने बताया कि मुझे स्मरण करके जो भी एक बार मेरी शरण में आ जाता है उसे मैं अपनी शरण में ले लेता हूँ, चाहे वह शत्रु ही क्यों न हो। यही मेरा सबसे बड़ा व्रत है, इसे मैं कैसे त्याग सकता हूँ। ५३ श्रीरामचन्द्रजी की ऐसी आज्ञा होने पर विभीषण को उनके सम्मुख लाया गया। यही हैं, ले आया हूँ, ऐसा कह कर रघुनाथ की शरण में पहुँचाया गया। वहाँ पहुँच कर विभीषण ने श्रीराम के दर्शन प्राप्त किये और पृथ्वी पर लेट कर रघुनाथ को प्रणाम किया। ५४ श्रीरघुनाथजी के दर्शन पाकर विभीषण अत्यन्त प्रसन्न हुआ तथा विभीषण का सम्पूर्ण दुःख क्षण भर में समाप्त हो गया। ईश्वर यही हैं, ऐसा सोच कर विभीषण ने श्रीरघुनाथ की स्तुति की। स्तुति सुनकर सर्वात्मा श्रीरघुनाथ बहुत प्रसन्न हुए। ५५ क्या वरदान माँगते

हे नाथ् ! भक्ति रहोस् सदा हजुरमा कैले नबिग्रोस् मति ।
छोटै मान्छु म भक्ति देखि अरु चीज् यस् सृष्टिमा छन् जति ५६
तस्मात् कर्म विनाश गर्नकन एक् ध्यान् मात्र तिम्रो हवस् ।
येतीले म कृतार्थ छू विषय सुख् सम्पूर्ण दूरै रहोस् ।।
केवल् भक्ती मिल्या प्रसन्न पनि छू बिन्ती गऱ्याथ्या जसै ।
होला लौ तिमिलाइ भक्ति पनि त्यो दीनूभयो वर् तसै ।।५७।।
जस्ले यो तिमिले गऱ्यौ स्तुति जती मेरो यती पाठ् गरोस् ।
तेस्लाई यति वर् म दिन्छु सहजै संसार सागर् तरोस् ।।
येती भक्त विभीषणै सित हुकूम् भो फेरि लङ्कामहाँ ।
राज् दिन्छू अहिले भनीकन लहड् आयो र मन्मा तहाँ ।।५८।
भाई लक्ष्मणलाइ मर्जि पनि भो हे भाइ ! लंकामहाँ
राज् गर्नन् पछि तापनी म अभिषेक् दीनेछु दिन्छू यहाँ ।
ल्याऊ जल् तिमि जाउ सागर भनी हूकूम् भएथ्यो जसै
दौडी सागरमा गई क्षणमहाँ ल्याईदिया जल् तसै ।५९
राजा भै तिमिले रहू अब उपर् लङ्का पुरीको भनी ।
श्रीराम्चन्द्रजिले त्रिभीषण-उपर् दीया अभीषेक् पनि ।

हो, माँगो । मैं तुम्हें दूँगा, कह कर जैसे ही यह आज्ञा हुयी वैसे ही ज उस समय उसके मन में भक्ति थी वही माँगते हुए उसने कहा, हे नाथ ! मेरी भक्ति सदैव आपकी ओर रहे और मेरी मति कभी भी भ्रष्ट न होने पाये । इस संसार में भक्ति के अतिरिक्त अन्य जो भी वस्तुएँ हैं उन्हें मैं तुच्छ समझता हूँ । ५६ कर्मों का विनाश करने के लिए केवल आपका ही ध्यान रहे । बस इतने से ही मैं आपका कृतार्थ हूँ, सम्पूर्ण विषय-सुख दूर ही रहे । केवल भक्ति-प्राप्त से ही मैं प्रसन्न हूँ । जैसे ही उसने ऐसा कहा, वैसे ही प्रभु ने यह कह कर कि 'तुम्हें भक्ति प्राप्त हो' वरदान दिया । ५७ तुमने जितनी मेरी स्तुति की है यदि उतनी स्तुति कोई और भी करता तो उसे भी मैं इतना ही वरदान देता, जिससे वह सहज ही संसार-सागर से तर जाये । भक्त विभीषण से ऐसा कह कर राम ने पुन कहा, 'मेरे मन में विचार आया है कि लंका में तुम्हारा ही राज्याभिषेक करूँगा । ५८ हे भाई ! भले ही तुम बाद में लंका पर राज्य करो, परन्तु मैं तो तुम्हें अभी ही राज्याभिषेक करूँगा ।' ऐसा कह कर श्रीराम ने लक्ष्मण को सागर से जल लाने की आज्ञा दी । वैसे ही लक्ष्मण ने दौड़कर सागर से जल लाकर दिया । ५९ अब तुम लंका के राजा बनकर रहो

लंकाका अधिराज् विभीषण हुँदा सुग्रीव्हरू खुश् भया।
ताहीं सुग्रिवजी विभीषणजिका साम्ने नजीक्मा गया।६०।
खूशी भैकन अङ्कमाल् पनि गरी सुग्रीव भन्छन् तहाँ।
सेवक् हौं सब रामका तर तिमी छौ मुख्य सब्मा यहाँ॥
यस् रावण्कन मार्नलाइ महाराज् ! साहाय देऊ भनी।
सुग्रीव्ले यति बात् गऱ्या जब तहाँ बोल्या विभीषण् पनि।६१।
हे सुग्रीव् महाराज् ! सहाय दिनको क्या शक्ति मेरो यहाँ।
तीन् लोक्का अधिनाथ् परात्म रघुनाथ् आफैं खडा छन् जहाँ॥
दास् हूँ श्री रघुनाथको म गरुँला सेवा त भर्सक् गरी।
यस्तै बात्चित गर्दथ्या दुत तहाँ आये अगाडी सरी॥६२॥
रावण्को शुक दूत त्यो अगि सरी सुग्रीव साम्ने भई।
वाहीं जान त डर् भयो र डरले आकाश बीच्मा रही॥
लाग्यो सुग्रिवलाइ भन्न महाराज् ! सुग्रीव् खराबी भयो।
राम्लक्ष्मण् सितको मिलाप्मसितको वैरी हुन्या मन् गयो॥६३॥
भाई हो मितको जनाउनु असल् सम्झा तँ जा लौ भनी।
हूकूम् रावणको भयो र अहिले याहाँ म आयाँ पनि॥

ऐसा कह कर रघुनाथ ने विभीषण का राज्यभिषेक किया। विभीषण के लंका का अधिराज बन जाने पर, सुग्रीव इत्यादि अत्यन्त प्रसन्न हुए। तत्पश्चात् सुग्रीव विभीषण के सम्मुख गये। ६० अत्यन्त प्रसन्नता से आलिंगन करते हुए सुग्रीव विभीषण से कहने लगे कि हम सब राम के सेवक हैं परन्तु हम सबमें से तुम मुख्य हो। हे महाराज ! अब रावण को मारने में सहयोग दो। सुग्रीव की यह बात सुनकर विभीषण बोले—। ६१ हे सुग्रीव महाराज ! सहयोग देने के लिए मेरे पास शक्ति कहाँ ! मैं तो श्रीरघुनाथ का दास हूँ। अत: मुझसे जो कुछ भी सहयोग हो सकेगा मैं अवश्य करूँगा। जहाँ तीनों लोक के अधिनाथ परमात्मा श्रीराम की शक्ति विराजमान हैं, तो वहाँ उनके सम्मुख किसी अन्य की शक्ति क्या है ? इसी प्रकार की वार्तालाप के बीच ही दूत उनके सम्मुख आ खड़ा हुआ। ६२ रावण का शुकदूत सुग्रीव के सम्मुख आया, लेकिन भय के कारण आकाश के बीच में ही रहकर बोला—' हे सुग्रीव महाराज ! बहुत बुरा हुआ जो राम-लक्ष्मण से मित्रता करके मुझसे बैर करने का विचार मन में आया है। ६३ तेरे भाई (बालि) के मित्र होने के नाते यह कहना उचित समझकर कहता हूँ कि तू यहाँ से चला जा'—ऐसी आज्ञा रावण ने दी है।

तस्मात् रावणको हुकूम् सुन तिमी क्या काम आयौ यहाँ ।
सब् लश्कर् लिइ फर्कि जाउ तिमि फेर् लौ राजधानी महाँ ।।६४।।
लंका यो जितिसक्नु छैन अहिले इन्द्रादिले ता पनि ।
बानर् पो तिमि हौ त क्या गरूँ कुरा यो स्थान् जितौला भनी ।
सीता जो अहिले हऱ्याँ त मइले श्रीरामकी पो हऱ्याँ।
भाई हौ मितका विरोध् नगर यो तिम्रो बिराम् क्या गऱ्याँ ।।
मेरै भाइ समान हौ भनि बहुत् हित् जानि अर्ती दियाँ ।
जो गर्छौ तर फर्कि जाउ म त हित् गर्दै छु गर्दै थियाँ ।।
यस्तो रावणको हुकूम् छ महाराज् येती भनेथ्यो जसै ।
पक्रया वानरले त खैंचिकन खुप् हान्या मुठीले तसै ।।६६।।
वानर्ले बहुतै फजित् जब गऱ्या हे राम् ! मऱ्याँ लौ भनी ।
श्रीराम्चन्द्र सुनून् भनेर शुकले साह्रै करायो पनि ।।
दूत् हूँ मार्न उचित् त होइन प्रभू ! बिन्ती गरेथ्यो जसै ।
कुट्नू छैन भनी हुकूम् हुन गयो सून्यार छोड्यो तसै।।६७।।
वानर् देखि छुट्यो जसै उहि बखत् कूदेर आकाश् गयो ।
क्या उत्तर् दिनु हुन्छ पाउँम जवाफ् जान्छू म भन्दो भयो ।।

उसके बाद रावण की आज्ञा पाकर आप, जिस काम से यहाँ पर आये हैं (उसे त्याग) समस्त सेना को लेकर आप राजधानी को लौट जाइए । ६४ इन्द्रादि के द्वारा भी लंका पर कोई विजय नहीं पा सकता है । आप तो वानर ही हैं इस लिए में यह कैसे कहूँ कि यह स्थान आप जीत ही लेंगे । रावण ने सीताजी का हरण यदि किया है तो राम की पत्नी सीता का ही हरण किया । आप उनके मित्र के भाई हैं, अतः विरोध न करें । आखिर उन्होंने आपका बिगाड़ा ही क्या है ? ६५ मेरे भाई के समान हो, इसलिए तुम्हारे हित की बात कहता हूँ । वैसे तुम जैसा चाहो करो, मैं तो तुम्हारा हित चाहता था और चाह रहा हूँ और महाराजा रावण की यह आज्ञा है कि आप लौट जायें । जैसे ही दूत के मुख से यह बातें सुनीं, वानर ने उसको अपनी ओर खींच कर मुष्टि के द्वारा उस पर प्रहार किया । ६६ वानर ने जब अधिक परेशान किया तो शुक ने श्रीराम को सुनाने के उद्देश्य से कुछ तेज़ आवाज में चिल्लाकर कहा, हे राम ! लो अब मरा । जैसे ही उसने यह विनती कि कि दूत हूँ, अतः दूत को मारना उचित नहीं, उसी क्षण न मारने की आज्ञा हुई और आज्ञा सुनकर तुरन्त ही छोड़ दिया गया । ६७ वानरों से ज्यों ही छुटकारा मिला त्यों ही उछल कर वह

यस्को सुग्रिवले जवाफ् तहिँ दिया मित्‌दाज्यु होस् तापनि ।
वाली झैं गरि मारुँला अधम होस् भन्दीनँ दाज्यू पनि ॥६८॥
श्रीराम्‌चन्द्रजिकी सिता हरि कहाँ उम्केर जालास् उसै ।
यस्तै रावणथ्यैं भन्यास् भनि भन्या सुग्रीवजीले तसै ॥
यस्तो सुग्रिवले जवाफ् जब दिया राम्‌को हुकूम् भो तहाँ ।
पक्रून् वानरले नछोड अहिले क्यै दिन् रहोस् यो यहाँ।६९।
श्रीराम्‌चन्द्रजिको हुकूम् यति हुँदा त्यो शूक बन्धन् पर्‍यो ।
यस् भन्दा अघि आइ शार्दुल फिर्‍यो विस्तार् यसैले गर्‍यो ॥
विस्तार् शार्दुलदेखि राम-बलको सून्यो र रावण् पनि ।
चिन्तामा परि गैगयो अति ठुलो आयेछ लश्कर् भनी॥७०॥
यैं बीच्‌मा रघुनाथ् रिसाउनुभयो आयेन सागर् भनी ।
लाल् लाल् नेत्र गराइ लक्ष्मणजिका साम्ने हुकूम् भो पनि ॥
हे भाई ! तिमि हामिलाइ यसले सामान्य मानिस् गनी ।
भेटैं आज गरेन हेर तिमिले यस्को तमाशा भनी ॥७१॥
सागर् शोषण गर्नलाइ धनु ली वाण् खैंचनूभो जसै ।
कामिन् भूमि पनी भयंकर स्वरूप् राम्‌लाइ देखी तसै ॥

आकाश को गया और कहने लगा, बोलो, क्या उत्तर देना है ? उत्तर मिल जाय तो मैं चला चाऊँ । सुग्रीव ने वहीं पर उत्तर दिया । मित्र हो या भ्राता हो अर्थात् भ्राता होने का विचार नहीं रखूंगा । बालि की तरह मारूँगा फिर चाहे अधम ही क्यों न हो जाये । ६८ सुग्रीव ने बताया कि रावण से कहना कि तुम श्रीरामचन्द्रजी की पत्नी सीता जी को हर करके बचकर कहाँ जाओगे । सुग्रीव ने जब ऐसा जवाब दिया तब श्रीराम ने आज्ञा दी कि वानरों से कहो कि उसे पकड़लें और अभी न छोड़ें तथा कुछ दिन वह यहीं रहले । ६९ श्रीरामचन्द्र जी का यह आदेश होते ही उस शुक को बन्धन में कर लिया गया । इससे पहले ही शार्दूल वापस लौटा और उसीने रावण को सारा विस्तार बताया । शार्दूल के मुख से राम की शक्ति के बारे में विस्तार से सुना, और अति विशाल सेना आयी हुई है यह सुनकर रावण भी अति गम्भीर चिन्ता में पड़ गया । ७० इसी बीच में श्रीरघुनाथ सागर के न आने पर अत्यन्त क्रोधित हुए । लाल-लाल नेत्र करते हुए लक्ष्मण को आदेश दिया और कहा कि हे भाई ! ज़रा इसका तमाशा तो देखो ! इसने आज हमें और तुम्हें एक साधारण मनुष्य समझ कर भेंट तक नहीं की । ७१ जैसे ही सागर का शोषण करने के लिए

चार् कोश् तक् त समुद्रको जल पुग्यो दश् दिक् अँध्यारा भया।
जो जन्तू जलमा थिया ति पनि ता सब् खल्बलाई गया ।।७२।
यस्तो देखि डराइ सागर तहाँ सुन्दर् स्वरूप् एक् धरी।
भेटी खातिरलाइ रत्नहरु बेस् लीयेर झट्पट् गरी।
श्रीराम्चन्द्रजिका गया शरणमा भेंटी अगाडी धरी
पाऊमा परि दण्डवत् पनि गऱ्या सब् शेखिशान् दूर् गरी७३
हात् जोरी स्तुति बिन्ति धीर् गरि गऱ्या हे नाथ् म हूँ जड् यसै
सीतानाथ् प्रभुलाइ जानुँ कसरी क्यै चेत् नपाई उसै।
चेत् ऐले प्रभुले दिंदा हजुरमा आई शरण्मा पऱ्याँ
रस्ता दिन्छु दया रहोस् म छु अनाथ् हात् जोरि बिन्ती गऱ्याँ७४
सागर्का इ वचन् सुनी हुकूम भो साँचो भन्यौ ता पनि
वाण्को थान् त खटाउनाकन पऱ्यो यस्लाइ लौ हान् भनी।
मेरो वाण् त अवश्य काम नगरी फिर्दैन ऐले यसै
ज्यान् राख्छौ त अवश्य देउ बदला टर्दैन यो वाण् कसै ।।७५।
श्रीराम्चन्द्रजिको हुकूम् यति सुनी हात् जोरि बिन्ती गऱ्या
पापी छन् द्रु मकुल्यमा अहिर हुनु उत्तर् दिशामा पऱ्या।

श्रीरघुनाथ ने धनुष-बाण खींचा, वैसे ही रामको देख कर भूमि भयंकर रू धारण करके काँपने लगी। समुद्र का जल चार कोस दूर तक पहुँच गय तथा जो जन्तु जल में निवास करते थे उन सब में भी खलबली म गयी। ७२ यह सब देख कर भयभीत होकर सागर एक सुन्दर स्वरू धारण करके भेंट देने के लिए रत्नादि लेकर श्रीरघुनाथ की शरण में गय और भेंट को रघुनाथ के सामने रखकर उनके चरणों में गिरकर प्रणा किया। ७३ धीरज धर कर तथा हाथ जोड़कर स्तुति की और कहा, नाथ ! मैं तो ऐसे ही जड़ हूँ, मैं सीता-पति प्रभु को कैसे जान सकता हूँ मुझमें तनिक भी चेतना नहीं आयी। प्रभु द्वारा चेतना जाग्रत कर दे से मैं आपकी शरण में आपकी सेवा करने के लिए आया हूँ। अतः आपको रास्ता देता हूँ, मुझ पर दया करने की कृपा करें क्योंकि मैं अना हूँ। ७४ सागर के इस वचन को सुनकर आज्ञा हुई कि रहने दो, य तुम सत्य भी कहते हो तब भी बाण का लक्ष्य तो प्राप्त करना ही है अतः इससे प्रहार करते हैं। मेरे बाण तो अवश्य ही बिना कार्य को पू किये वापस नहीं लौट सकते। यदि प्राण चाहते हो तो बदले में कोई अं प्राण दो लेकिन यह बाण किसी भी रूप में टलने वाला नहीं है। ७

ठाकुर्का यहि वाणले जति ति छन् पापी सबै नाश् गरोस् ।
यस्काम्ले म अनाथ् गरीब् हजुरको दास्को सबै ताप् हरोस्।७६।
यति विनति गर्‍याको सूनि खुप् हर्ष मानी ।
सकल हरिदिनूभो तेहि वाण् जल्दि हानी ।।
रिससित गइ वाण्ले पापिको नाश् गराई ।
सकिकन फिरि ठोक्रैमा पर्‍यो बाण आई ।।७७।।
यै बीच्मा ति समुद्रले चरणमा पस्रेर बिन्ती गर्‍या ।
कीर्ती खुप् रहन्याछ सेतु बलियो हालेर लश्कर् तर्‍या ।।
सेतू बाँधनमा समर्थ नल छन् इन्ले त वर्दान् पनि ।
पायाको छ इ विश्वकर्म सुत हुन् बाँधून् इ सेतू भनी ।।७८।।
येती बिन्ति गरेर पाउ परि फेर् सागर् अदृश्यै भया ।
सागर्को बिनती सुनी नल पनी राम्का हजुर्मा गया ।।
हूकूम् भो नललाइ सेतु तिमिले चाँडै बनाऊ भनी ।
लश्कर् साथ लिया र जल्दि नलले सेतु बनाया पनि ।।७९।।
खुशि भइ नलले सब् वीरको तेज् जगाई ।
वरिपरि जति छन् सब् वृक्ष पर्वत् मगाई ।।

श्रीरघुनाथ का ऐसा आदेश सुनकर हाथ जोड़कर उसने विनती की कि उत्तर दिशा की ओर द्रुमकुल्य नामक नगर में अनेक पापी ग्वाले रहते हैं। प्रभु के इसी बाण द्वारा उन सब पापियों को नाश किया जाय। ऐसा करने के पश्चात् मुझ दीन अनाथ और प्रभु के दास के समस्त संतापों का हरण करें। ७६ उसकी ऐसी विनती सुनकर राम अत्यन्त हर्षित हुए और तुरन्त ही उस बाण से प्रहार करके सकल ताप का हरण किया। बाण सीधा जाकर पापियों का नाश करके पुनः लौटकर तरकस में प्रवेश कर गया। ७७ इसी बीच समुद्र ने चरणों में लेट कर विनती की कि शक्तिशाली पुल को बाँध कर सेना को पार लाने से अत्यन्त कीर्ति होगी। पुल बाँधने में नल समर्थ हैं तथा इन्हें वरदान भी प्राप्त है। यह विश्वकर्मा-सुत हैं, अतः यही पुल को बाँधे। ७८ इस प्रकार से विनती करके सागर पुनः अदृश्य हो गया। सागर की विनती सुनकर नल भी राम के पास गया। नल को शीघ्रता से पुल बाँधने की आज्ञा हुई। अतः वह सेना को साथ लेकर पुल का निर्माण करने लगा। ७९ प्रसन्न होकर नल ने सब वीरों की शक्ति जाग्रत की। चारों ओर जो कुछ भी वृक्ष और पर्वत थे उनको मँगवा कर आगे आकर पुल बाँधने लगा। उसी क्षण रघुनाथ

अगि सरिकन सेतू बाँध्न लग्या जसै ता।
शिव भनि रघुनाथ्ले मूर्ति थाप्या तसै ता ।।८०।।

रामेश्वर् भनि नाम् चलोस् अब उपर् संकल्प याहाँ लिई।
गङ्गाजल् लिन काशि गैकन उ जल् ल्याई नुहाई दिई ।।
फ्याँक्ला कामरु त्यो समुद्र जलमा जस्ले बगोस् यो भनी।
त्यो जन् मुक्त हवस् भनेर रघुनाथ् कोयो हुकूम् भो पनि।।८१।।

बाँध्या सेतु छपन्न कोश पहिले दिन् दोसरा दिन् असी।
कोश चौरासि सक्या तृतीय दिनमा कम्मर् सबैले कसी ।।
कोश् अट्ठासि सक्या चतुर्थ दिनमा बाँकी बयान्नब्बे कोश्।
पाँचौं दीनमहाँ सक्या नजर भो निस्क्येन एक् काहिंदोष्८२

तेही मार्ग गरेर फौज् सब तर्‍यो ढाक्यो त्रिकूट् पर्वतै।
टाप ढाकिदियो रहेन बिचमा खाली भन्याको कतै ।।
भाईलाइ चढाइ अङ्गदमहाँ आफू हनूमान्महाँ।
चढ्नूभो रघुनाथ र जानु पनि भो थीयो जगा ऊँच् जहाँ।८३।

ताहीं गैकन त्यो विचित्र नगरी लंकै नजर् भो जसै।
त्यो रावण् पनि कौसिमा गइ तमास् हेर्थ्यो नजर् भो तसै ।।
यै बिच्मा शुकलाइ छोडिदिनुभो दौडेर त्यो शुक् गयो।
रावण सीत तुरन्त गैकन सबै बिस्तार गर्दो भयो ।।८४।।

ने शिवजी का स्मरण करके मूर्ति-स्थापना की। ८० रामेश्वर के नाम से प्रसिद्धि हो, ऐसा सोचकर वहाँ पर संकल्प किया। काशी से गंगाजल लाकर स्नान किया। जो यह सोचकर समुद्र में कामरू फेंकेगा कि यह बह जाय तो वह प्राणी मुक्त हो जायगा, यह कहते हुए रघुनाथ ने आज्ञा दी। ८१ पहले दिन छप्पन कोस का पुल बाँधा। दूसरे दिन अस्सी कोस तथा तीसरे दिन सबने कमर कस कर चौरासी कोस समाप्त कर दिया। चौथे दिन अट्ठासी कोस और बाक़ी ब्यानबे कोस, पाँचवे दिन समाप्त कर दिया। देखने पर कहीं कोई दोष नहीं दिखायी दिया। ८२ उसी रास्ते से सारी सेना पार हो गयी। त्रिकूट पर्वत और टापू सब ढक दिया। कहीं पर कोई रिक्त स्थान नहीं बचा। भाई को अंगद पर चढ़ा कर स्वयं हनुमान पर सवार होकर चल पड़े, यद्यपि स्थान काफ़ी ऊँचा था। ८३ जैसे ही वहाँ जाकर विचित्र नगरी लंका को देखा तो वहाँ पर रावण भी तमाशा देखते हुए नजर आया। उसी बीच शुक को छोड़ दिया। शुक दौड़ कर गया और वहाँ जाकर रावण को तुरन्त ही सारा

ऐले हे महाराज् ! गयाँ हजुरको हुकूम् हुनाले तहाँ ।
बाँध्या वानरले पऱ्याँ सकसमा आऊँ कसोरी यहाँ ॥
ऐले पो रघुनाथका हुकुमले छोडी दिया जा भनी ।
बाच्याँ बल्ल भनेर हर्षसित खूप् दौडेर आयाँ पनि ॥८५॥
आयो फौज् रघुनाथको अति ठुलो याहीं समुद्रै तरी ।
जीतीसक्नु कठिन् हुन्याछ बलले ऐले लडाइँ गरी ॥
सीताजी लगि रामका शरणमा की आज पर्नू हवस् ।
लड्नै मन् छ भन्या तुरन्त अब लौ संग्राम गर्नू हवस् ॥८६॥
राम्को एक् समचार् म भन्दछु हरिस् सीताजि उन्मत् लिई ।
संग्राम् गर्न अगाडि सर् बखत भो साम्ने मुहूँडा दिई ॥
भोली ध्वस्त गराउँछू अघि खबर् दीयाँ उचित् हो भनी ।
हाँकी भन्छु तँलाइ छोड्दिनँ यसै मैले नमारी पनि ॥८७॥
रावण्लाइ सुनाउनू यति थियो हे शुक् ! सुनाई दियास् ।
तँ जान्छस् त पठाउँ को अरु तहाँ तँले मनैमा लियास् ॥
यस्तो श्रीरघुनाथको हुकुम भो भन्नू समचार् भनी ।
साँचो बिन्ति गरीसक्याँ उ समचार् मैले हजुर्मा पनि ॥८८॥

विस्तार सुनाया । ८४ "हे महाराज ! अभी श्रीमन् के आदेशानुसार मैं वहाँ गया । यदि वानर द्वारा बाँध लिया जाता तो संकट में पड़ जाता और यहाँ न आ पाता । अभी तो रघुनाथ की आज्ञा से छोड़ दिया गया हूँ ताकि मैं चला जाऊँ । अब मैं संकट से बच गया इसी कारण से तीव्रगति से दौड़कर यहाँ आ गया हूँ । ८५ श्रीरघुनाथ अपनी विशाल सेना के साथ समुद्र पार कर यहाँ आ पहुँचे हैं । उनसे युद्ध करके भी विजय पाना कठिन ही है, अतः आज ही सीताजी को श्रीराम की शरण में ले जाकर सौंप देने की कृपा करें । या युद्ध ही करना है तो शीघ्र ही संग्राम प्रारम्भ करने की कृपा करें । ८६ रामचन्द्रजी ने एक संदेश भेजा है उसे मैं बताता हूँ । "कौन सी मति को अपनाकर आपने सीता का हरण किया है। अब समय हो चुका है अतः मुँह समक्ष रख कर संग्राम करने के लिए आगे आओ । कल तुझे मैं ध्वस्त कर डालूँगा, अतः मैं तुझे पहले से सूचना देता हूँ । मैं तुझे ललकार कर कहता हूँ कि यदि तुझको न भी मारा तो ऐसे नहीं छोड़ूँगा । ८७ हे शुक ! केवल इतना ही तुम रावण को जाकर सुना देना । जब तुम ही जा रहे हो तो और किसको भेजूँ ? अतः तुम अपने मन में समझ लेना । ऐसा समाचार कहने के लिए श्रीरघुनाथ का आदेश हुआ है । अतः वह समाचार मैंने श्रीमन् के सम्मुख सत्य वर्णन